उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्गत अधिनियम संख्या 10,1999 द्वारा स्थापित)

MAHI-114 (N)

हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास

खण्ड–1 हिन्दी भाषा का विकास, भौगोलिक क्षेत्र, उपभाषाएँ तथा बोलियाँ

खण्ड–2 हिन्दी भाषा की संरचना और उसकी विशेषताएँ

खण्ड–3 देवनागरी लिपि

शान्तिपुरम् (सेक्टर–एफ), फाफामऊ, प्रयागराज –211021

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

MAHI-114 (N)
हिन्दी भाषा : उद्भव और विकास

अनुक्रमणिका

खण्ड–1 हिन्दी भाषा का विकास, भौगोलिक क्षेत्र, उपभाषाएँ तथा बोलियाँ

इकाई –1 भारोपीय भाषा परिवार : विशेषताएँ एवं वर्गीकरण (शतम् और केण्टुम)

इकाई –2 भारतीय आर्यभाषाओं का क्रमिक विकास

इकाई –3 प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिन्दी

इकाई –4 खड़ी बोली का उद्भव और विकास

इकाई –5 हिन्दी और उसकी प्रमुख बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार

खण्ड–2 हिन्दी भाषा की संरचना और उसकी विशेषताएँ

इकाई –6 हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप

इकाई –7 हिन्दी ध्वनियाँ, शब्द–रचना और प्रकार

इकाई –8 हिन्दी की वाक्य–रचनाए वाक्य परिवर्तन : कारण और दिशाएँ

इकाई –9 हिन्दी की व्याकरणिक कोटियाँ

खण्ड–3 देवनागरी लिपि

इकाई –10 देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्भव और विकास

इकाई –11 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ–गुण–दोष

इकाई –12 हिन्दी भाषा का मानकीकरण और देवनागरी लिपि

इकाई –13 राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी

MAHI-114 (N)
हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास

परामर्श–समिति

प्रोफेसर सीमा सिंह	**कुलपति–अध्यक्ष**
प्रो. सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा–कार्यक्रम संयोजक
श्री विनय कुमार	कुलसचिव–सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो. सत्यपाल तिवारी	**अध्यक्ष**	उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. रुचि बाजपेई	**संयोजक**	उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. चन्दा देवी		इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. अखिलेश द्विवेदी		म.गां. अन्तर्राष्ट्रीय वि.वि., क्षेत्रीय केन्द्र, झूँसी, प्रयागराज
प्रो. सदानन्द शाही		काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पाठ्यक्रम समन्वयक

प्रो. सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा, उ.प्र.रा.ट. मुक्त वि.वि., प्रयागराज
प्रो. रुचि बाजपेई	आचार्य हिन्दी, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज
श्री अनुपम	असि. प्रोफेसर, हिन्दी, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज

सम्पादक

प्रो. दीपक प्रकाश त्यागी	आचार्य, हिन्दी विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर वि.वि., गोरखपुर

लेखक मण्डल

प्रो. राम किशोर शर्मा	**इकाई**
हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज	**1,6,7,8,9**
डॉ. अल्पना सिंह	**2,3,4,5,10,11,12,13**
हिन्दी विभाग, सौभाग्यवती बाई दानी (महिला) स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धामपुर, बिजनौर	

मुद्रित– (माह), (वर्ष)

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – (वर्ष)

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से श्री विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, (माह) (वर्ष), (मुद्रक का नाम व पता)

MAHI-114 (N)

पाठ्यक्रम परिचय

यह पाठ्यक्रम परास्नातक हिन्दी कार्यक्रम के अन्तर्गत चौदहवां प्रश्न पत्र है। इस पाठ्यक्रम में हिंदी भाषा के उद्भव और विकास का अध्ययन किया जाएगा। इसमें कुल तीन खण्ड हैं।

प्रथम खण्ड हिंदी भाषा का विकास, भौगोलिक क्षेत्र, उपभाषाएं तथा बोलियाँ है, जिसके अंतर्गत पाँच इकाईयाँ हैं, जिनमें क्रमशः भारोपीय भाषा परिवारों की विशेषताओं एवं वर्गीकरण, भारतीय आर्यभाषाओं का क्रमिक विकास के साथ ही हिंदी और उसकी प्रमुख बोलियों तथा उसके क्षेत्र विस्तार के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी दी गयी है।

द्वितीय खण्ड हिन्दी भाषा की संरचना और उसकी विशेषताएँ है, जिसके अंतर्गत चार इकाईयाँ हैं, जिनमें क्रमशः हिंदी भाषा के मानक स्वरुप, हिंदी ध्वनियों, शब्द रचना और प्रकार तथा हिंदी की वाक्य रचनाओं वाक्य परिवर्तन : कारण और दिशाओं के साथ ही हिंदी की व्याकरणिक कोटियों का उल्लेख किया गया है।

तृतीय खण्ड देवनागरी लिपि है, जिसके अंतर्गत चार इकाईयाँ हैं, जिसमें क्रमशः देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्भव और विकास तथा देवनागरी लिपि की विशेषताएं एवं उसके गुण–दोषों के साथ–साथ हिंदी भाषा का मानकीरकण और देवनागरी लिपि तथा राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रुप में हिंदी जैसे महत्वपूर्ण बिंदु शामिल है।

अतः इस पाठ्यक्रम में **हिंदी भाषा : उद्भव और विकास** में हिंदी भाषा के विकास, भौगोलिक क्षेत्र, बोलियों तथा हिंदी भाषा की संरचनाओं और उनकी विशेषताओं के साथ ही देवनागरी लिपि को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। फिर भी हम छात्रों से अपेक्षा करते हैं कि वे पाठ्यक्रम से बाहर के महत्वपूर्ण ग्रंथों का भी अध्ययन, अवलोकन करें, जिससे उनके ज्ञान में विस्तार हो सके। इसी उद्देश्य से प्रत्येक खण्ड के अंत में कुछ प्रमुख संदर्भ ग्रंथों की सूची दी गई है।

प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

MAHI-114 (N)
हिन्दी भाषा : उद्भव और विकास

खंड–3

देवनागरी लिपि

इकाई –10
देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्भव और विकास

इकाई –11
देवनागरी लिपि की विशेषताएँ–गुण–दोष

इकाई –12
हिन्दी भाषा का मानकीकरण और देवनागरी लिपि

इकाई –13
राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी

खण्ड–3 परिचय

परास्नातक हिंदी कार्यक्रम के अन्तर्गत हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास [MAHI-114(N)] पाठ्यक्रम का यह तीसरा खण्ड है, जिसका शीर्षक देवनागरी लिपि है। इस खण्ड के अंतर्गत कुल चार इकाइयाँ (इकाई 10 से इकाई 13 तक) है।

इकाई–10 में देवनागरी लिपि के नामकरण एवं उसके उद्‌भव और विकास का उल्लेख है।

इकाई–11 में देवनागरी लिपि की विशेषताओं के साथ उसके गुणों एवं दोषों का वर्णन है।

इकाई–12 के अंतर्गत हिंदी भाषा के मानकीकरण और देवनागरी लिपि की विस्तृत जानकारी है।

इकाई–13 में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रुप में हिंदी से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु दिये गये हैं।

अतः इन समस्त इकाईयों के माध्यम से आप देवनागरी लिपि के स्वरुप, देवनागरी लिपि की विशेषताओं उसके गुण–दोष के साथ ही राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रुप में हिंदी के बारे में समझ सकेंगे।

प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

MAHI-114 (N)
हिन्दी भाषा : उद्भव और विकास

खंड–1

हिन्दी भाषा का विकास, भौगोलिक क्षेत्र, उपभाषाएँ तथा बोलियाँ

इकाई –1
भारोपीय भाषा परिवार: विशेषताएँ एवं वर्गीकरण (शतम् और केण्टुम)

इकाई –2
भारतीय आर्यभाषाओं का क्रमिक विकास

इकाई –3
प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिन्दी

इकाई –4
खड़ी बोली का उद्भव और विकास

इकाई –5
हिन्दी और उसकी प्रमुख बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार

खण्ड–1 परिचय

परास्नातक हिंदी कार्यक्रम के अन्तर्गत हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास [MAHI-114(N)] पाठ्‌यक्रम का यह पहला खण्ड है, जिसका शीर्षक हिंदी भाषा का विकास, भौगोलिक क्षेत्र, उपभाषाए तथा बोलियाँ है। इस खण्ड के अंतर्गत कुल पाँच इकाइयाँ हैं जो इकाई 1 से इकाई 5 तक) है।

इकाई–1 के अन्तर्गत भारोपीय भाषा परिवार तथा उसकी विशेषताओं एवं वर्गीकरण की विस्तृत जानकारी प्रस्तुत है।

इकाई–2 में भारतीय आर्यभाषाओं के क्रमिक विकास का उल्लेख है।

इकाई–3 के अन्तर्गत प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्‌ट और पुरानी हिंन्दी के विषय में विस्तृत जानकारी है।

इकाई–4 में खड़ी बोली के उद्‌भव और विकास को प्रस्तुत किया गया है।

इकाई–5 के अंतर्गत हिन्दी और उसकी प्रमुख बोलियों तथा उसके क्षेत्र विस्तार पर व्यापक चर्चा की गई है।

अतः इन समस्त इकाईयों के माध्यम से आप हिंदी भाषा के विकास क्रम, भौगोलिक क्षेत्र उपभाषाओं तथा बोलियों आदि के बारे में समझ सकेंगे।

इकाई 1 : भारोपीय भाषा–परिवार, विशेषताएँ एवं वर्गीकरण (सतम् और केण्टुम)

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 भारोपीय भाषा–परिवार : विशेषताएँ

1.3 भारोपीय परिवार का वर्गीकरण

1.3.1 सतम् वर्ग

(क) अल्बानी

(ख) बाल्टिक

(ग) स्लावी

(घ) आरमीनी

(ङ) भारत–ईरानी

(i) भारतीय आर्यभाषा

(ii) ईरानी

(iii) दरदी

1.3.3 केन्तुम् वर्ग

(क) केल्टिक

(ख) जर्मनिक

(ग) लैटिन

(घ) ग्रीक

(ङ) तोखारी

1.4 सारांश

1.5 प्रश्नावली

1.0 प्रस्तावना–

पिछली इकाई में विश्व के भाषा–परिवारों में अन्तर्गत भारोपीय परिवार का निर्देश किया गया है। चूँकि यह परिवार विश्व का सबसे बड़ा और सबसे महत्त्वपूर्ण है इसलिए इसके अन्तर्गत आने वाली भाषाओं का कुछ अधिक विस्तार से परिचय प्राप्त करने की आवश्यकता है। विश्व के विकसित एवं सभ्य देशों की अधिकांश भाषाएँ इसी परिवार की हैं।

1.1 उद्देश्य–

यातायात के त्वरित साधनों, त्वरित सूचना तंत्र के कारण वैश्विक सभ्यता के निर्माण का दौर चल रहा है। भाषा–परिवारों के अध्ययन से आपको इस तथ्य की जानकारी होगी मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान तक पैदल या घोड़े आदि साधनों से बहुत दूर की यात्रा करके सुविधा जनक स्थान पर बस गया। भारोपीय परिवार के मूल वक्ता किसी एक स्थान में रहे होंगे, वह स्थान विस्तार की दृष्टि अधिक या कम जो भी रहा हो। विद्वानों ने भारत, मध्य एशिया, कैस्पियन सागर आदि अनेक स्थानों पर उनके आरंभ में होने का अनुमान किया है। हिन्दी, अंग्रेजी, रूसी, जर्मन, फ्रेंच, इरानी, फारसी आदि एक ही भारोपीय परिवार से सम्बद्ध हैं। नए विश्व के निर्माण में भाषाई एकता की समझ निश्चित ही सहायक होगी। इस इकाई में आपको भारोपीय परिवार की मुख्य विशेषताएँ, उसके अन्तर्गत परिवारों की जानकारी मिल सकेगी।

1.2 भारोपीय भाषा–परिवार–विशेषताएँ– इस परिवार का विस्तार भारत तथा यूरोपीय देशों में है, इसलिए इसका नाम भारोपीय रखा गया है। यह विश्व का सबसे बड़ा परिवार है। विश्व के सभ्य देशों की अधिकांश भाषाएँ इसी के अन्तर्गत आती हैं। इस परिवार के मूल प्रयोक्ता किस स्थान से सम्बन्धित थे, इसके विषय में अनेक मत हैं। एल.डी. कल्ला इनका मूल स्थान कश्मीर या हिमालय मानते हैं। डॉ. गंगानाथ झा ब्रह्मर्षि देश को इनका मूल स्थान मानते हैं। डी.एस. त्रिवेदी के अनुसार भारोपीय के मूल निवासी देविका नदी की घाटी में थे। कुछ लोग मूल स्थान (मुलतान) को इस व्युत्पत्ति के आधार पर इस परिवार के मूल वक्ताओं का आरम्भिक क्षेत्र मानते हैं। भारत में मूल स्थान मानने के विरोध में कई तर्क दिए गए हैं–

1. इस परिवार के प्रयोक्ता ज्यादातर यूरोप तथा एसिया के संधि–स्थल पर हैं अतः भारत से जाकर वहाँ बसने की संभावना कम है।

2. भारत में भारोपीय परिवार के अलावा द्रविड़ आदि परिवारों की भाषाएँ भी हैं। सिन्धु घाटी सभ्यता संस्कृत परम्परा की न होकर द्रविड़ से सम्बन्धित मानी जाती है। पहले भारत में द्रविड़ों का निवास था, आर्यों का आगमन बाहर से हुआ है।

मैक्समूलर के अनुसार आर्यों का स्थान पामीर का प्लेटो तथा उसके पास मध्य एशिया था। डॉ. लैथम स्कैण्डेविया, डॉ. सर्जी एशिया माइनर के पठार, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक उत्तरी ध्रुव के पास, प्रो. श्रेडर दक्षिणी रूस में वोल्गा नदी के मुहाने और कैस्पियन सागर के उत्तरी किनारे के पास भारोपीय भाषा का मूल स्थान मानते हैं। प्रत्येक भाषा क्षेत्र का विद्वान् अपने–अपने तर्कों से अपने ही देश को यह श्रेय देना चाहता है कि मूल भाषा–भाषी का सम्बन्ध उसी के देश से है। भाषा की प्राचीनता की दृष्टि से संस्कृत में मूल भारोपीय की प्रकृति अधिक सुरक्षित है। भारत में भाषा सम्बन्धी जितना उच्च स्तरीय कार्य हुआ है उसके आधार पर यह कहना असंगत न होगा कि भारोपीय परिवार का मूल स्थान भारत ही है। विद्वानों ने भारोपीय की कुछ ध्वनिगत एवं व्याकरणगत विशेषताओं का उल्लेख किया है यद्यपि उनके निष्कर्षों में अन्तर भी मिलता है।

भारोपीय मूल भाषा में निम्नलिखित स्वर थे–

(1) अति ह्रस्व अ

(2) ह्रस्व–अ, इ, उ, ए, ओ सभी मूल स्वर

(3) दीर्घ आ, ई, ऊ, ए, ओ

संयुक्त स्वरों की संख्या छत्तीस अनुमानित है। इ, ऋ, लृ, उ, ऩ्, म़् के मेल से इनकी निर्मिति होती थी। जैसे–अइ, अउ, अऋ, अलृ, अऩ्, अम़्, एइ, एउ, एऋ, एलृ, एऩ्, एम़्, ओइ, ओउ, ओऋ, आलृ, ओऩ्, ओम़्

अर्ध–स्वर–य, व,

व्यंजन–

क वर्ग– क् ख, ग्, घ

क् ख् ग् घ् क्

क्व ख्व् ग्व् घ्व्

त वर्ग–त्, थ, द्, ध्

प वर्ग–प् फ, ब्, भ्, म्

ऊष्म–स् (ज़्)

अन्तस्थ व्यंजन–य्, र्, ल्, व् न् म्

1. संरचना की दृष्टि से मूल भारोपीय भाषा श्लिष्ट थी। लैटिन, ग्रीक, जर्मन, संस्कृत आदि के तुलनात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला गया है।

2. प्रत्ययों के योग से नए–नए अर्थ देने वाले शब्द बनाए जाते थे। संस्कृत आदि में वही परम्परा मिलती है।

3. शब्द की निर्मिति धातुओं (मूल क्रिया) से होती थी जैसे–पठ् से पाठ् पाठक, पठनीय, पठितव्य आदि।

4. आरंभ में परसर्ग पूर्ण अर्थ के सूचक थे। वैदिक भाषा में उपसर्गों का प्रयोग शब्द से दूर भी होता था, इसी से यह अनुमान किया जा सकता है।

भारोपीय भाषा में तीन लिंग–पुंल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग थे। तीन वचन–एक वचन, द्विवचन तथा बहुवचन का विधान था। द्विवचन युग्म में पाए जाने वाली वस्तुओं या अंगों के लिए प्रमुख से प्रयुक्त होता रहा होगा।

पुरुष तीन थे–प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष पुरुष। ये मुख्य रूप से सर्वनाम से सम्बन्धित थे।

क्रिया के फल–भोक्ता के आधार पर आत्मनेपद तथा परस्मै पद दो भेद किये गये हैं। क्रिया की रचना में पूर्णतः और अपूर्णतः की विशेष चिन्ता रहती थी भूत, भविष्य एवं वर्तमान तीन कालों की परिकल्पना थी। भूतकाल के अनेक भेद प्रायः नहीं थे। भारोपीय मूलभाषा में समास के प्रयोग होते थे। लेकिन ज्यादातर समास दो पदों के होते थे। लम्बे समास बनाने की प्रवृत्ति परवर्ती भाषाओं की है। भाषा संगीतात्मक थी, उच्चारण में उदात्त और अनुदात्त स्वरों का भेद था।

1.3 भारोपीय परिवार का वर्गीकरण–

भारोपीय परिवार को दो वर्गों में बाँटा गया है।

1. सतम्

2. केन्तुम्

इस तरह के विभाजन का सुझाव सर्वप्रथम 1870 में अस्कोली महोदय ने रखा था उनका विचार था कि भारोपीय मूल भाषा की कन्ठ स्थानीय ध्वनियाँ कुछ भाषाओं में संघर्षी या स्पर्श संघर्षी हो गई।

सतम् और केन्तुम क्रमशः अवेस्ता और लैटिन के शब्द हैं। इन्हीं के आधार पर भाषा के दो वर्ग निर्दिष्ट किये गये हैं। दोनों वर्गों की भाषाओं में प्रयुक्त सौ की गिनती के लिए प्रयुक्त शब्दों को देख सकते हैं।

सतम् वर्ग	केन्तुम वर्ग
सतम्–अवेस्ता	केतुम्–लैटिन
सद–फारसी	हेक्तोन–ग्रीक
शतम्–संस्कृत	केन्तो–इटैलियन
सौ–हिन्दी	केन्त–फ्रेंच

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि स ध्वनि दूसरे वर्ग की भाषाओं में क में परिणत हो जाती है।

1.3.1 सतम् वर्ग–

इस वर्ग के अन्तर्गत अल्बानी, बाल्टिक, स्लावी, आर्मियन, भारत ईरानी शाखायें आती है।

(क) अल्बानी–

इस भाषा में ध्वनियों और पदों की रचना में इतना अधिक अन्तर आ गया है कि यह परिवार भारोपीय परिवार से बहुत कुछ अलग–थलग हो गया। अल्बेनी इलीरी नाम की एक बड़ी शाखा के अवशेष के रूप में सुरक्षित है। इस शाखा की कुछ भाषायें यूनान में बोली जाती है। इसमें साहित्यिक कृतियों का अभाव है। थोड़ा बहुत लोक साहित्य मिलता है।

(ब) बाल्टिक–

बाल्टिक समुद्र के तट पर स्थिति देशों में यह भाषा बोली जाती है। इसके अन्तर्गत लिथुवानिया और लातविया दो लघु देशों के भाषायें समाहित हैं। इन भाषाओं में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। इनकी भौगोलिक संरचना ऐसी है कि इनका बाहरी दुनिया से सम्पर्क बहुत कम है। इन भाषाओं में साहित्यिक परम्पराओं का प्रायः अभाव है। सोलहवीं शती के बाद का कुछ साहित्य उपलब्ध होता है।

(ग) स्लावी–

इस वर्ग की तीन उप शाखाएँ हैं–पूर्वी शाखा, पश्चिमी शाखा, दक्षिणी शाखा। पूर्वी स्लावी को रूसी कहते हैं। इसका प्राविधिक साहित्य बहुत समृद्धि है, रूसी में तुर्गनेव, दास्तोवस्की, चेखव, टोल्सटाय, गोर्की आदि विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार हो चुके हैं। पश्चिमी स्लावी में तीन भाषाएँ आती हैं पोलीचेक, स्लोवाक् पोलिस पोलैण्ड की भाषा हैं चेक चेकोस्लाविया की और स्लोवेनियम युगोस्लाविया भाषा है। दक्षिणी स्लावी के अन्तर्गत बुल्गारी, सर्वोक्रोटी, स्लोवेनी आती हैं।

इस शाखा की भाषाए श्लिष्ट योगात्मक है शब्द रूप तथा धातु रूप संस्कृत के समान होते हैं।

(घ) आरमीनी–

आरमीनी भाषा आरमीनिया में बोली जाती है, यह भाषा क्षेत्र ईरान से मिला हुआ है अतः ईरानी का इस पर अत्यधिक प्रभाव है। आरमीनी पर भारोपीय से इतर भाषाओं का भी प्रभाव है। धार्मिक कार्यों में प्राचीन आरमीनी का प्रयोग अब भी चलता है।

(ङ) भारत–ईरानी शाखाएँ–इस शाखा में दो वर्ग हैं–(i) भारतीय आर्य भाषा, (ii) ईरानी भाषा।

(i) भारतीय–आर्य भाषा–इसका प्राचीनतम साक्ष्य ऋग्वेद में मिलता है। भाषा में स्वाभाविक परिवर्तन तथा अनार्य भाषाओं के प्रभाव के कारण इसमें ध्वनिगत तथा व्याकरणगत उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। इसको कालक्रम की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा गया है।

(1) प्राचीन आर्य भाषा

(2) मध्यकालीन आर्य भाषा

(3) आधुनिक आर्य भाषा

(4) प्राचीन आर्यभाषा का समय 1500 या 2000 ई.पू. से लेकर 500 ई.पू. माना गया है। विद्वानों ने माना है कि भारत–ईरानी शाखा के आर्य 1500 या 2000 ईसा पूर्व मे भारत में प्रवेश कर गए थे। धीरे–धीरे इनका विस्तार भारत के विविध क्षेत्रों में हुआ। इनकी भाषा में बोलीगत भेद थे। वैदिक भाषा में इसके साक्ष्य मिल जाते हैं। ऋग्वेद से लेकर उपनिषदों के रचनाकाल तथा जो भाषा परिवर्तन हुए हैं उनके भी प्रमाण इन कृतियों की भाषा के अनुशीलन से स्पष्ट हो जाते हैं। प्राचीन काल में दो भाषाएँ प्रमुख थीं–वैदिक एवं संस्कृत। वैदिक भाषा को छान्दस भी कहा गया है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा में कुल बावन ध्वनियाँ थीं जिनमें तेरह स्वर और 39 व्यंजन थे। स्वरों में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, Ç, ऌ मूल स्वर थे ए औ, ऐ, औ संयुक्त स्वर थे। 27 स्पर्श व्यंजन थे जिन्हें 5 वर्गों में विभक्त किया गया था। कंठ, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य् ओष्ठ्य आदि। इनके अलावा य, र, ल, व चार अन्तस्थ व्यंजन थे। स, श, ष ऊष्म व्यंजन एक महाप्राण ह अनुनासिक अघोष ऊष्म विसर्जनीय जिह्वामूलीय ख़ उपदमानीय फ़ आदि। वैदिक में अ का उच्चारण विवृत था संस्कृत में संवृत हो गया। अय, अव को वैदिक में आय, आव तथा संस्कृत में अइ, अउ उच्चरित किया जाता था। स्वर और व्यंजन की सन्धि होने पर ध्वनियों में परिवर्तन का विधान था। नाम शब्दों के विभक्तिक रूप तीन लिंगों, तीन वचनों में आठ कारकों में बनाये जाते थे। क्रिया में भूतकाल, वर्तमान काल, भविष्यकाल के अवान्तर भेद भी मौजूद थे। भूतकाल में परोक्ष, अद्यनतन, सामान्य तीन भेद थे। इसी तरह भविष्यत में असम्पन्न एवं सामान्य का भेद किया जाता था। वैदिक भाषा में भूतकाल के रूपों से ही भविष्य की सूचना दी जाती थी। क्रिया रूपों के दस गुण थे उनमें लकार तथा पुरुष एवं वचन भेद मौजूद थे। क्रिया में प्रत्ययों के योग से नये–नये शब्दों का निर्माण किया जाता था। 500 ई.पू. के बाद वैदिककालीन अन्य बोलियाँ महत्वपूर्ण हो गयीं। पाली, प्राकृत, अपभ्रंश आदि का महत्व 1000 ई. तक विशेष रूप से था। इन भाषाओं में प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के संयुक्त व्यंजनों के स्थान पर अधिकांशतः द्वित्व व्यंजन हो गये। रूपों में सरलीकरण किया गया। कारक रचना निरन्तर कम हुई। पालि, प्राकृत में छः कारक और अपभ्रंश में तीन कारकों में रूप रचनायें होती थीं। द्वि वचन का लोप कर दिया गया और धीरे–धीरे नपुंसक लिंग को भी पुंल्लिंग और स्त्रीलिंग में समाहित किया गया। क्रिया के लकारों में एकीकरण और सामान्यीकरण हुआ। प्राकृतों में कृदन्तीय रूपों के स्थान पर काल रचना तथा भाव रचना में कृदन्ती रूपों को अपनाया जाने लगा। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के अनेक क्षेत्रीय भेद महत्त्वपूर्ण हो गये थे। क्षेत्रीय भेदों के आधार पर ही महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी आदि अनेक नाम मिलते हैं। एक हजार ईसवीं के बाद इन्हीं प्राकृतों से आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ। आधुनिक आर्यभाषाओं में प्रमुख है सिन्धी, लहंदा, पंजाबी, गुजराती, मराठी, बंगला, असमी, उड़िया, नेपाली आदि।

(ii) ईरानी शाखा–

ईरानी शब्द की व्युत्पत्ति आर्याणाम से मानी जाती है। भारत और ईरान की प्राचीन भाषाओं में पर्याप्त समानता पायी जाती है। पारसियों के धर्मग्रन्थ अवेस्ता और ऋग्वेद की भाषा की तुलना करने से दोनों का साम्य स्पष्ट होता है। भारोपीय भाषा के अ, ए, औ स्वरों के स्थान पर अ, आ पाया जाता है। जैसे–

भारत–यूरोपीय	ग्रीक	लातिन	संस्कृत	अवेस्ता
नेभोस	नेफ्रोस	नेबुला	नभः	नबो
ओस्थ	ओस्तेओन	ओस	अस्थि	अस्त
रोथोस		रोता	रथः	रथो

दोनों शाखाओं में र ल का परस्पर बदलाव हुआ है। दोनों शाखाओं में स्वरों की मात्राओं में कही–कहीं अन्तर मिलता है जैसे संस्कृत की ह्रस्व ध्वनि ईरानी में कही कही दीर्घ हो गयी है जैसे अथ से अथा। ए के स्थान पर ऐ, ओ के स्थान औ परिवर्तन भी दिखते हैं। अवेस्ता में स्वरागम की प्रवृत्ति अधिक है। ईरानी में व्यंजनों की संख्या संस्कृत से कुछ कम है। महा तालव्य ध्वनियों में केवल च और ज हैं, ट वर्ग का बिल्कुल अभाव है।

सम्भव है कि संस्कृत में ट वर्ग का आगमन या महत्ता का प्रतिपादन द्रविड आदि के द्वारा हुआ है। ईरानी में संस्कृत की घ, ध, भ ध्वनियाँ ग, द, ब रूप में आती है जैसे जंघा से जंगा, धर्म से गर्म, संस्कृत ह के स्थान पर अवेस्ता में ज हुआ है जैसे हस्त से जस्त, अवेस्ता में ल का अभाव है। संस्कृत की कारक रचना पंचमी विभक्ति की एक वचन का आत, अवेस्ता में केवल अकारान्त शब्दों में ही नहीं सभी शब्दों में प्रयुक्त होता है, सर्वनामों में उच्चारण का ही अधिक भेद है। ईरानी के प्राचीन मध्ययुगीन तथा आधुनिक भेद है। प्राचीन ईरानी में दो भाषायें प्रमुख थीं। पश्चिमी क्षेत्र की प्राचीन फ़ारसी तथा पूर्वी क्षेत्र की अवेस्ता। विदेशी आक्रमणों के कारण प्राचीन ईरानी का साहित्य लुप्त हो गया। मध्यकालीन ईरानी में सबसे महत्व पूर्ण भाषा है पहलवी, पहलवी में सामी ध्वनियों का अत्यधिक प्रभाव है। इसीलिए आर्यभाषा से इसकी भिन्नता अधिक दिखाई पड़ती है। आधुनिक युग में फ़ारसी प्रमुख भाषा है जिसका दूसरा नाम ईरानी भी है, यह ईरान की राष्ट्र भाषा है। ईरानी में अरबी शब्दों का अधिकाधिक समावेश हो गया है। इसकी लिपि अरबी है। कुरदिश, बरगिस्ता, माजन्दरानी, समनानी, दारी, काशानी, नियानी आदि इसकी बोलियाँ हैं। पूर्वी ईरानी से पश्तो बलोची तथा पामीरी विकसित हुई है।

(iii) दरदी–यह भारत–ईरानी शाखा की उपशाखा है। इसका क्षेत्र पंजाब के पश्चिम–उत्तर में पड़ता है। काफीरी, खोतारी इसकी दो उल्लेखनीय भाषाएँ हैं।

1.3.3 केन्तुम वर्ग–इस वर्ग मे केल्टिक, जर्मनिक, लैटिन, ग्रीक, तोखारी आदि शाखाएँ हैं।

(क) केल्टिक–करीब दो हजार वर्ष पहले इस शाखा की भाषाएँ यूरोप के बड़े भू–भाग जैसे ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन, उत्तरी इटली, एशिया माइनर तक विस्तृत थीं। कालान्तर में रोमनों के सत्ता–विस्तार के फलस्वरूप केल्टिक भाषा का ह्रास शुरू हुआ। सम्प्रति इस शाखा के भाषा–भाषियों की संख्या बहुत सीमित हो गयी है। उत्तर–पश्चिमी फ्रांस, ग्रेट–ब्रिटेन, स्कॉट लैंड, आयरलैंड, बेल्स और कॉर्नवाल में इसके प्रयोक्ता हैं।

केल्टिक शाखा में आइरिश सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाषा है। आइरिश के विकास में अंग्रेजी ने बाधा डाली है लेकिन यहाँ के निवासियों में अपनी भाषा के प्रति प्रेम है इसलिए वे इसका विकास कर रहे हैं। आइरिश की ही एक शाखा स्कॉच गेलिक है। मांक्स, वेल्श, कार्निश आदि भाषाएँ अन्तिम साँस ले रही हैं।

विशेषताएँ–केल्टिक भाषाएँ कठिन एवं अस्पष्ट हैं। वाक्य रचना की जटिलता के आधार पर विद्वानों ने यह मत दिया कि इस पर गैर भारोपीय परिवार का प्रभाव आ गया है। इस परिवार की कुछ भाषाओं में भारोपीय की प ध्वनि क में बदल जाती है।

(ख) जर्मनिक–भारोपीय परिवार में केन्तुम वर्ग की यह प्रमुख शाखा है। इसके अन्तर्गत आइसलैंडी, डेन्मार्क की डेनी, नार्वे की नारबेई, स्वीडेन की स्वेडिश, इंग्लैंड की अंग्रेजी, जर्मन की जर्मनी, हालैंड की डच बेल्जियम की फ्लेमी आदि भाषाएँ आती हैं। अंग्रेजी इस समय विश्व भाषा बन गयी है। जर्मन भाषा का दर्शन और विज्ञान के क्षेत्र में विशेष वर्चस्व है।

विशेषताएँ–इन भाषाओं का प्राचीन रूप योगात्मक था परन्तु आधुनिक रूप अयोगात्मक हो गया है। योगात्मक का तात्पर्य है कि सम्बन्ध और अर्थसूचक शब्दों को एक में मिला दिया जाता था जैसे संस्कृत के शब्द रूप बनते हैं ठीक उसी तरह किन्तु अब स्वतंत्र परसर्गों का प्रयोग होता है।

भारोपीय परिवार की कुछ ध्वनियाँ जर्मनिक परिवार में बदल गयी हैं जिनका विवेचन ग्रिम ने किया है।

(ग) लैटिन–इसके अन्तर्गत इतालवी, रुमानियन, फ्रांसीसी, स्पेनिस, पुर्तगाली आदि भाषाएँ आती हैं।

(घ) ग्रीक (हेलनिक)–इस शाखा की मुख्य भाषा है ग्रीक इसका प्राचीन साहित्य बहुत समृद्ध है। मूल भारोपीय परिवार की भाषा के स्वर इस परिवार में अधिक सुरक्षित है। ग्रीक व्याकरण संस्कृत के समान है। इसमें कारक केवल चार होते हैं कर्त्ता, कर्म, सम्प्रदान, सम्बन्ध। इस शाखा की भाषाएँ यूनान, ईजियन द्वीप समूह, अल्बानिया, बुल्गारिया, तुर्की का कुछ भाग, साइप्रस तथा क्रीट द्वीप में विस्तृत हैं।

(ङ) तोखारी–यह भाषा क्षेत्र मध्य एशिया का तुर्फान प्रदेश है। यह भाषा संस्कृत के काफी निकट थी। सातवीं शताब्दी में इस भाषा का लोप हो गया।

1.4 सारांश–भारोपीय परिवार विश्व का सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण भाषा परिवार है। भारत और यूरोप के अधिकांश देशों में इस परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। सौ की गिनती के आधार पर इस परिवार के दो वर्ग किये गये है। सतम् और केन्तुम। कुछ भाषाओं में स के स्थान पर क मिलता है। इसी को विभाजन का आधार माना गया। सतम् वर्ग में भारत ईरानी, आरमीनियम स्लाव, बालटिक, ईरियन आदि भाषाएँ आती हैं। केन्तुम के अन्तर्गत केल्टिक जर्मनिक, लैटिन, ग्रीक तोखारी आदि परिवार सम्मिलित हैं।

1.5 प्रश्नावली

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मूलभारोपीय परिवार के आदिम वक्ताओं का स्थान कहाँ था।
2. केन्तुम् वर्ग की किस एक शाखा का परिचय दीजिए।
3. ईरानी भाषा–परिवार की विशेषताएँ लिखिए।
4. जर्मनी परिवार की तीन विशेषताएँ लिखिए।
5. सतम् वर्ग के चार भाषा–परिवारों का नामोल्लेख कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारोपीय परिवार की मूल भाषा की विशेषताएँ लिखिए।
2. भारतीय आर्यभाषा परिवार का परिचय देते हुए उसके विकासमान अवस्था का विवेचन कीजिए।
3. सतम् वर्ग की भाषिक शाखाओं पर प्रकाश डालिए।

4. केन्तुम वर्ग की प्रमुख शाखाओं का विवेचन कीजिए।
5. ईरानी भाषा परिवार का परिचय दीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'पश्तो' भाषा का विकास किससे हुआ है–
   (क) पूर्वी ईरानी (ख) पश्चिमी ईरानी
   (ग) दरदी (घ) केल्टिक
2. 'पालि' भारतीय आर्यभाषा के किस काल की भाषा है–
   (क) प्राचीन (ख) मध्यकालीन
   (ग) आधुनिक (घ) उत्तर आधुनिक
3. 'केन्तुम्' का अर्थ है–
   (क) सौ (ख) पाँच सौ
   (ग) एक हजार (घ) केन्द्र
4. 'ईरानी' इस समय किस लिपि में लिखी जाती है–
   (क) अरबी (ख) देवनागरी
   (ग) रोमन (घ) ब्राह्मी
5. मैक्समूलर आर्यों का मूल स्थान कहाँ मानते हैं–
   (क) दक्षिणी रूस (ख) भारत
   (ग) पामीर का पठार तथा उसके पास मध्य एशिया
   (घ) देविका नदी

उत्तर–1. (क), 2. (ख), 3. (क), 4. (क), 5. (ग)

इकाई– 17 भारतीय आर्यभाषाओं का क्रमिक विकास

इकाई की रूपरेखा–

17.0 प्रस्तावना

17.1 उद्देश्य

17.2 भारतीय आर्य भाषाओं का परिचय

17.3 भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

17.3.1– प्राचीन भारतीय आर्य भाषा

17.3.2– मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा

17.3.2.1 पालि

17.3.2.2 प्राकृत

17.3.2.3 अपभ्रंश

17.3.3– आधुनिक भारतीय आर्य भाषा

17.4 भारतीय आर्य भाषाओं की विशेषताएं

17.5 सारांश

17.6 शब्दावली

17.7 सन्दर्भ ग्रन्थ–

17.8 प्रश्नावली–

17.8.1– बहुविकल्पीय प्रश्न

17.8.2– लघु उत्तरीय प्रश्न

17.8.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

17.1– प्रस्तावना–

'भारतीय आर्य भाषाओं का क्रमिक विकास' नामक इस इकाई में भारत की आदिभाषा संस्कृत से लेकर वर्तमान हिंदी तक की विकास यात्रा वर्णन किया गया है । भारत में दो परिवार की भाषाएँ बोली जाती है । आर्य भाषा परिवार और द्रविड़ परिवार । द्रविड़ परिवार की भाषाएँ– तमिल, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम हैं जो भारत के दक्षिण में बोली जाती है । अन्य क्षेत्रों में आर्य भाषा प्रयुक्त होती है । ऐसा माना जाता है कि भाषा का प्रारम्भ संस्कृत से हुआ । जब वैयाकरणों ने संस्कृत को व्याकरण के नियमों में बाँध कर इतना अधिक जटिल बना दिया कि वह आम जनता की समझ से दूर हो गई तब सामान्य जन ने जिस भाषा का कार्य व्यवहार किया, उसे लौकिक संस्कृत कहा गया ।

जिस प्रकार वैदिक साहित्य में वेद, उपनिषद आदि आते है, उसी प्रकार लौकिक संस्कृत में रामायण, महाभारत की गणना होती है । लौकिक संस्कृत में काव्य, नाटक, गद्य, कथा चम्पू आदि की रचना हुयी । जब यह भाषा अपने विकास के चरम पर पहुँच गई तब सामान्य जन में पालि भाषा का विकास हुआ । वही पालि भाषा में बुद्ध ने अपने उपदेश दिए जो त्रिपिटक में संकलित है । इस त्रिपिटक और बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार देश भर में हुआ । इसी क्रम में उत्तरोत्तर प्राकृत, अपभ्रंश और अवहट्ट का विकास हुआ । भाषा के विकास की इस प्रक्रिया को इस इकाई में विस्तार से प्रकाश डाला गया है ।

17.1 उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को भारतीय आर्य भाषाओं के क्रमिक विकास से परिचित कराना है । सम्पूर्ण विश्व में लगभग तीन हजार भाषाएँ बोली जाती है जिन्हें विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है । भारत से लेकर पूरे यूरोप तक बोले जाने के कारण इस परिवार को 'भारोपीय परिवार' कहते हैं । हिंदी भारोपीय परिवार की भाषा है । छात्रों को यह ज्ञात है हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है, इस इकाई

के द्वारा छात्रों को प्राचीनकाल से अब तक होने वाली भाषा की विकास यात्रा के बारे में बताया जाएगा । आज हम जिस भाषा का कार्य–व्यवहार कर रहे हैं, उस भाषा के क्रमबद्ध इतिहास और विकास से छात्रों को परिचित कराना इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है। इस इकाई में भारतीय आर्य भाषाओं के क्रमिक विकास पर विस्तार से चर्चा की गयी है । इस इकाई के अध्ययन से छात्र निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- भारतीय आर्य भाषाओं का परिचय
- भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण
- प्राचीन भारतीय आर्य भाषा
- मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा
- आधुनिक भारतीय आर्य भाषा
- भारतीय आर्य भाषाओं की विशेषताएं

17.2 भारतीय आर्य भाषाओं का परिचय–

भारतीय आर्य भाषा भारोपीय परिवार से सम्बन्धित है । इसकी समयावधि 1500 ई० पू० से प्रारम्भ होकर वर्तमान समय तक मानी गयी है । भारत में आर्यों के आने के बाद से उनकी भारतीय आर्य भाषा का इतिहास शुरू होता है । डॉ० भोलानाथ तिवारी ने अपने ग्रन्थ 'भाषा विज्ञान' में विश्व की समस्त भाषाओं को 'भाषा–खंडों' के आधार पर चार भागों में विभाजित किया है–

1. पहला **अफ्रीका खंड** हैं, इसके अंतर्गत बुशमैन, बांटू, सूडान और हैमेटिक–सेमेटिक, ये चार भाषा परिवार आते हैं ।
2. दूसरा **यूरेशिया खंड** है, इसके अंतर्गत नौ भाषा परिवार आते हैं– हैमेटिक–सेमेटिक, काकेशियन, यूराल–अल्टाइक, चीनी, द्रविड़, आस्ट्रो–एशियाटिक, जापानी–कोरियाई, मलय–पालिनेशियन और भारोपीय ।
3. तीसरा खंड **प्रशांत महासागरीय खंड** है इसमें मुख्यतः मलय–पालिनेशियन परिवार है ।

4. चौथा खंड **अमरीका खंड** है । इसके अंतर्गत लगभग सौ परिवार माने गए हैं ।

इनमें भारोपीय परिवार प्रमुख है । यह यूरेशिया खंड में आता है । भारत से लेकर पूरे यूरोप तक में बोले जाने के कारण इस परिवार को 'भारोपीय परिवार' कहते हैं। 'यह परिवार एशिया में भारत, बांग्लादेश, श्रीलंका, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान, यूरोप में रूस, रोमानिया, फ्रांस, पुर्तगाल, स्पेन, इंग्लैण्ड, जर्मनी आदि तथा अमेरिका, कनाडा, अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया के अनेक भागों में बोला जाता है ।

भारोपीय में मुख्य रूप से संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, प्राचीन फ्रांसीसी, अवेस्ता, ग्रीक, लैटिन आदि हैं । भारतीय आर्य भाषा परिवार के अंतर्गत ही संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिंदी को गिना जाता है । इसे व्यवस्थित तौर पर तीन भागों में विभाजित किया जाता है– प्राचीन भारतीय आर्य भाषा, मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा और आधुनिक भारतीय आर्यभाषा ।

17.3 भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण–

जैसा कि हमने देखा कि भारतीय आर्य भाषाओं को विकास की दृष्टि से तीन कालों में विभक्त किया गया है–

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (1500 ई० पू० से 500 ई०)
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा (500 ई० से 1000 ई०)
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा (1000 ई० से अब तक)

17.3.1– प्राचीन भारतीय आर्य भाषा–

भाषा वैज्ञानिकों नें प्राचीन भारतीय आर्यभाषा की समयावधि 1500 ई० पू० से 500 ई० तक मानी जाती है । भारतीय आर्य भाषाओं का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताओं में मिलता है । प्राचीन आर्य भाषाओं के दो रूप मिलते हैं वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत । वैदिक संस्कृत को प्राचीन संस्कृत, वैदिकी, वैदिक संस्कृत या छांदस आदि नाम से भी पुकारा गया है । संस्कृत का यह रूप वैदिक संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों तथा प्राचीन उपनिषदों आदि में मिलता है । वैदिक

संस्कृत में उत्तरोत्तर भाषा विकासशील होती गयी । इसके उपरान्त लौकिक संस्कृत का विकास हुआ ।

संस्कृत का शाब्दिक अर्थ 'संस्कार की गयी या शिष्ट'द्य इसे लौकिक संस्कृत के साथ ही क्लैसिकल संस्कृत भी कहा गया । इस शब्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकि रामायण में मिलता है । यह साहित्य की भाषा है । वैदिक एवं लौकिक संस्कृत आपस में भिन्नता रखते हुए भी बहुत कुछ सामान थीं । दोनों में सबसे बड़ा अंतर यह था कि वैदिक भाषा लौकिक भाषा की तरह परिनिष्ठित नहीं थी किन्तु वह लौकिक की अपेक्षा कहीं अधिक स्वच्छन्द थी । लौकिक संस्कृत बहुत अधिक 'नियमित समाज की तरह नियमबद्ध है, एकरूप है । भोलानाथ तिवारी ने लिखा है कि– 'वैदिक में जहाँ परिनिष्ठिकरण एवं नियमन कम होने से रूप की जटिलताएं हैं, अनेकरूपताओं एवं अपवादों का अधिक्य है, लौकिक में वे या तो हैं ही नहीं या हैं भी तो वैदिक की तुलना में बहुत ही कम ।' दोनों में समता और विषमताएं दोनों हैं । इस प्रकार साहित्य में प्राचीन भारतीय आर्यभाषा काल में जनभाषा पर आधारित वैदिक एवं लौकिक भाषा के दो रूप प्रयुक्त हुए ।

17.3.2.– मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा–

लौकिक संस्कृत में पाणिनि आदि विद्वानों नें व्याकरण के माध्यम से इतनी जकड़न ला दी कि वह जनभाषा न रह सकी । तब जन सामान्य द्वारा जो भाषा आपसी कार्य व्यवहार के लिए प्रयुक्त की गयी उसे ही 'मध्यकालीन आर्यभाषा' नाम दिया गया । मध्यकालीन आर्य भाषा की समयावधि 500 ई० पू० से 1000 ई० तक मानी गयी है । मध्यकालीन आर्य भाषा को तीन भागों में विभाजित किया गया है–

1. मध्यकालीन आर्यभाषा की प्रथम स्थिति– पालि
2. मध्यकालीन आर्यभाषा की द्वितीय स्थिति– प्राकृत
3. मध्यकालीन आर्यभाषा की तृतीय स्थिति– अपभ्रंश

भाषाविद् डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें माना है कि मध्यकालीन आर्यभाषा को 'प्राकृत' भी कहा गया इस कारण वह पन्द्रह सौ वर्षों की समयावधि को 'प्राकृत भाषा काल' मानते हुए इसे इस प्रकार से तीन कालों में विभक्त करते हैं–

1. प्रथम प्राकृत (500 ई० पू० से 1 ई० तक)– पालि
2. द्वितीय प्राकृत (1 ई० से 500 ई० तक)– प्राकृत
3. तृतीय प्राकृत (500 ई० से 1000 ई० तक)– अपभ्रंश

17.3.2.1 मध्यकालीन आर्यभाषा की प्रथम स्थिति (पालि)–

इस काल को 'मध्यकालीन आर्यभाषा की प्रथम स्थिति' कहा जाए अथवा 'प्रथम प्राकृत काल' नाम दिया जाए, इसके अंतर्गत पालि का अध्ययन किया जाता है । पालि बौद्ध धर्म की भाषा है । इसे 'मागधी' या 'देश भाषा' भी कहा गया है । इसका समय 500 ई० पू० से पहली सदी तक स्वीकार किया जाता है ।

पालि का नामकरण–

'पालि' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग चौथी सदी में लंका में लिखित ग्रन्थ 'दीपवंस' में हुआ । वहां पर इसका अर्थ बुद्धवचन' है । इसके उपरान्त आचार्य बुद्धघोष ने भी इसी अर्थ में इसका प्रयोग किया । पालि शब्द की उत्पत्ति को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है । पालि नामकरण को लेकर कई मत प्रचलित हैं । इनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

1. पालि शब्द की उत्पत्ति के लिए विधु शेखर भट्टाचार्य ने अपना मत देते हुए इसका सम्बन्ध संस्कृत की पंक्ति से माना है । उनके अनुसार–

   पंक्ति **>** पन्ति **>** पत्ति **>** पट्टि **>** पल्लि **>** पालि

   इस प्रकार पंक्ति से विकसित होकर पालि शब्द बना ।

2. एक मत के अनुसार पालि शब्द की उत्पत्ति पल्लि शब्द से हुयी है । 'पल्लि' शब्द का अर्थ ग्राम होता है । इस प्रकार पल्लि **>** पालि का अर्थ 'गाँव की भाषा' के रूप में स्वीकार किया गया ।
3. बौद्ध विद्वान कोसाम्बी ने 'पालू' शब्द से इसकी उत्पत्ति स्वीकार की । 'पालू' का अर्थ है रक्षा करना । बुद्ध के उपदेशों की रक्षा करने के कारण उन्होंने इसे यह नाम दिया ।

4. बौद्ध भिक्षु सिद्धार्थ ने 'पाठ' शब्द से पालि होना स्वीकार किया । उनके अनुसार–

पाठ **>** पालि **>** पाळइ **>** पालि

इस क्रम में पालि का विकास हुआ । 'पाठ' से उनका तात्पर्य बुद्ध पाठ या बुद्ध के वचनों से था ।

5. एक मत यह भी कहता है कि पालि की उत्पत्ति प्राकृत से हुयी । यह मत मानता है कि–

प्राकृत **>** पाकट **>** पाअड **>** पाअल **>** पालि

इस क्रम में प्राकृत से पालि रूप विकसित हुआ ।

6. डॉ0 मैक्सवेलेसर ने पालि की उत्पत्ति 'पाटलि' शब्द से स्वीकार की है । उनके अनुसार पाटलिपुत्र की भाषा होने के कारण यह पालि कहलाई । उनका तर्क था कि ग्रीक में पाटलिपुत्र को 'पालिब्रोथ' लिखा जाता है ।
7. भिक्षु जगदीश कश्यप ने अपने 'पालि महाव्याकरण' में यह माना है कि पालि की उत्पत्ति 'परियाय' शब्द से हुयी है । 'परियाय' (धम्म परियाय) शब्द का प्रयोग प्राचीन बौद्ध साहित्य में बुद्ध के उपदेश के लिए मिलता है । उनके अनुसार–

परियाय **>** पलियाय **>** पालियाय **>** पालि

उपरोक्त सभी मतों के अपने अपने तर्क और प्रमाण हैं किन्तु सर्वाधिक प्रमाणिक मत भिक्षु जगदीश कश्यप का माना जाता है । अधिकांश विद्वान् 'परियाय' से पालि की उत्पत्ति को सही मानते हैं ।

पालि का साहित्य–

पालि को कुछ विद्वान 'बौद्ध प्राकृत' भी कहते हैं क्योंकि यह प्राकृत की प्रथम स्थिति है । पालि के साहित्य का सीधा सम्बन्ध भगवान बुद्ध से माना जाता है ।

बौद्ध धर्म का आधार ग्रन्थ त्रिपिटक हैं । सुत्त पिटक, विनय पिटक और अभिधम्म पिटक को त्रिपिटक कहा जाता है । इनमें बुद्ध के उपदेश संकलित हैं और इनकी भाषा पालि है । त्रिपिटक के अतिरिक्त पालि साहित्य में आचार्य बुद्धदत्त का मिलिन्दपन्ह और बुद्धघोष की 'अट्ठकथा' के साथ ही 'धम्मपद', 'दीपवंश' और 'महावंश' का नाम भी लिया जाता है । इनके अतिरिक्त कोश, छंद–शास्त्र और व्याकरण की भी रचनाएं मिलती हैं । पालि के प्रमुख वैयाकरण व्याकरण कच्चायन हैं । उनके उपरान्त दूसरा नाम मोग्गलान का आता है ।

पालि का प्रयोग क्षेत्र–

नामकरण की ही तरह पालि भाषा के प्रयोग क्षेत्र के विषय में बहुत मतभेद है कि पालि मूलतः किस प्रदेश या क्षेत्र की भाषा थी ? इस सम्बन्ध में कुछ मत हैं–

1. श्रीलंका के बौद्ध इसे मगध की भाषा स्वीकार करते हैं । इसी कारण वह इसे मागधी भी कहते हैं ।
2. जार्ज ग्रियर्सन ने यद्यपि इस पर पैशाची का प्रभाव भी स्वीकार किया है लेकिन इसे मागधी ही माना है।
3. वेस्टगार्ड, फ्रैंक, स्टैनेकोनो आदि विद्वानों नें इसे उज्जयिनी या विन्ध्यप्रदेश की बोली स्वीकार किया है ।
4. ओल्डनबर्ग समानता के आधार पर इसे कलिंग की भाषा मानते हैं ।
5. कुछ विद्वान इसे कोसल की बोली कहते हैं तो कुछ का मानना है कि यह पुरानी अर्धमागधी से सम्बद्ध है ।

उपरोक्त मतभेद के बीच विख्यात भाषावैज्ञानिक डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि– 'पालि में विभिन्न प्रदेशों के तत्व हैं । इसी कारण विभिन्न लोगों ने इसे विभिन्न स्थानों से सम्बद्ध किया है । वस्तुतः अपने मूल रूप में पालि मध्यप्रदेश की भाषा है ।' इसके साथ ही वह अपने मूल रूप में पालि को शौरसेनी प्राकृत का पूर्व रूप मानते हैं

पालि की भाषिक विशेषताएं–

पालि की प्रमुख भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. ध्वनियाँ वैदिक काल में 55 ध्वनियाँ थी जो पालि में 47 ही रह गयीं । कच्चायन के अनुसार 'अक्खरापादयो एकचत्तालीस' अर्थात पालि में 41 ध्वनियाँ थीं मोग्गलान कहते हैं– 'अआदयो तितालिस वणणा' अर्थात पालि में 43 ध्वनियाँ थीं । किन्तु भाषा वैज्ञानिक डॉ0 भोलानाथ तिवारी का मानना है कि पाली में कुल 47 ध्वनियाँ हैं– अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऍ, ऑ, ए, ओ, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, य्, य़्, र्, ळ्, ळह्, व, व्, व़्, स्, ह् निग्गहीत ।
2. इस प्रकार संस्कृत के ऐ और औ सरलीकृत होकर ऍ और ऑ के रूप में प्रयुक्त हुए । जैसे

   कौशल **>** कोसल,
   शैल **>** सेल
3. 'ऋ' का लोप हो गया । इनके स्थान पर कहीं 'अ' मिलता है तो कहीं 'इ' अथवा 'उ' ।
4. 'श' और 'ष' का प्रयोग पाली में नहीं मिलता है । इसके स्थान पर एकमात्र 'स' का ही प्रयोग होता है । जैसे–

   शवशान **>** सुसान,
   शय्या **>** सेय्या,
   कोष **>** कोस,
   तेषु **>** तेसु
5. दो अन्तःस्थ होने की स्थिति में 'र' और 'व' लुप्त हो जाते हैं । जैसे–

   दुर्लभ **>** दुल्लभ,
   दीर्घ **>** दीघ,
   बिल्व **>** बेल्ल

6. महाप्राण का परिवर्तन 'ह' के रूप में हो जाता है, जैसे–

   भवति **>** होति,

   रुधिर **>** रुहिर,

   गाथा **>** गाहा,

   लघु **>** लहु

7. 'त्य' 'थ्य' में परिवर्तन की परिवर्तन की प्रवृत्ति दिखाई देती है–

चत्वर > चच्चर,

सत्य > सच्च,

मिथ्या > मिच्छा,

अद्य > अज्ज,

8. 'क्ष' का प्रयोग कहीं 'ख' के रूप में दिखाई देता है तो कहीं 'च्छ' के रूप में । जैसे–

क्षण > खण,

क्षमा > खमा,

पक्षी > पक्खी,

भिक्षा > भिच्छा

9. पालि में विसर्ग का लोप हो गया।
10. 'लृ' ध्वनि भी पालि में समाप्त हो गयी ।
11. पालि में ध्वनि परिवर्तन के कई रूप दिखाई देते है । जैसे–

क के स्थान पर ग । जैसे– शोक > सोग, लोक > लोग

द्य के स्थान पर ज । जैसे– द्यूत > जूअ, विद्युत > बिज्जु

ल के स्थान पर र । जैसे– अंगूलि > अंगुरि

12. पद के अंत में आने वाले संयुक्त व्यंजन के 'र' का लोप हो गया । जैसे–

प्रियः > पियो,

त्रिपिटक > तिपिटक

13. पालि में संस्कृत के द्विवचन का लोप हो गया ।
14. कर्ता और कर्म कारक बिना विभक्ति या परसर्ग के व्यक्त होने लगे ।

17.3.2.2 मध्यकालीन आर्यभाषा की द्वितीय स्थिति (प्राकृत) (1 ई० से 500 ई0)

मध्यकालीन आर्यभाषाओं की दूसरी अवस्था को ही द्वितीय प्राकृत काल कहते हैं । इस युग में प्राकृत का कार्य व्यवहार किया गया । सामन्य रूप से इसकी कालावधि ई0 सन के आरम्भ से 500 ई0 तक स्वीकार की जाती है । प्राकृत के सन्दर्भ में यह विवाद का विषय रहा है कि प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से हुयी है अथवा संस्कृत की प्राकृत से । हेमचंद्र, मार्कंडेय. सिंहदेव आदि आचार्यों का मानना है कि आदि भाषा तो संस्कृत ही है, प्राकृत उसी से निर्गत हुयी है । इसके विपरीत पिशेल आदि कुछ विद्वान प्राकृत से संस्कृत को विकसित हुआ मानते है ।

प्राकृत के भेद–

आचार्य भरतमुनि, चंड, वररुचि, हेमचंद्र आदि आचार्यों के साथ ही आधुनिक भाषा विज्ञानिकों ने भी प्राकृत के भेद पर विचार के अपने अपने मत प्रतिपादित किये हैं । जहाँ एक ओर आचार्य भरतमुनि नें अपने ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में सात प्राकृतों का उल्लेख किया हैं वहीं आचार्य वररुचि नें महाराष्ट्री, पैशाची, मागधी और चार प्राकृतों का वर्णन किया है । डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें अपने ग्रन्थ 'भाषा विज्ञान' में पांच प्राकृतों को ही मान्यता प्रदान की है–

1. शौरसेनी–

शौरसेनी प्राकृत मूलतः मथुरा के आस पास बोली जाती थी । मध्यदेश की भाषा होने के कारण कुछ लोग इसे ही तात्कालिक मानक भाषा मानते हैं। संस्कृत नाटकों में गद्य की भाषा शौरसेनी ही है । जैन ग्रंथों में यह भाषा प्रयुक्त हुयी है । अश्वघोष के नाटकों में इस भाषा का प्राचीनतम रूप मिलता है । नाटकों में 'कर्पूरमंजरी' का गद्य इसी भाषा में है । शौरसेनी प्राकृत की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. शौरसेनी में तत्सम शब्दों की बहुलता है ।
2. क्षतिपूर्ति दीर्घिकरण की प्रवृत्ति भी मिलती है ।
3. ऋ का विकास इ के रूप में हो गया ।
4. क्ष का परिवर्तन 'क्ख' के रूप में हो गया ।

2. पैशाची–

जार्ज ग्रियर्सन पैशाची को 'दरद' से प्रभावित मानते हैं और 'हार्नले' ने इसे 'द्रविड़ो' द्वारा प्रयुक्त मानते हैं । पैशाची में साहित्य बहुत कम मिलता है । गुणाढ्य का 'वृहत्कथा' मूलतः इसी भाषा में लिखा गया है । इसकी प्रमुख भाषिक विशेषता यह है कि– 'दो स्वरों के बीच में आने वाले स्पर्श वर्गों के तीसरे और चौथे घोष व्यंजनों का क्रमशः पहला और दूसरा अर्थात् अघोष हो जाता है ।

3. महाराष्ट्री

महाराष्ट्री प्राकृत का मूल स्थान महाराष्ट्र है । यह काव्य की कृत्रिम भाषा मानी गयी है । साहित्य की दृष्टि से महाराष्ट्री प्राकृत बहुत समृद्ध है जिसमें हाल की 'गाथासप्तशती', प्रवरसेन की रावणवहो और जयवल्लभ का 'वज्जलग्ग' जैसी विख्यात कृतियाँ इसी भाषा में लिखी गयी हैं । महाराष्ट्री की कुछ विशेषताएं प्रमुख हैं जैसे–

1. दो स्वरों के बीच आने वाले अल्पप्राण स्पर्श लुप्त होने लगे ।
2. महाप्राण का केवल 'ह' शेष रह गया ।
3. ऊष्म ध्वनियों का प्रायः 'ह' हो गया ।

4. अर्धमागधी

मागधी और शौरसेनी के बीच का क्षेत्र अर्धमागधी का है । इसमें प्राचीन कोसल के आस–पास का क्षेत्र आता है । इसका प्रयोग जैन साहित्य में हुआ है । इसकी कुछ विशेषताएं हैं जैसे–

1. ष और श के स्थान पर स का प्रयोग ।
2. दन्त्य ध्वनियों का मूर्धन्य हो जाता है ।
3. चवर्ग के स्थान पर कहीं–कहीं तवर्ग का प्रयोग मिलता है ।

5. मागधी

मगध के आस–पास की भाषा मागधी है । मागधी का अपना स्वतंत्र साहित्य नहीं मिलता है । संस्कृत नाटकों के निम्न श्रेणी के पात्रों के दवारा यह भाषा प्रयुक्त हुयी है । मागधी में 'र' के स्थान पर 'ल' का प्रयोग मिलता है, इसमें 'स' और 'ष' के स्थान पर 'श' का प्रयोग मिलता है ।

प्राकृत की सामान्य विशेषताएं–

1. प्राकृत की ध्वनियाँ बहुत कुछ पालि के निकट हैं ।
2. ऊष्म ध्वनियों में एकमात्र स का प्रयोग होता है ।
3. प्राकृत में सर्वत्र न के स्थान पर 'ण' का प्रयोग होता हैं ।
4. प्राकृत में व्यंजनान्त शब्द नहीं रह गए ।
5. प्राकृत के अव्यय वही थे जो पालि में प्रयुक्त हो रहे थे ।
6. सघोष व्यंजनों के स्थान पर अघोष व्यंजन प्रयुक्त होने लगे ।

17.3.2.3. मध्यकालीन आर्यभाषा की तृतीय स्थिति (अपभ्रंश)–

मध्यकालीन आर्यभाषा की तीसरी स्थिति से तात्पर्य अपभ्रंश से है । इसे तृतीय प्राकृत काल भी कहा जाता है । इसकी समयावधि 500 ईसवीं से 1000 ईसवीं तक मानी जाती है । अपभ्रंश का अर्थ गिरा हुआ या बिगड़ा हुआ कहा गया है । यह प्राकृत और आधुनिक आर्य भाषाओं के बीच की कड़ी मानी जाती है ।

अपभ्रंश के भेद–

1. मार्कंडेय नें अपभ्रंश के तीन भेद बताये हैं ।
2. याकोबी नें अपभ्रंश के चार भेद स्वीकार किये हैं ।
3. डॉ तागारे नें तीन भेदों का उल्लेख किया है ।
4. डॉ0 नामवर सिंह नें दो भेद किये हैं ।

अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएं–

1. अपभ्रंश में लिखने में तो ऋ प्रयुक्त होता था किन्तु उच्चारण में 'रि' होता था ।
2. अपभ्रंश में स्वरों का अनुनासिक रूप प्रयुक्त होने लगा था ।

3. अपभ्रंश उकार बहुला भाषा है ।
4. अपभ्रंश में रूपों की संख्या संस्कृत की अपेक्षा कम हो गई ।
5. कई शब्दों में स्वरलोप हो गया ।
6. स्वरगुच्छो की अधिकता दिखाई देती है ।
7. नपुंसकलिंग समाप्त हो गया ।
8. ध्वनिगत परिवर्तन के भी विभिन्न रूप दिखाई देते हैं ।

17.3.3 आधुनिक भारतीय आर्य भाषा (1000 ई० से अब तक)

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का समय १००० ई० से प्रारम्भ माना जाता है । इस वर्ग में सिन्धी, गुजराती, लहंदा, पंजाबी, मराठी, उड़िया, बंगाली, असमिया, हिंदी (पूर्वी हिंदी, पश्चिमी हिंदी) प्रमुख है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने स्तर से अलग–अलग प्रयास किया ।

1. **डॉ हार्नले** नें आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को चार भागों में विभाजित किया–
    1. पूर्वी गौडियन– पूर्वी हिंदी (बिहारी भी), बँगला, असमी, उड़िया
    2. पश्चिमी गौडियन– पश्चिमी हिंदी (राजस्थानी भी), गुजराती, सिंधी, पंजाबी
    3. उत्तरी गौडियन– गढ़वाली, नेपाली आदि पहाड़ी
    4. दक्षिणी गौडियन– मराठी
2. **ग्रियर्सन** नें ध्वनि, व्याकरण और शब्द समूहों के आधार पर दो बार इन भाषाओं का वर्गीकरण किया ।
    - ग्रियर्सन द्वारा पहला प्रयास–

1. बाहरी उपशाखा– (क) पश्चिमोत्तरी समुदाय (लहंदा, सिन्धी)

(ख) दक्षिणी समुदाय– (मराठी)

(ग) पूर्वी समुदाय– (उड़िया, बंगाली, असमी, बिहारी)

2. मध्यवर्गी उपशाखा– मध्यवर्ती समुदाय (पूर्वी हिंदी)
3. भीतरी उपशाखा– केन्द्रीय समुदाय (पश्चिमी हिंदी, पंजाबी, गुजराती, भीली, खानदेशी) पहाड़ी समुदाय– (पूर्वी, मध्यवर्ती, पश्चिमी)

- ग्रियर्सन के द्वारा किया गया दूसरा विभाजन

क– मध्यदेशी– (पश्चिमी हिंदी)

ख– अंतरवर्ती–

(क)– पश्चिमी हिंदी से विशेष घनिष्ठता वाली पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी (पूर्वी, पश्चिमी, मध्य)
(ख) बहिरंग से सम्बद्ध (पूर्वी हिंदी)

ग– बहिरंग भाषाएँ– 1– पश्चिमोत्तरी (लहंदा, सिन्धी)
2– दक्षिणी (मराठी)
3– पूर्वी (बिहारी, उड़िया बंगाली असमी)

4. **डॉ सुनीति कुमार चटर्जी** के अनुसार–

1. उदीच्य– 1. सिन्धी 2. लहंदा, 3. पंजाबी
2. प्रतीच्य– 1. गुजराती 2. राजस्थानी
3. मध्यदेशीय– (पश्चिमी हिंदी)
4. प्राच्य– 1. पूर्वी हिंदी, 2. बिहारी 3. उड़िया 4. असमिया, बंगाली
5. दाक्षिणात्य– मराठी

5. डॉ धीरेन्द्र वर्मा डॉ चटर्जी के वर्गीकरण से सहमत थे इस कारण उन्होंने थोड़े परिवर्तन के साथ अपना वर्गीकरण इस प्रकार किया–

1. उदीच्य– 1. सिन्धी 2. लहंदा, 3. पंजाबी
2. प्रतीच्य– 1. गुजराती
3. मध्यदेशीय– 1. राजस्थानी, 2. पश्चिमी हिंदी 3. पूर्वी हिंदी 4. बिहारी
4. प्राच्य– 1. उड़िया, 2. आसामी, 3. बंगाली

5. दाक्षिणात्य– मराठी

डॉ0 भोलानाथ तिवारी का मानना है कि– 'वर्गीकरण का आशय यह है कि उसके आधार पर भाषाओं की मूलभूत विशेषताएं स्पष्ट हो जाएँ।' इस आधार पर उन्होंने अपना वर्गीकरण इस प्रकार दिया–

1. मध्यवर्ती वर्ग– 1. पश्चिमी हिंदी, 2. राजस्थानी 3. गुजराती, 4. पहाड़ी
2. पूर्वीय वर्ग– 1. बिहारी 2. बंगाली 3. आसामी 4. उड़िया
3. मध्यपूर्वीय– पूर्वी हिंदी
4. महाराष्ट्री– मराठी
5. पश्चिमोत्तरी वर्ग– 1. सिंधी, 2. लहंदा 3. पंजाबी

17.4. भारतीय आर्य भाषाओं की विशेषताएं–

भारतीय आर्य भाषाओं की प्रमुख विशेषताएं

1. आधुनिक आर्य भाषाओं में ध्वनियाँ वही रहीं जो प्राकृत और अपभ्रंश में थीं ।
2. प्राकृत के द्वित्तिकरण और दीर्घीकरण के नियम भी शिथिल पड़ने लगे। आधुनिक काल में 'द्वित्व' में केवल एक रह गया और पूर्ववर्ती स्वर में क्षतिपूरक दीर्घता आ गयी, जैसे– कम्म > काम, अट्ठ > आठ ।
3. अपभ्रंश तक आते–आते रूप कम हो गए थे । आधुनिक भाषाओं में अपभ्रंश की तुलना में रूप और कम हो गए । इस प्रकार भाषा उत्तरोत्तर सरल होती चली गयी। संस्कृत के तीनों वचनों में लगभग 24 रूप बने थे जो प्राकृत में 12 और अपभ्रंश में 6 ही रह गए । आधुनिक भाषाओं में केवल दो, तीन या चार रूप हैं। क्रिया रूपों में भी कमी हो गयी ।
4. संस्कृत में तीन वचन थे । मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं में द्विवचन समाप्त हो गया था । आधुनिक काल में भी दो वचन ही हैं । हिंदी में 'मैं' के प्रयोग में कमी आ रही है और उसके स्थान पर 'हम' का प्रयोग अधिक हो रहा है ।

5. संस्कृत में तीन लिंग थे । मध्ययुगीन भाषाओं में भी यही व्यवस्था रही । आधुनिक काल में कई भाषाओं में लिंग भेद कम हो गया। अब तीन लिंग केवल गुजराती मराठी आदि में है ।
6. मध्यकालीन आर्य भाषाएं योगात्मक थीं । आधुनिक भाषाएँ पूरी तरह से अयोगात्मक या वियोगात्मक हो गई । अपवाद स्वरूप कुछ योगात्मक रूप हैं ।
7. डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि 'आधुनिक भाषाओं में प्राचीन तथा मध्ययुगीन से शब्द भंडार की दृष्टि से सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पश्तो, तुर्की, अरबी, फारसी, पुर्तगाली तथा अंग्रेजी आदि से 8–9 हजार नए शब्द आ गए हैं। इनके पूर्व भाषाओं का प्रमुख शब्द भंडार तत्सम, तद्भव और देशज का ही था। मध्ययुगीन भाषाओं की तुलना में आज तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक हो रहा है और तद्भव अपेक्षाकृत कम ।

17.5 सारांश–

इस इकाई में भारतीय आर्य भाषाओं के क्रमिक विकास पर विस्तार से चर्चा की गयी है । हमारी सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत है । संस्कृत को देवभाषा कहा गया है । वर्तमान समय में जो बोलियाँ या भाषाएँ देश भर में प्रयुक्त हो रही हैं वह किसी न किसी प्रकार से संस्कृत से जुड़ी हुयी हैं । संस्कृत के उपरान्त जन सामान्य द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली भाषा पालि है । पालि बौद्ध धर्म की भाषा है, पालि के उपरान्त प्राकृत और फिर प्राकृत के उपरान्त अपभ्रंश भाषा का प्रयोग किया गया । आधुनिक आर्य भाषाएँ किसी न किसी प्रकार से अपभ्रंश से जुड़ी हुयी हैं । इस इकाई के अध्ययन से छात्र प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के साथ ही मध्यकालीन आर्य भाषाओं की तीनों स्थितियों के बारे में जान सकेंगे साथ ही आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के विषय में सभी जिज्ञासाओं के उत्तर उन्हें इस इकाई में प्राप्त हो सकेंगें । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से छात्र हिंदी के विविध प्रयोगों और रूपों के बारे में जान सकेंगें और इसके साथ ही छात्र भारतीय आर्य भाषाओं के बारे में जान और समझ सकेंगें ।

17.6 शब्दावली–

वैयाकरण– व्याकरण का ज्ञाता

जटिल– कठिन, उलझा हुआ

उत्तरोत्तर– क्रमशः / लगातार

भारोपीय– भारत और यूरोप से सम्बंधित

नियमन– नियम में बाँधने का कार्य / नियन्त्रण

उदीच्य– उत्तर दिशा से सम्बंधित

प्रतीच्य– पश्चिम दिशा से सम्बन्धित

प्राच्य– पूरब दिशा से सम्बंधित

17.7 सन्दर्भ ग्रन्थ–

डॉ0 हरदेव बाहरी– हिंदी भाषा

डॉ0 भोलानाथ तिवारी– हिंदी भाषा

डॉ0 भोलानाथ तिवारी– भाषा विज्ञान

17.8 प्रश्नावली–

17.8.1– बहुविकल्पीय प्रश्न

1. भारत में आर्य भाषा का प्रारंभ कब से माना जाता है ?
    1. 500 ई० पू०
    2. 1000 ई० पू०
    3. 1500 ई० पू०
    4. 2000 ई० पू०

सही उत्तर– 3– 1500 ई० पू०

2. निम्न लिखित में से कौन सी मध्यकालीन आर्य भाषा नहीं है–
    1. पालि
    2. प्राकृत
    3. अपभ्रंश
    4. संस्कृत

सही उत्तर– 4– संस्कृत

3. कच्चायन और मोग्ग्लान किस भाषा के वैयाकरण हैं–

1. संस्कृत
2. पालि
3. प्राकृत
4. अपभ्रंश

सही उत्तर– 2– पालि

4. डॉ भोलानाथ तिवारी नें प्राकृत के कितने भेदों को मान्यता दी है–

1. 3
2. 4
3. 5
4. 6

सही उत्तर– 3– 5

5. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा की समयावधि है–

1. 1500 ई० पू० से 500 ई० पू०
2. 500 ई० पू० से 1000 ई०
3. 1000 ई० से अब तक
4. 500 ई० से अब तक

सही उत्तर– 3– 1000 ई० से अब तक

6. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण उदीच्य, प्रतीच्य प्राच्य और दाक्षिणात्य के नाम से निम्नलिखित में से किसने किया है–

1. हार्नले
2. जार्ज ग्रियर्सन

3. डॉ सुनीति कुमार चटर्जी
4. डॉ भोलानाथ तिवारी

सही उत्तर– 3– डॉ0 सुनीति कुमार चटर्जी

17.8.2– लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा से आप क्या समझते हैं ?
2. पालि के नामकरण पर प्रकाश डालिए ।
3. प्राकृत की प्रमुख विशेषताएं बताइये ।
4. अपभ्रंश की चार रचनाओं का उल्लेख करते हुए उनके रचनाकारों के नाम बताइए ।
5. अपभ्रंश की विशेषताएं बताइये ।
6. अवहट्ट से आप क्या समझते हैं ?

17.8.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय आर्य भाषाओं से आप क्या समझते हैं ? विस्तार से बताते हुए इसका का वर्गीकरण कीजिये ।
2. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के बारे में विस्तार से बताइये ।
3. मध्यकालीन आर्यभाषा की प्रथम स्थिति (पालि) के नामकरण की समस्या, क्षेत्र और विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए उसके साहित्य का परिचय दीजिये ।
4. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए इसके वर्गीकरण का उल्लेख कीजिये ।

इकाई–18 प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिंदी

इकाई की रूपरेखा

18.0 प्रस्तावना

18.1 उद्देश्य

18.2 प्राकृत

18.2.1– परिचय

18.2.2– प्राकृत की उत्पत्ति एवं नामकरण

18.2.3– प्राकृत के भेद / प्रकार

18.2.4– प्राकृत की भाषागत विशेषताएं

18.2.5– प्राकृत का साहित्य

18.3 अपभ्रंश

18.3.1– परिचय

18.3.2– अपभ्रंश का नामकरण

18.3.3– अपभ्रंश के भेद / प्रकार

18.3.4– अपभ्रंश की भाषागत विशेषताएं

18.3.5– अपभ्रंश का साहित्य

18.4 अवहट्ट

18.4.1– परिचय

18.4.2– अवहट्ट की भाषागत विशेषताएं

18.4.3– अपभ्रंश का साहित्य

18.5 पुरानी हिंदी

18.5.1– परिचय एवं उत्पत्ति

18.5.2– पुरानी हिंदी का नामकरण

18.5.3– पुरानी हिंदी की भाषागत विशेषताएं

18.5.4– पुरानी हिंदी का साहित्य

18.6 सारांश

18.7 शब्दावली

18.8 संदर्भ ग्रन्थ

18.9 प्रश्नावली

18.9.1– बहुविकल्पीय प्रश्न

18.9.2– लघु उत्तरीय प्रश्न

18.9.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

18.0 प्रस्तावना–

संस्कृत भारतीय आर्य भाषाओं में सबसे पुरानी भाषा है, जिसे देवभाषा भी कहा गया है । समस्त भारतीय आर्य भाषाओं का मूल संस्कृत ही है । वैदिक संस्कृ त का अपना अलग प्रारूप है । पहले संस्कृत व्याकरणिक नियमों से बहुत अधिक बंधी नहीं थी । जब पाणिनि आदि वैयाकरणों नें संस्कृत को नियमबद्ध कर दिया तब सामान्य जन नें एक सरल मार्ग का चयन किया जो पालि की ओर जाता था । पालि बौद्ध धर्म की भाषा है । उसमें बहुत से महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का सृजन हुआ। पालि ही वह भाषा है बुद्ध के उपदेशों को 'त्रिपिटक' के रूप में संकलित किया गया । बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार के साथ ही पालि नें वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बनाई । भाषा की प्रकृति सदैव से परिवर्तनशील रही है ।

इस प्रकार जब पालि उच्च वर्ग की भाषा बन गई तब प्राकृत जन सामान्य के प्रयोग की भाषा बनी । प्राकृत जैन धर्म की प्रमुख भाषा बनी । साहित्य सृजन के स्तर पर भी प्राकृत ने बहुत उन्नति की । हाल का गाथा सप्तशती, जयवल्लभ का वज्जालग्ग, प्रवरसेन का रावणवहो आदि प्राकृत के प्रमुख ग्रन्थ हैं । प्राकृत के विभिन्न रूपों से अपभ्रंश का विकास हुआ । समय बीतने के साथ ही प्राकृत का स्थान अपभ्रंश ने लिया । जन भाषा बनने के बाद अपभ्रंश का विस्तार बहुत दूर दूर तक हुआ । आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का सम्बन्ध किसी न किसी प्रकार अपभ्रंश से है । अवहट्ट अपभ्रंश के बाद की स्थिति है । इसे अपभ्रंश का बिगड़ा

हुआ रूप भी कहा जाता है । भाषा के विकास की इस प्रक्रिया को इस इकाई में विस्तार से बताया गया है । इस इकाई में मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा के विकास की प्रक्रिया को इस इकाई में विस्तार से प्रकाश डाला गया है ।

18.1 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को मध्यकालीन आर्य भाषा से परिचित कराना है । भारतीय आर्य भाषाएँ भारतीय उपमहाद्वीप के पांच देशों में बोली जाती है । जैसा कि छात्रों को ज्ञात हैं भारतीय आर्य भाषाओं को तीन भागों में विभक्त किया गया है । प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं में वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत का अपना स्वर्णिम इतिहास रहा है । इसके उपरान्त मध्यकालीन आर्य भाषा को मुख्य रूप से तीन भागों में विभक्त किया गया है । यह तीन भाग पालि प्राकृत, अपभ्रंश (अवहट्ट) हैं । छात्रों को यह जानना आवश्यक है कि वर्तमान समय में बोली जाने वाली भाषाओं का मूल कहाँ है । छात्र इसके पूर्व की इकाई में भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण के बारे में भली प्रकार से परिचित हो चुके हैं । अब इस इकाई के अध्ययन से छात्र निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- प्राकृत भाषा की विशेषताएं एवं उसका साहित्य
- अपभ्रंश की भाषिक एवं साहित्यिक विशेषताएं
- अवहट्ट भाषा एवं साहित्य
- पुरानी हिंदी से तात्पर्य
- मध्यकालीन आर्य भाषाओं की समेकित विशेषताएं

18.2 प्राकृत

प्राकृत मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं की प्रथम स्थिति है। प्राकृत की समयावधि एक ईसवीं से 500 ईसवीं तक माना जाता है ।

18.2.1– परिचय–

जब संस्कृत लोक व्यवहार से दूर हो गयी तब जन सामान्य में भाषा को जो रूप प्रचलित हुआ उसे पालि कहा गया । पाली का स्थान धीरे–धीरे प्राकृत ने ले लिया और वह पूरे भारतवर्ष की मुख्य जनभाषा बनी । 'वाक्पतिराज' ने प्राकृत को महासमुद्र कहा है जिससे अन्य सभी भाषाएँ उत्पन्न होती हैं । वह लिखते हैं–

'सक्लाश्चेमा वाचः प्राकृत महार्णवाद निर्यान्ति तत्रैव च प्रविशन्ति ।'

इसके साथ ही 'गउडबहो' में यह कहा गया है कि–

'सयलाओ इमं वाया विसंत्ति एत्तो यणेंति वायाओ ।'

एंति समुद्धं चिहणेंति सायराओ च्चय जलाई ।'

अर्थात जैसे जल सागर में प्रवेश करता है और सागर से ही निकलता है, उसी प्रकार सभी भाषाएँ प्राकृत में ही प्रवेश करती हैं, और प्राकृत से ही निकलती है।

18.2.2– प्राकृत की उत्पत्ति एवं नामकरण–

प्राकृत की उत्पत्ति को लेकर मतभेद रहा है । इसको लेकर दो मत हमारे सामने आते हैं–

- पहले मत के अनुसार– प्राक + कृत अर्थात (संस्कृत से) पहले से बनी हुयी । इस प्रकार प्राकृत प्राकृतिक या अकृत्रिम भाषा है । यह मत यह कहता है कि प्राकृत मूल है इसी से संस्कृत उत्पन्न हुयी है–

  'नाम प्रकृतेः आगतं प्राकृतम

- दूसरा मत कहता है कि मूल भाषा संस्कृत हैं उससे प्राकृत उत्पन्न हुयी है । आचार्य मार्कंडेय, आचार्य सिंह देव, आचार्य हेमचंद्र आदि मानते हैं कि मूल भाषा तो संस्कृत है, जो उससे उत्पन्न हुयी है वह प्राकृत है ।

  - **मार्कन्डेय** के अनुसार–

    'प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भव प्राकृतमुच्यते'

(अर्थात् प्रकृति या मूल संस्कृत है, उससे जन्मी भाषा को प्राकृत कहते हैं।)

- **आचार्य हेमचन्द्र** नें लिखा है कि–

  'प्रकृतिः संस्कृतम । तत्र भवं तदागतं वा प्राकृतम' ।'

  (अर्थात प्रकृति या मूल तो संस्कृत है और संस्कृत से जो आई है वह प्राकृत है।)

- **सिंहदेव मणि** के अनुसार–

  'प्रकृतेः संस्कृतात आगतं प्राकृतम'

  (अर्थात प्रकृत संस्कृत से निकली प्राकृत है।)

- **वासुदेव** के अनुसार

  'प्राकृतस्य सर्वमेव संस्कृत योनिः।'

  (प्राकृत की जननी संस्कृत है ।)

18.2.3– प्राकृत के भेद / प्रकार–

आचार्य भरत मुनि अपने ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र में सात प्राकृतों का उल्लेख किया है–

1. शौरसेनी
2. मागधी
3. अर्धमागधी
4. दाक्षिणात्या
5. बह्विकी
6. आवंती और
7. प्राच्या

चंड नें अपने ग्रन्थ 'प्राकृत–लक्षण' में महाराष्ट्री, शौरसेनी, पैशाची और अपभ्रंश का वर्णन किया है ।

आचार्य वररुचि ने अपने ग्रन्थ 'प्राकृत प्रकाश' ने प्राकृत के चार भेद स्वीकार किये हैं ।

1. महाराष्ट्री
2. पैशाची,
3. मागधी
4. शौरसेनी

आचार्य हेमचन्द्र ने 'सिद्ध हेमशब्दानुशासन' में प्राकृत के पांच भेद स्वीकार किये हैं । आचार्य वररुचि द्वारा बताये गए उपरोक्त चार भेदों के अतिरिक्त उन्होंने अर्धमागधी को भी प्राकृत का एक भेद स्वीकार किया–

1. महाराष्ट्री
2. पैशाची,
3. मागधी
4. शौरसेनी
5. अर्धमागधी

इसके साथ ही अन्य मत भी सामने आते हैं, जैसे–

- डॉ0 हरदेव बाहरी के अनुसार– 'आचार्य हेमचन्द्र ने भी महाराष्ट्री को सामान्य प्राकृत मान कर उसका विस्तृत वर्णन किया है और शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची और अपभ्रंश की विशेषताएं बतायी हैं ।
- 'साहित्य–दर्पण' में बारह प्राकृतों के नाम गिनाये गए हैं जिनमें शाकरी, द्राविडी, आभीरी और चाण्डाली नए हैं ।
- 'प्राकृत–लंकेश्वर में सोलह और 'प्राकृत चन्द्रिका' में सत्ताईस भेद बताये गए हैं ।'
- आधुनिक भाषा वैज्ञानिक डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने भी अर्धमागधी को प्राकृत का प्रमुख भेद माना है ।

18.2.4– प्राकृत की भाषिक विशेषताएं– प्राकृत की प्रमुख भाषिक विशेषताए इस प्रकार हैं–

1. प्राकृत में पालि के समान ही ध्वनियां हैं–

   ह्रस्व– अ इ उ ए ऑ

   दीर्घ– आ, ई, ऊ, ए, ओ

2. औ के स्थान पर अव हो जाता है द्य जैसे–

   गौर **>** गोर

   कौसल्या **>** कोसल्ला

3. ऊष्म ध्वनियाँ श स ष सभी 'ह' में परिवर्तित हो गयी । जैसे

   दश **>** दह

   दिवस **>** दिवह

   पाषाण **>** पाहान

4. सघोष व्यंजनों के स्थान पर अघोष व्यंजन प्रयुक्त होने लगे –

   नगर **>** नकर

5. 'र' ध्वथ्न का लोप होने लगा उअर उसके स्थान पर 'ल' का प्रयोग होने लगा–

   राजा **>** लाजा

6. 'ऋ' का परिवर्तन 'अ', इ', 'उ', 'रि' के रूप में हो गया । जैसे–

   मृग **>** मग

   घृणा **>** घिना

7. पालि की ही भांति प्राकृत में भी विसर्ग का लोप पाया जाता है । विसर्ग के स्थान पर 'ओ' प्रयुक्त होता है ।

काकः > काओ

वीरः > वीरो

देवः > देवो

8. जिस प्रकार पालि में अंत्य व्यंजन का लोप हो गया था उसी प्रकार प्राकृत में भी वही व्यवस्था बनी रही–

कर्मन > कम्म

सरित > सरि

9. प्राकृत के अव्यय वही थे जो पालि में प्रयुक्त हो रहे थे ।
10. पालि में 'य' व्यंजन प्रयुक्त होता था किन्तु प्राकृत में 'य' के स्थान पर 'ज' प्रयुक्त होने लगा–

यश > जस

योग > जोग

11. संस्कृत व्यंजन को सरल करने के लिए पालि में द्वित्वीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई थी। प्राकृत में इस प्रक्रिया ने नया रूप ले लिया और 'क्षतिपूर्ति दीर्घीकरण' की व्यवस्था लागू हुयी–

मृत्यु > मिच्चु

नृत्य > नच्च

18.2.5– प्राकृत का साहित्य एवं वैयाकरण

प्राकृत में पर्याप्त साहित्य का सृजन हुआ है। प्राकृत के बौद्ध एवं जैन साहित्य के लिए मागधी और अर्धमागधी का प्रयोग किया गया और लौकिक साहित्य में गद्य के लिए शौरसेनी प्राकृत और पद्य के लिए महाराष्ट्री प्राकृत प्रयुक्त हुयी।

प्राकृत के पांच भेद स्वीकार किये गए हैं । पाँचों प्राकृत में अलग–अलग साहित्य का सृजन हुआ है–

1. **शौरसेनी प्राकृत–** शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग संस्कृत नाटकों में गद्य के रूप में कई स्थान पर दिखाई देता है । इस भाषा का प्रयोग मुख्यतः संस्कृत नाटकों के स्त्री पात्र और विदूषकों द्वारा हुआ है । इसका प्राचीनतम रूप अश्वघोष के नाटकों में मिलता है । 'कर्पूरमंजरी' में भी इस भाषा का प्रयोग मिलता है । जैन धर्म के दिगम्बर सम्प्रदाय के साम्प्रदायिक ग्रंथों में भी इस भाषा का प्रयोग हुआ है ।
2. **मागधी प्राकृत–** शौरसेनी की ही भांति मागधी का प्रयोग संस्कृत नाटकों में हुआ तो है लेकिन यह मात्र निम्न श्रेणी का पात्रों द्वारा प्रयुक्त हुयी है। मागधी मगध की भाषा है । अश्वघोष– शारिपुत्र प्रकरण (नाटक) आदि प्रमुख हैं।
3. **अर्धमागधी प्राकृत–** अर्धमागधी का प्रयोग भी संस्कृत नाटकों में हुआ है। 'अश्वघोष' के नाटक 'शारिपुत्र प्रकरण' में मागधी प्राकृत का प्रयोग मिलता है । इसका प्रयोग मुख्यतः जैन साहित्य में मिलता है ।
4. **महाराष्ट्री प्राकृत–** प्राकृत का सबसे अधिक साहित्य महाराष्ट्री प्राकृत में ही मिलता है । महाकवि हाल का गाथा सप्तशती (खंडकाव्य), जयवल्लभ का खंडकाव्य वज्जालग्ग, प्रवरसेन का रावणवहो, सेतुबंध, गउडवहो (महाकाव्य) आदि प्राकृत की अन्य कृतियाँ महाराष्ट्री प्राकृत में ही लिखी गयीं ।
5. **पैशाची प्राकृत**– ऐसा माना जाता है कि पैशाची प्राकृत की कोई भी रचना सुरक्षित नहीं रह सकी । मूल पाठ तो किसी भी रचना के नहीं मिलते हैं। सोमदेव कथा सरित सागर, क्षेमेन्द्र– वृहत्कथा कोश, गुणाढ्य–वृहत्कथा आदि पैशाची प्राकृत के मुख्य ग्रन्थ हैं । हम्मीरमर्दन व कुछ अन्य नाटकों में भी इसका प्रयोग मिलता है ।

प्राकृत वैयाकरण

वररुचि– प्राकृत प्रकाश

बसन्तराज– प्राकृत संजीवनी

चंड– प्राकृत लक्षण

हेमचंद्र– प्राकृत व्याकरण

18.3 अपभ्रंश– अपभ्रंश मध्यकालीन आर्य भाषाओं की तीसरी और अंतिम अवस्था है। इसकी समयावधि 500 ईसवीं से 1000 ईसवीं मानी गयी है ।

18.3.1– परिचय–

जब पालि ने साहित्यिक रूप धारण कर जब उच्च स्थान प्राप्त कर लिया और वह जन सामान्य से दूर हो गयी तब प्राकृत का जन्म हुआ। प्राकृत जन सामान्य की भाषा बन गयी । फिर साहित्य और व्याकरण के स्तर पर भी इसका उत्तरोत्तर विकास होता गया । प्राकृत में लौकिक और धार्मिक दोनों साहित्य पर्याप्त मात्रा में लिखे गए । साहित्य की भाषा बन जाने से इसका प्रचार प्रसार तो हुआ साथ ही यह व्याकरणिक नियमों में भी बंधने लगी । प्राकृत के उपरान्त जनभाषा द्वारा प्रयुक्त की गयी भाषा अपभ्रंश कहलाई ।

18.3.2–अपभ्रंश का नामकरण–

अपभ्रंश का शाब्दिक अर्थ है– भ्रष्ट । अधिकाँश विद्वान अपभ्रंश शब्द का अर्थ 'अपभ्रष्ट' या 'बिगड़ी हुयी' भाषा मानते हैं । अपभ्रंश के नामकरण को लेकर विद्वानों में मतभेद रहे हैं । अपभ्रंश के लिए अवहंस, अवहट, अवहत्थ, ग्रामीण भाषा, आभीरी, आभिरोक्ति आदि नामों का प्रयोग किया गया तो कुछ विद्वानों ने इसके लिए देश भाषा या देशी भाषा का प्रयोग किया । इस सन्दर्भ में प्रमुख मत इस प्रकार हैं–

1. भरतमुनि नें अपभ्रंश को 'देश भाषा' कहा है ।
2. 'दण्डी' नें अपने ग्रन्थ 'काव्यादर्श' में अपभ्रंश को 'आभीरों की भाषा' कहा है ।
3. 'हेमचन्द्र' ने अपभ्रंश को 'ग्राम भाषा' नाम दिया ।

4. चंद्रधर शर्मा गुलेरी नें नागरी प्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित अपने लेख 'पुरानी हिंदी' में अपभ्रंश को 'पुरानी हिंदी' कहा है ।
5. किशोरी दास बाजपेयी ने अपभ्रंश को 'ण ण भाषा' कहा ।
6. रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रन्थ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में अपभ्रंश को 'प्राकृत की अंतिम अवस्था' माना है ।
7. राहुल सांकृत्यायन नें अपने ग्रन्थ 'हिंदी काव्य धारा' में अपभ्रंश को 'हिंदी का प्राचीन रूप' अथवा पुरानी हिंदी कहा है ।

18.3.3– अपभ्रंश के भेद–

अपभ्रंश के भेदों के विषय में विद्वान एकमत नहीं हैं । सभी विद्वानों नें अपने अपने अनुसार इसके भेद बताएं हैं । कुछ प्रमुख विद्वानों के मत इस प्रकार हैं–

1. रुद्रट के 'काव्यालंकार' के टीकाकार 'नमिसाधु' ने अपभ्रंश के तीन भेद किये हैं–
    1. उपनागर अपभ्रंश
    2. आभीर अपभ्रंश
    3. ग्राम्य अपभ्रंश
2. 'मार्कण्डेय' नें अपने ग्रन्थ 'प्राकृत सर्वस्व' में अपभ्रंश के तीन भेद स्वीकार किये हैं–
    1. नागर अपभ्रंश
    2. उपनागर अपभ्रंश
    3. ब्राचड़ अपभ्रंश

    उनके अनुसार नागर गुजरात की, उपनागर राजस्थान की और ब्राचड़ सिंध की बोली थी। उन्होंने माना है कि अपभ्रंश के सत्ताईस भेद तक स्वीकार किये गए हैं। जिनमें ब्राचड़, वैदर्भ, उपनागर, नागर, लाट, पांचाल. मालव, आभीर, कैकेय, टक्क. पांड्य, आदि ।

3. डॉ0 तगारे नें भी अपभ्रंश के तीन भेद किये हैं द्य उनके द्वारा किया गया

विभाजन पहले के विभाजन से पूरी तरह से भिन्न है । उनके अनुसार–

1. पूर्वी अपभ्रंश
2. पश्चिमी अपभ्रंश
3. दक्षिणी अपभ्रंश

उनके अनुसार पूर्वी अपभ्रंश मध्यदेश के पूर्वी भाग में प्रयुक्त होती थी । सरहपा, कणपा लुइपा आदि सिद्ध इसी का प्रयोग करते थे । पश्चिमी अपभ्रंश का सम्बन्ध गुजरात और राजस्थान से था । कालिदास के नाटकों के पात्र इसी भाषा का प्रयोग करते थे और जैन साहित्य के रचनाएं भी इसी भाषा में मिलती हैं । दक्षिणी अपभ्रंश जैन कवियों द्वारा प्रयुक्त होती थी । जसहर चरिउ, महापुराण णयकुमार चरिउ आदि रचनाएँ दक्षिणी अपभ्रंश में लिखी गयी ।

5. डॉ० याकोबी ने 'सनत्कुमार चरिउ' (भूमिका) में अपभ्रंश के चार भेद किये है–

1. पूर्वी अपभ्रंश
2. पश्चिमी अपभ्रंश
3. दक्षिणी अपभ्रंश
4. उत्तरी अपभ्रंश

6. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा प्राकृत के आधार पर ही अपभ्रंश के भेद स्वीकार करते हैं । उन्होंने अपभ्रंश के पांच भेद किये हैं–

1. शौरसेनी अपभ्रंश
2. महाराष्ट्री अपभ्रंश
3. मागधी अपभ्रंश
4. पैशाची अपभ्रंश
5. अर्धमागधी अपभ्रंश

7. डॉ० नामवर सिंह नें 'हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योगदान' नामक पुस्तक में अपभ्रंश के केवल दो क्षेत्रीय भेदों को मान्यता दी है–

1. पूर्वी अपभ्रंश और
2. पश्चिमी अपभ्रंश

8. डॉ० भोलानाथ तिवारी ने अपने ग्रन्थ 'भाषा विज्ञान' में अपभ्रंश के पांच रूपों का उल्लेख किया है–
    1. शौरसेनी अपभ्रंश
    2. ब्राचड़ अपभ्रंश
    3. उपनागर अपभ्रंश
    4. दक्षिणी अपभ्रंश
    5. पूर्वी अपभ्रंश

शौरसेनी अपभ्रंश का विकास शौरसेनी प्राकृत से हुआ है । यह उत्तर में पहाड़ी बोलियों के क्षेत्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश के साथ–साथ कुछ पूर्वी पंजाब, मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग, राजस्थान एवं गुजरात में प्रयुक्त होती थी । डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि इसी का परिनिष्ठित रूप तत्कालीन आर्यभाषी पूरे भारत की भाषा थी । अपभ्रंश साहित्य में इसी भाषा का प्रयोग हुआ है । इसे पश्चिमी अपभ्रंश, नागर अपभ्रंश, नागरिका अपभ्रंश या नगर अपभ्रंश भी कहते हैं । साहित्यिक दृष्टि से यह सबसे समृद्ध भाषा रही है । परमात्म प्रकाश, योगसार, पाहुडदोहा,भाविसयत्त कहा, उपदेश तरंगिणी, कुमार पाल प्रतिबोध आदि इसी में लिखी गयी रचनाएं हैं।

ब्राचड़ अपभ्रंश सिंध के आस–पास प्रयोग में थी । उपनागर अपभ्रंश के अंतर्गत वैदर्भी, लाटी, कैकयी. गौडी, पांड्य, सिंहल आदि का उल्लेख किया जाता है। दक्षिणी अपभ्रंश का सम्बन्ध महाराष्ट्री क्षेत्र से माना जाता है । पूर्वी अपभ्रंश के क्षेत्र बंगाल, बिहार, असम और उड़ीसा हैं । ऐसा माना जाता है कि सिद्धों में सरहपा और कांडपा आदि के दोहे पूर्वी अपभ्रंश में ही लिखे गए हैं ।

18.3.4– अपभ्रंश की भाषागत विशेषताएं–

1. लिंग– संकृत में तीन लिंग थे स्त्रीलिंग, पुल्लिंग और नपुंसकलिंग । अपभ्रंश में स्त्रीलिंग और पुल्लिंग ही शेष बचे । नपुंसकलिंग लुप्त हो गया ।
2. वचन– संस्कृत में तीन वचन थे– एक वचन, द्विवचन और बहुवचन । अपभ्रंश में द्विवचन का स्थान बहुवचन नें लिया । इस प्रकार अपभ्रंश में एकवचन और बहुवचन ही रह गए ।
3. संस्कृत में प्रयुक्त ऐ और औ अपभ्रंश में नहीं मिलते हैं । क्योंकि इनका लोप पाली में ही हो गया था । इनके स्थान पर ए और ओ प्रयुक्त होता था ।
4. ऋ का प्रयोग प्राकृत के ही समान ही रहा । इसका उच्चारण तो 'रि' की तरह हो गया किन्तु सामान्य शब्दों में इसका रूपान्तर अ, इ, उ, ए के रूप में होने लगा ।
5. अपभ्रंश की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी उकार बहुलता है, जैसे–

   मान **>** माणु

   विहान **>** विहाणु

   कारण **>**कारणु

   अंग **>** अंगु
6. कई शब्दों में स्वरलोप भी देखा गया है । जैसे–

   वल्गा **>** वाग

   लज्जा **>** लाज

   अरण्य **>** रण्ण
7. अपभ्रंश में संयुक्त व्यंजन समाप्त हो गए । इससे य, र, ल, व को ज्यादा क्षति हुयी और इनके साथ के व्यंजन का द्वित्वीकरण हो गया । जैसे–

चक्र > चक्क
धर्म > धम्म
कर्म > कम्म
वक्र > वक्क

8. 'न' के स्थान पर सर्वत्र 'ण' और 'य' के स्थान पर सर्वत्र 'ज' का प्रयोग होने लगा । जैसे–

नगर > णयर
यशोदा > जसोदा
यमुना > जमुना

9. 'श' और 'ष' के स्थान पर सभी जगह 'स' हो गया । जैसे–

केश > केस

वेश > वेस

तुष > तुस

शूकर > सूकर

10. 'न', 'य' 'श' और 'ष' के साथ ही 'ट' के स्थान पर 'ड', 'ठ' के स्थान पर 'ढ' और 'उ' के स्थान पर 'व' का प्रयोग होने लगा । जैसे–

घट > घड़

पठ > पढ़

अपर > अवर

11. हलन्त का लोप हो गया । जैसे–

जगत् > जगत,

भगत् > भगत

12. तत्सम शब्द बहुत ही कम होते चले गए और तद्भव शब्दों के संख्या सर्वाधिक हो गयी ।

13. कारक रूप कम हो गए । संस्कृत में एक शब्द के लगभग 24 रूप होते थे अपभ्रंश में सह और सीमित हो गये ।

18.3.5– अपभ्रंश का साहित्य

आदिकाल में सिद्ध, नाथ, जैन, रासो साहित्य के साथ ही फुटकर रचनाओं में भी अपभ्रंश का प्रयोग बहुतायत में दिखाई देता है । अपभ्रंश का प्रयोग तत्कालीन शिलालेखों में पाया जाता है । अपभ्रंश के अधिकाँश प्राप्त साहित्य के रचनाकार जैन थे । जैन साहित्य में प्रबंध और मुक्तक दोनों में रचनाएं मिलती हैं । अपभ्रंश के प्रथम कवि स्वयंभू है । अन्य कवि और उनकी रचनाएं हैं–

स्वयंभू– पउम चरिउ,

पुष्पदंत– महापुराण,

जसहर चरिउ, णयकुमार चरिउ,

धनपाल– भविसयत्तकहा,

कणकामर मुनि– करकंड चरिउ

इनके साथ–साथ अपभ्रंश भाषा में फुटकर दोहों में भी अनेक रचनाएं प्रकाशित हुयी । जैसे–

जोइंदु की परमात्म प्रकाश और योगसार,

देवसेन की श्रावकाचार,

रामसिंह की पाहुड दोहा

अब्दुर्रहमान का सन्देश रासक

18.4– अवहट्ट–

अपभ्रंश का बदला हुआ परिवर्तित स्वरूप अवहट्ट कहलाया । अवहट्ट को अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं के बीच की कड़ी माना जाता है । डॉ० भोलानाथ तिवारी ने अपने ग्रन्थ 'भाषा विज्ञान' में अवहट्ट को अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं की संधिकालीन भाषा कहा है और इसकी समयावधि 900 ई० से 1100 ई० के कुछ

बाद तक निर्धारित की है । साथ ही उन्होंने यह भी माना कि 'साहित्य में इसका प्रयोग 14वीं सदी तक होता रहा ।'

डॉ0 हरदेव बाहरी ने अपने ग्रन्थ 'हिंदी भाषा' में माना है कि– 'ग्यारहवीं से लेकर चौदहवीं शताब्दी के अपभ्रंश कवियों नें अपनी भाषा को अवहट्ट कहा है । इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने अपने ग्रन्थ 'वर्ण रत्नाकर' में किया । 'प्राकृत पैंगलम की भाषा को उसके टीकाकार वंशीधर ने अवहट्ट माना है। 'सन्देश रासक' के रचयिता अद्दहमाण (अब्दुररहमान) ने भी अवहट्ट भाषा का उल्लेख किया है । वे पंजाब के थे । मिथिला के विद्यापति ने अपनी कृति 'कीर्तिलता' की भाषा को अवहट्ट कहा है । उन्होंने लिखा है कि–

'सक्कअ वाणी बुहअण भावइ, पाउअ रस को मम्म न पावइ,
देसिल वअणा सब जण मिट्ठा, तैं तैसन जम्पओ अवहट्ठा

अर्थात संस्कृत भाषा बुद्धिमानों को ही भाति है । प्राकृत भाषा के काव्य में रस का मर्म नहीं मिलता है । देशी भाषा सबको मीठी लगती है इस कारण ही मैं अपनी देशी भाषा अवहट्ट में काव्य लिखता हूँ ।

18.4.2– अवहट्ट की भाषागत विशेषताएं–

1. अवहट्ट की अन्य सभी ध्वनियाँ अपभ्रंश वाली ही थीं । उनके अतिरिक्त 'ऐ' और 'औ' दो नई ध्वनियों का विकास हुआ । इस प्रकार अवहट्ट के स्वर हैं–

   ह्रस्व– अ इ उ ए, ऑ

   दीर्घ– आ ई ऊ ए ऐ ओ औ

2. 'ष' का प्रयो ग बस लिखने तक ही सीमित हो गया इस कारण 'श' के प्रयोग का विस्तार हुआ ।
3. 'ऋ' का प्रयोग भी लिखने में तो 'ऋ' ही था किन्तु बोलने में 'रि' ही रहा ।

4. अन्त्य ए और ओ के स्थान पर ह्रस्व होकर इ और उ प्रयुक्त होने लगा । जैसे–

   परः > परो > परु,

   क्षणे > खने > खनि

5. विदेशी शब्दों का प्रयोग बढ़ गया
6. संयुक्त क्रिया का प्रयोग प्रारम्भ हो गया ।
7. अकारण अनुनासिकता का प्रयोग भी मिलता है । जैसे–

   अश्रु > आँसू

   पाद > पाँव

   वक्र–बंक,

8. स्वर संकोचन की प्रवृत्ति जैसे–

   मयूर > मऊर > मोर

   चतुर्विंशति > चउविस > चौबीस

9. स्त्रीलिंग और पुल्लिंग में काफी रूप सामान हो गए ।
10. व्यंजन द्वित्व् के स्थान पर एक व्यंजन हो गया । उस व्यंजन की अनुपस्थिति से जो क्षति हुयी उसकी पूर्ति के लिए पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो गया । इस प्रक्रिया को 'क्षतिपूर्ति दीर्घीकरण' कहा गया । जैसे–

    मित्त > मीत

    क्म्म > काम

    ठक्कुर > ठाकुर

    भित्ति > भीत

11. अवहट्ट में तद्भव शब्दों की संख्या अधिक है और विदेशी शब्द भी पहले की तुलना में बहुत बढ़ गए ।

18.4.3– अवहट्ट का साहित्य–

सन्देश रासक, उक्ति व्यक्ति प्रकरण, वर्ण रत्नाकर, कीर्तिलता, प्राकृत पैंगलम, बाहूबलि रास, महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर की ज्ञानेश्वरी, रोडा की राउरवेलि आदि अवहट्ट की प्रमुख रचनाएं है।

18.5 – पुरानी हिंदी

पुरानी हिंदी को अपभ्रंश और आधुनिक आर्य भाषाओं के बीच की कड़ी कहा जा सकता है ।

18.5.1 परिचय एवं उत्पत्ति

पुरानी हिंदी के स्वरूप को लेकर विद्वान एक मत नहीं है । तेरहवीं से लेकर चौदहवीं शताब्दी के समय में जब पहली बार अवधी, ब्रज, खड़ी बोली, बिहारी आदि बोलियों के शब्दों का प्रयोग बढ़ रहा था उस भाषिक स्थिति को चंद्रधर शर्मा ने 'पुरानी हिंदी' नाम दिया । डॉ0 हरदेव बाहरी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा' में प्रारम्भिक हिंदी या पुरानी हिंदी के तेरह रूपों का विस्तार से उल्लेख किया है । पूरे विवेचन के उपरान्त वह कहते हैं कि– 'पं० चंद्रधर शर्मा गुलेरी का मत सही जान पड़ता है कि 11वीं शताब्दी की परवर्ती अपभ्रंश (अर्थात अवहट्ट) से पुरानी हिंदी का उदय माना जा सकता है । परन्तु कठिनाई यह है कि उस संक्रांति–काल की सामग्री इतनी कम ही कि उससे किसी भाषा के ध्वनिगत और व्याकरणिक लक्षणों की पूरी–पूरी जानकारी नहीं मिल सकती है ।'

18.5.2– पुरानी हिंदी का नामकरण

आचार्य द्विवेदी ने इसका नामकरण 'उत्तरकालीन अपभ्रंश' के रूप में,

पंडित वासुदेव शरण अग्रवाल नें 'उदीयमान हिंदी' के रूप में और

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह ने 'परवर्ती संक्रांतिकालीन अपभ्रंश' के रूप में किया है।

18.5.3. पुरानी हिन्दी की भाषागत विशेषताएं–

पुरानी हिन्दी की प्रमुख भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. स्वरों का ह्रस्वीकरण और दीर्घीकरण भी मिलता है ।

2. सभी शब्द स्वरांत होने लगे । संस्कृत की व्यंजनांत परंपरा पूरी तरह से समाप्त हो गयी ।
3. शब्दों में उकारान्ताता बढ़ गई इसी कारण पुरानी हिंदी को उकारबहुला भाषा कहा गया है ।
4. ऋ के स्थान पर रि, अ, उ इ ई जैसी अन्य कई ध्वनियाँ आ गई । जैसे–

   ऋतू **>** रितु
   नृत्य **>** नच्च
   अमृत **>** अमिय
5. 'श' का प्रयोग बहुत कम मिलता है । 'ष' के स्थान पर 'ख' पराया जाता है ।
6. र और ल में एकालाप दिखाई देता है । कहीं र का ल तो कहीं ल का र मिलता है । जैसे–

   हरिद्रा **>** हलदि

   सरिता **>** सलिता
7. व और ब का भेद भी समाप्त हो गया ।
8. पुरानी हिंदी की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता क्षतिपूर्ति दीर्घिकरण भी है । अवहट्ट में संयुक्त व्यंजनों का द्वित्तिकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है। पुरानी हिंदी में द्वित्व में भी केवल एक व्यंजन में स्वर बढ़ गया और दूसरा लुप्त हो गया । जैसे–

   कृपण **>** कृपान

   पुत्र **>** पुत्त **>** पूत
9. शब्द के बीच में आने वाले संयुक्त व्यंजन द्वित्त्व हो गए । अवहट्ट में ऐसे उदाहरण बहुत मिलते हैं परन्तु प्रारम्भिक हिंदी में ऐसे बहुत उदाहरण हैं, जैसे–

   दुर्जन **>** दुज्जन

   अक्षर **>** अक्खर

10. पुरानी हिंदी में नए–नए व्याकरणिक नियम विकसित हुए । पुल्लिंग बहुवचन के लिए ए और न प्रयुक्त हुए । जैसे–बेटे, बेटन, स्त्रीलिंग बहुवचन के लिए अन, न्ह, एं, आँ प्रयुक्त हुये, जैसे– सखियन, बीथिन्ह, अखियाँ । स्त्रीलिंग प्रायः इकारांत हैं–आँखि, आगि दुलहिनी आदि ।

18.5.4– पुरानी हिंदी का साहित्य–

आरंभिक हिंदी की प्रमाणिक रचनाओं या स्रोत के बारे में भी विद्वानों में मतभेद है । जहां एक और सरहपा, कह्नपा आदि सिद्धों की रचनाएं हैं वहीं दूसरी ओर पुष्पदंत, स्वयंभू आदि जैन कवियों की रचनाएं हैं । रोडा कवि की 'राउरवेल' के साथ ही विद्यापति और अमीर खुसरो की भाषा में कुछ तत्व मिलते हैं । सन्देश रासक, प्राकृत–पैंगलम, प्राकृत व्याकरण, पुरातन प्रबंध संग्रह, उक्तिव्यक्ति प्रकरण, वर्ण रत्नाकर और कीर्तिलता यही उस समय के प्रमुख ग्रन्थ हैं जिनकी भाषा अवहट्ट एवं पुरानी हिन्दी कही गयी है ।

18.6 सारांश–

इस इकाई में मध्यकालीन आर्यभाषाओं के साथ ही आधुनिक आर्य भाषाओं के पूर्व की स्थिति पुरानी हिंदी पर विस्तार से चर्चा की गयी है । छात्र प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं के बारे में पूर्व ज्ञान रखते हैं । वर्तमान समय में अपने देश में जिन भाषाओं का प्रयोग हो रहा है उनके बीज कहीं न कहीं प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं और मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं में मिलते हैं । इस इकाई में प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिंदी की उत्पत्ति, विकास, साहित्य के परिचय के साथ उनकी भाषागत विशेषताओं पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी है । इस इकाई के अध्ययन से छात्र प्राकृत अपभ्रंश अवहट्ट और पुरानी हिंदी के अलग–अलग स्वरूप को जान और समझ सकेंगें साथ ही वह भाषा के इन सभी रूपों की भिन्न विशेषताओं और उनके साहित्य का अध्ययन भी करेंगे ।

18.7 शब्दावली–

त्रिपिटक– तीन पिटारियाँ (बौद्ध धर्म का प्रमुख ग्रन्थ है जो पालि

भाषा में लिखा गया ।)

विदूषक– मसखरा / हंसी उड़ाने वाला व्यक्ति

टीकाकार– भाष्यकार /टीका करने वाला

परवर्ती– बाद के समय में होने वाला

संक्रान्तिकाल– संक्रमण काल

18.8 संदर्भ ग्रन्थ

हिंदी भाषा– डॉ0 भोलानाथ तिवारी

हिंदी भाषा– डॉ0 हरदेव बाहरी

भाषा विज्ञान– डॉ0 भोलानाथ तिवारी

18.9 प्रश्नावली–

18.9.1– बहुविकल्पीय प्रश्न

1. प्राकृत की समयावधि है–

    1. 500 ई0 पू0 से 1 ई0
    2. एक ई0 से 500 ई0
    3. 500 ई0 से 1000ई0
    4. 1000 ई0 से 1500 ई0

    सही उत्तर– एक ई0 से 500 ई0

2. आचार्य भरत मुनि अपने ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र में कितनी प्राकृतों का उल्लेख किया है–

    1. पांच
    2. छः
    3. सात
    4. आठ

    सही उत्तर– 3– सात

3. अपभ्रंश को 'प्राकृत की अंतिम अवस्था' किसने माना है ?

    1. भरत मुनि
    2. किशोरीदास वाजपयी

3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
4. चंद्रधर शर्मा गुलेरी

सही उत्तर– 3– आचार्य रामचंद्र शुक्ल

4. मध्यकालीन आर्य भाषाओं की तीसरी स्थिति को क्या कहा गया ?

1. पालि
2. अपभ्रंश
3. प्राकृत
4. पुरानी हिंदी

सही उत्तर– 2– अपभ्रंश

5. अवहट्ट को अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं की संधिकालीन भाषा किस भाषा वैज्ञानिक नें कहा–

1. डॉ0 हरदेव बाहरी
2. डॉ0 भोलानाथ तिवारी
3. डॉ0 श्याम सुंदर दास
4. डॉ0 चटर्जी

सही उत्तर– 2– डॉ भोलानाथ तिवारी

18.9.2– लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. प्राकृत की उत्पत्ति के विषय में बताइये ।
2. प्राकृत के कितने भेद हैं ? स्पष्ट कीजिये ।
3. अपभ्रंश के नामकरण पर प्रकाश डालिए ।
4. अपभ्रंश की चार प्रमुख साहित्यिक रचनाओं का उल्लेख कीजिये ।
5. अवहट्ट से आप क्या समझते हैं ?
6. पुरानी हिंदी की भाषागत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

18.9.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मध्यकालीन आर्य भाषाओं से आप क्या समझते हैं ? इसके विभाजन पर विस्तार से प्रकाश डालिए ।

2. प्राकृत की भाषागत विशेषताओं पर विस्तार से डालते हुए इसके साहित्य का परिचय दीजिये।
3. अपभ्रंश भाषा से आप क्या समझते हैं ? इसकी भाषागत विशेषताओं के बारे में लिखते हुए इसकी साहित्यिक स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
4. पुरानी हिंदी से क्या तात्पर्य है ? इसके नामकरण के बारे में बताते हुए इसकी साहित्यिक कृतियों के बारे में लिखिए ।
5. मध्यकालीन आर्य भाषाओं की विशेषताओं के बारे में विस्तार से लिखिए ।

इकाई 19 खड़ी बोली का उद्‌भव और विकास

इकाई की रूपरेखा

19.0 प्रस्तावना

19.1 उद्देश्य

19.2 खड़ी बोली का परिचय

19.3 खड़ी बोली नामकरण

19.4 खड़ी बोली के क्षेत्र

19.5 खड़ी बोली की विशेषताएं

19.6 खड़ी बोली का उद्‌भव और विकास

19.6.1 खड़ी बोली का आरम्भिक स्वरूप

19.6.2 उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली

19.6.3 खड़ी बोली की पत्र–पत्रिकाएं

19.7 सारांश

19.8 शब्दावली

19.9 संदर्भ ग्रन्थ

19.10 प्रश्नावली

19.10.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

19.10.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

19.10.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

19.0 प्रस्तावना–

ऐसा माना जाता है कि 'बाहरी देशों से आने वाले आक्रमणकारी मूलतः इसी प्रदेश से सम्बन्ध रखते थे इस कारण इस बोली को समझना उनके लिए आवश्यक हो गया ।' दिल्ली सल्तनत की स्थापना के बाद स्वाभाविक रूप से यह बोली व्यापक होती गयी तथा इस पर कुछ फारसी प्रभाव भी पड़ने लगा । इस बोली की अलग–अलग शैलियों को हिन्दुई, हिन्दुस्तानी, रेख्ता, उर्दू तथा दक्खिनी हिंदी के नाम से जाना गया। ये सारी शैलियाँ मूलतः कौरवी के ढाँचे पर ही आधारित हैं । यही कौरवी बोली उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से खड़ी बोली के रूप में जानी जाती है।

आज हम जिसे मानक हिंदी के रूप में जानते हैं वह हिंदी की खड़ी बोली का ही परिवर्तित रूप है । खड़ी बोली का जन्म एक हजार ईसवीं के आस–पास माना जाता है । वर्तमान समय में पूरे देश में जिस हिंदी में कार्य व्यवहार हो रहा है, जो संपर्क भाषा के रूप में भौगोलिक रूप से देश में सर्वाधिक रूप में प्रयुक्त हो रही है वह खड़ी बोली हिंदी ही है । छात्रों के लिए हिंदी के साथ ही खड़ी बोली के उद्‌भव और विकास के बारे में जानकारी रखना आवश्यक है । इस इकाई में छात्रों को खड़ी बोली से सम्बन्धित अपने सभी प्रश्नों और जिज्ञासाओं के उत्तर मिल सकते हैं ।

19.1 उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को खड़ी बोली के उद्‌भव और विकास के बारे में जानकारी प्रदान करना है । छात्र भारत में बोली जाने वाली भाषाओं और बोलियों से परिचित हैं । वह जानते हैं कि परिनिष्ठित हिंदी को ही खड़ी बोली कहा जाता है इसलिए छात्रों के लिए खड़ी बोली के उद्‌भव और विकास के बारे में जानना आवश्यक है। इस इकाई के अध्ययन से छात्र निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- खड़ी बोली का परिचय, नामकरण, क्षेत्र
- खड़ी बोली की विशेषताएं
- खड़ी बोली का उद्‌भव और विकास

- खड़ी बोली का आरम्भिक स्वरूप
- उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली
- खड़ी बोली की पत्र–पत्रिकाएं

19.2 खड़ी बोली का परिचय–

खड़ी बोली का उद्‌भव शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप से हुआ यह पश्चिमी हिंदी की प्रमुख बोली है । डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा' में इस पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए लिखा है कि– 'खड़ी बोली' नाम का प्रयोग दो अर्थों में होता है एक तो 'मानक हिंदी' के लिए जिसकी तीन शैलियाँ 'हिंदी', 'उर्दू' और 'हिन्दुस्तानी' हैं और दूसरे उस लोक बोली के लिए जो दिल्ली–मेरठ में तथा आस–पास बोली जाती है । दूसरे अर्थों में प्रयुक्त खड़ी बोली के लिए 'कौरवी' नाम भी प्रयुक्त होता है । यह क्षेत्र पुराना 'कुरु' जनपद है, इसी आधार पर राहुल सांकृत्यायन ने इस बोली को 'कौरवी' नाम दिया था । अच्छा हो कि 'खड़ी बोली' तो मानक हिंदी को कहा जाए और 'कौरवी' इस बोली को ।' खड़ी बोली या कौरवी की मुख्य उपबोलियाँ पश्चिमी कौरवी, पूर्वी कौरवी, पहाड़ताली तथा बिजनौरी है। कौरवी का शुद्ध रूप बिजनौरी को माना जाता है।

19.3 खड़ी बोली का नामकरण–

खड़ी बोली को हिन्दुस्तानी, सरहिन्दी, बोलचाल की हिन्दुस्तानी, कौरवी आदि नाम दिए गए । इस सम्बन्ध में अन्य मत इस प्रकार हैं–

1. कुछ विद्वान 'खड़ी' को 'खरी' अर्थात् शुद्ध से जुड़ा मानते हैं तो कुछ इसे 'पड़ी' अर्थात् उल्टा होने से मानते हैं ।
2. गार्सा द तासी मानते हैं कि खड़ी का सम्बन्ध शुद्ध या खरा होने से है । डॉ0 चन्द्रबली पाण्डेय भी इसी मत से सहमत हैं । इन दोनों का मानना है कि इसका नाम खड़ी बोली इसलिए पड़ा क्योंकि इसे अरबी फारसी से प्रभावित रेख्ता या उर्दू शैली से अलग रूप में प्रस्तुत किया जा सके।

3. लल्लूलाल– सदल मिश्र मानते हैं कि– 'खड़ीबोली का अर्थ खरी अथवा विशुद्ध अर्थात अरबी फारसी शब्दों से सर्वथा रहित भाषा है ।'
4. कामता प्रसाद गुरु के अनुसार 'खड़ी का अर्थ है कर्कश । ब्रज की तुलना में अधिक कर्कश है अतः यह नाम पड़ा ।'
5. किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार आकारान्ता की 'खड़ी' पाई ने इसे यह नाम दिया।
6. बेली ने 'खड़ी' का अर्थ 'प्रचलित' या 'चलती' माना । अर्थात् जो ब्रज आदि को पीछे प्रचलित हो गयी हो ।
7. गिलक्राइस्ट नें 'खड़ी' का अर्थ 'मानक' या 'परिनिष्ठित' माना है। गिलक्राइस्ट और डॉ विश्वनाथ प्रसाद के अनुसार 'खड़ी बोली का अर्थ टकसाली अर्थात स्टैण्डर्ड भाषा हैं।'
8. 'अब्दुल हक' ने 'खड़ी' का अर्थ 'गँवारू' माना है।
9. डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा 'खड़ी' शब्द को कठोरता का द्योतक मानते हैं । ब्रज भाषा की सुकोमल अभिवृत्तियों से अंतर रेखांकित करने के लिए इसका प्रयोग किया गया । उनके अनुसार 'ब्रज भाषा की अपेक्षा यह बोली वास्तव में खड़ी–खड़ी (कर्कश) लगती है । कदाचित इसी कारण इसका नाम खड़ी बोली पड़ा ।'
10. सुनीति कुमार चटर्जी इस बोली को 'खड़ी बोली' कहने का कारण मानते हैं कि यह अकारांत या आकारांत बोली है जबकि ब्रज, कन्नौजी और बुन्देलखंडी जैसी पश्चिमी उपभाषा की अन्य बोलियाँ ओकारांत या इकारांत हैं । खड़ी पाई के प्रयोग के कारण ही यह 'खड़ी बोली' कहलाई ।
11. डॉ0 हरदेव बाहरी अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा' में खड़ी बोली को 'कौरवी' कहे जाने की पक्षधरता करते हैं और मानते है कि 'कुरु' जनपद में इसका प्रयोग होने के कारण ही इसका नाम कौरवी सबसे अच्छा और सही है ।
12. कुछ विद्वानों ने ऐसा भी माना कि खड़ी बोली से तात्पर्य इसके खरेपन से है ।

19.4 खड़ी बोली के क्षेत्र

खड़ी बोली मूलतः रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, गाजियाबाद सहारनपुर, देहरादून का मैदानी भाग, पूर्वी अम्बाला और पूर्वी पटियाला में बोली जाती है । इसका क्षेत्र हरियाणी, ब्रज और पहाड़ी बोलियों के बीच में पड़ता है ।

19.5. खड़ी बोली की विशेषताएं–

1. खड़ी बोली में मूर्धन्य ध्वनियों की अधिकता है । जैसे– देणा, लेणा।
2. खड़ी बोली की सबसे प्रमुख विशेषता इसका आकारांत होना है, जैसे– आया, गया, खड़ा, बैठा करता आदि ।
3. खड़ी बोली में 'ऐ' और 'ओ' का उच्चारण क्रमशः 'ए' और 'ओ' की तरह होता है । 'औ' का उच्चारण ओ के रूप में ध्वनित होता है। जैसे–

   और **>** होर

   औरत **>** ओरत
4. स्वरों के बहुत अधिक दीर्घ न होने के कारण दीर्घ स्वरों के बाद भी व्यंजन का द्वित्त्व रूप होता है । जैसे– सज्जा, लज्जा आदि ।
5. ह्रस्व स्वर शब्द के अंत में नहीं आने के कारण उच्चारण में परिवर्तन दिखाई देता है, जैसे–

   पशु **>** पशू

   निधि **>** निधी
6. कभी–कभी प्रारम्भ के स्वर लुप्त हो जाते हैं, जैसे–

   इकठ्ठ **>** कट्ठा,

   ज्यादा **>** यादा
7. महाप्राण का अल्पप्राण की नयी प्रवृत्ति का विकास हुआ । अनेक स्थानों पर महाप्राण ध्वनियों के स्थान पर अल्पप्राण ध्वनियों का प्रयोग मिलता है, जैसे–

झूठ > झूट

धोखा > धोका

8. अनेक शब्दों में 'न' के स्थान पर ण मिलता है । जैसे–

   लेन–देन > लेण–देण

9. 'ल' के स्थान पर 'लल्ल' के प्रयोग भी मिलता है, जैसे–

   बालक > बल्ल्क

10. हरियाणवी और पंजाबी की तरह खड़ी बोली में स्त्रीलिंग के लिए प्रयुक्त होने वाला प्रत्यय 'इन' के स्थान पर 'अन' मिलता है । जैसे–

    नागिन > नागन

11. देवनागरी में बलाघात हिंदी की अन्य बोलियों की तुलना में अधिक होता है। इससे स्वर प्रायः लुप्त हो जाता है, जैसे–

    सियाना > स्याणा

12. कारकीय रूप मानक हिंदी जैसे ही हैं ।

19.6 खड़ी बोली का उद्‌भव और विकास–

खड़ी बोली 'एक मिश्रित बोली है, जिसमें प्रमुख बातें तो कौरवी की हैं, किन्तु साथ ही पंजाबी, बांगरू, ब्रज के तत्व भी अपने मूल या परिवर्तित रूप में समाहित हैं । इस प्रकार यह मध्यदेश के भाषा–रूपों पर आधारित है और इसे उत्पत्ति की दृष्टि से शौरसेनी अपभ्रंश या उसके संधिकालीन रूप शौरसेनी अवहट्ट से सम्बद्ध कर सकते हैं । खड़ी बोली में प्रयुक्त रूपों के बीज तो हमें प्राकृत–काल में ही मिलने लगते हैं । अपभ्रंश–काल में आकर वे और स्पष्ट हो गए थे ।' भाषा वैज्ञानिकों नें खड़ी बोली का जन्म 1000 ई० के आस–पास स्वीकार किया है । अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसे आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिककाल में विभाजित किया जा सकता है ।

19.6.1 खड़ी बोली का आरम्भिक स्वरूप–

आदिकालीन रचनाओं में खड़ी बोली की प्रारम्भिक प्रवृत्तियां दिखाई पड़ती हैं । सिद्धों की भाषा, जो आठवीं से लेकर ग्यारहवीं–बारहवीं शताब्दी तक जनभाषा के रूप में प्रचलित थी, में खड़ी बोली के बहुत से शब्द प्रयुक्त हुए दिखाई देते हैं । नाथ सम्प्रदाय में दसवीं से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक जिस जनभाषा में रचनाएं लिखी गयी उनमें खड़ी बोली की झलक दिखाई देती है । सिद्धों में सरहपा, शबरपा, लुइपा, कांडपा आदि और नाथों में गोरखनाथ, चर्पटानाथ, गहिनीनाथ, जलंधरनाथ आदि प्रमुख हैं। इनकी भाषा में 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग, अनुनासिक का प्रयोग, ईकारान्त और आकारान्त के प्रयोग खड़ी बोली के आरंभिक स्वरूप के दर्शन होते हैं। सिद्धों और नाथों की भाषा के साथ ही अमीर खुसरो की भाषा इस दृष्टि से मुख्य है ।

आधुनिक काल में भाषा नें जो स्वरूप ग्रहण किया उसी भाषा का प्रयोग चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अमीर खुसरो नें किया। अमीर खुसरो को हिंदी में 'सबसे पहले खड़ी बोली के प्रयोगकर्ता' के रूप में जाना जाता है। आदिकाल के साहित्य में खड़ी बोली के प्रारम्भिक स्वरूप के दर्शन होते हैं और भक्तिकाल आते–आते यह और अधिक परिपक्व हो जाती है।

भक्तिकाल के प्रारम्भ में संत साहित्य की सधुक्कड़ी या पंचमेल खिचड़ी भाषा में खड़ी बोली भी प्रमुखता से प्रयुक्त हुयी है । कबीर, नानक, दादू, दयाल, मलूकदास, नानक, नामदेव, ज्ञानदेव आदि संत कवि देश भर में अलग–अलग स्थानों से आते हैं, जिनकी भाषा कई भाषाओं के शब्दों से बनी हुयी मिलती है । कबीर के दोहे जन–जन में प्रिय रहे हैं । उनकी रचनाओं खड़ी बोली की स्पष्ट छाप दिखाई देती है । रहीम के दोहों के संदर्भ में भी यही बात कही जा सकती है । आगे चलकर रीतिकाल में यद्यपि ब्रजभाषा का एकाधिकार रहा किन्तु उसी समय यारी साहब, पलटूसाहब, दरिया साहब आदि जैसे कवि भी हुए जो निरन्तर खड़ी बोली के समतुल्य भाषा का प्रयोग

कर रहे थे । डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि– 'मध्यकाल में ध्वनियों की दृष्टि से अक्षरांत 'अ' (कुछ अपवादों को छोड़कर) समाप्त हो गया । ..पढ़े लिखों की खड़ी बोली में, इस काल के अंत तक क ख ग ज फ ये पांच नए व्यंजन फारसी से आ गए । फारसी के चलन के कारण ही इनका प्रवेश हुआ । रूपों की दृष्टि से खड़ीबोली अपभ्रंश आदि के रूपों से काफी मुक्त हो गयी ।'

19.6.2 उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली

उन्नीसवीं शताब्दी मे खड़ी बोली की साहित्यिक भाषा बनने की भूमिका तैयार हुई । आधुनिक काल का आरम्भ ही खड़ी बोली की उन्नति से माना जाता है । यह वह समय था जब मुख्धारा से ब्रज भाषा का अवसान हो रहा था। चूँकि ब्रजभाषा कोमल भावनाओं और श्रृंगार की अभिव्यक्ति के लिए जानी–पहचानी जाती थी लेकिन अब समय श्रृंगारिक अभिव्यक्ति का नहीं रहा गया था । 'ब्रजभाषा में गद्य साहित्य की बहुत कमी रही है । इधर खड़ी बोली की उर्दू शैली में और दक्खिनी हिंदी में काफी गद्य रचनाएं प्रकाश में आने लगीं और उधर अंग्रेजी में गद्य साहित्य की एक लम्बी परम्परा सामने आई । इनसे हिंदी लेखकों को भी प्रेरणा मिली। परिवार, समाज, राजनीति, देश–विदेश की चर्चा, दैनिक जीवन की घटनाएँ पद्य में तो लिखी नहीं जा सकती थीं, अतः खड़ी बोली को उबरने का अवसर मिल गया । प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना ने गद्य साहित्य को पनपने में उत्साहित किया । धर्म, दर्शन, शिक्षा, ज्ञान–विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें और पत्र–पत्रिकाएँ छपने लगीं ।'

आधुनिक काल के प्रारम्भ में खड़ी बोली के क्षेत्र में सबसे बड़ा योगदान फोर्ट विलियम कॉलेज का माना जाता है । इस कॉलेज के प्रिंसिपल जॉन गिलक्रिस्ट खड़ी बोली के हिमायती थे । उन्हीं की प्रेरणा पा कर फोर्ट विलियम कॉलेज के लल्लूलाल और सदल मिश्र नें खड़ी बोली में रचना की । इनके अतिरिक्त इंशा अल्ला खां और सदासुख लाल नें भी खड़ी

बोली में रचनाएं की । यह 'खड़ी बोली गद्य के चार उन्नायक' कहे जाते हैं। इनके द्वारा रचित क्रमशः प्रेमसागर, नासिकेतोपाख्यान, सुखसागर और रानी केतकी की कहानी की भाषा का अपना अलग महत्त्व है ।

खड़ी बोली के विकास में अप्रत्यक्ष रूप में ईसाई मिशनरियों नें भी बहुत बड़ा योगदान दिया । इसाई मिशनरियों नें अपने धर्म प्रचार के लिए हिंदी भाषा को चुना । क्योकि वह जानते थे कि यही वह भाषा है जो भारत में सर्वाधिक प्रचलित है और इस भाषा का प्रयोग कर वह सरलता से जन समुदाय के निकट अपनी बात पहुंचा सकते हैं। इस कारण उन्होंने बाइबिल के कुछ अंशों का अनुवाद सरल हिंदी में करवाया और उसे पर्चे और छोटी–छोटी पुस्तिका के रूप में छपवा कर उसका निःशुल्क वितरण करवाया । इससे अप्रत्यक्ष रूप में ही सही पर देवनागरी में लिखी हुयी सरल खड़ी बोली का खूब प्रचार–प्रसार हुआ । इसी के साथ साथ सामाजिक धार्मिक सुधार आंदोलनों नें भाषा के स्तर पर योगदान दिया।

'ब्रह्मसमाज' के संस्थापक राजा राम मोहन राय नें 'वेदान्त सूत्र का हिंदी में अनुवाद किया और 'बंगदूत' अखबार निकाल कर उसके माध्यम से हिंदी और देवनागरी के पक्ष में कार्य किया । 'आर्यसमाज' के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती नें 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना खड़ी बोली हिंदी में की। श्रद्धाराम फिल्लौरी नें 'हिन्दू धर्मसभा' का गठन किया और 'सत्यामृतप्रवाह में खड़ी बोली का प्रयोग किया । उनके द्वारा लिखी गयी आरती 'ओउम जय जगदीश हरे' आज भी जन–जन में अत्यंत लोकप्रिय है। इस काल तक आते–आते खड़ी बोली भाषित रूप में समृद्ध होती हुयी और अधिक सुदृढ़ होती गयी । अब तक हमारी भाषा पत्र–व्यवहार, समाचार–पत्र एवं साहित्य की ही भाषा थी, अब उसे विज्ञान, वाणिज्य, विधि आदि का भी माध्यम बनती चली गयी ।

19.6.3 खड़ी बोली की प्रारम्भिक पत्र–पत्रिकाएं

हिंदी का पहला पात्र उदंत मार्तंड 1826 में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ किन्तु कुछ समय बाद ही इसका प्रकाशन बंद हो गया। इसके उपरान्त कलकत्ता से ही 1828 में बंगदूत प्रकाशित हुआ यह भी एक वर्ष बाद ही 1929 में सरकार द्वारा बंद करवा दिया गया। 1844 में राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द नें 'बनारस अखबार' का प्रकाशन किया और इसके बाद 1854 में कलकत्ता से ही प्रकाशित होने वाले 'समाचार सुधा वर्षण' नामक दैनिक पत्र प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त नवीनचंद्र राय की पत्रिका 'ज्ञान प्रकाशिनी' जैसी पत्रिकाओं नें खड़ी बोली के प्रचार प्रसार में मुख्य भूमिका निभाई। यद्यपि इनकी भाषा संस्कृत प्रधान होने के साथ ही ठेठ और ब्रज के प्रयोग से युक्त थी फिर भी यह अपना एक अलग स्वरूप लेने लगी थी ।

उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने फोर्ट विलियम कॉलेज के लिए और सरकारी स्कूलों के लिए राजाभोज का सपना, भूगोल हस्तमालक, इतिहास तिमिरनाशक, मानवधर्म सार, हिन्दुस्तान के पुराने राजाओं का इतिहास आदि किताबें लिखीं । इन किताबों के माध्यम से शिक्षा के क्षेत्र में खड़ी बोली का प्रवेश हुआ । जहां राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द उर्दू के हिमायती माने जाते हैं वहीं राजा लक्ष्मण सिंह विशुद्ध हिंदी के पक्षधर थे । उन्होंने शकुन्तला नाटक और मेघदूत के हिदी अनुवाद विशुद्ध हिंदी में ही किया । उनका लक्ष्य था शुद्ध हिंदी, जिसमें उर्दूपन न हो । क्योंकि वह उर्दू को मुस्लिमों की बोली मानते थे ।

1873 में भारतेंदु हरिश्चंद्र नें व्यवहारिक खड़ी बोली में हरिश्चंद्र मैगजीन का प्रकाशन किया । इसके अतिरिक्त हरिश्चंद्र चंद्रिका, बालाबोधिनी आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके निबंधों की भाषा खड़ी बोली थी । इन पत्रिकाओं के साथ साथ उनके द्वारा रचित नाटक, निबंध, अनुवाद, उपन्यास आदि की भाषा भी खड़ी बोली ही थी । भाषा के प्रति उनके मन में कोई दुराग्रह नहीं था इस कारण उन्होंने शिव प्रसाद सितारेहिंद की अरबी–फारसी प्रधान हिंदी और राजा लक्ष्मण प्रसाद की संस्कृतनिष्ठ हिंदी के बीच का रास्ता निकाला । उन्होंने न पंडिताऊपन को प्रमुखता दी और न ही मौलवी

शैली का प्रयोग किया । इन भाषाओं के कुछेक शब्दों को ग्रहण कर भाषा का हिंदीपन बनाए रखना उनकी प्राथमिकता थी । भारतेंदु युग में बालकृष्ण भट्ट नें 'हिंदी प्रदीप', बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' नें 'आनंदकादम्बिनी' प्रताप नारायण मिश्र नें 'ब्राह्मण' जैसे पत्रों द्वारा इस क्षेत्र में अपना योगदान दिया।

इसके उपरान्त द्विवेदी युद में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी नें 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से खड़ी बोली आन्दोलन चला दिया । द्विवेदी युग से पहले गद्य की भाषा तो खड़ी बोली थी किन्तु पद्य की भाषा भी तक ब्रज ही बनी हुयी थी । द्विवेदी जी के अथक प्रयासों के फलस्वरूप ही कविता की भाषा खड़ी बोली बन सकी ।

19.7 सारांश–

इस इकाई में खड़ी बोली के विषय में विस्तार पूर्वक चर्चा की गयी है। इस इकाई में छात्र खड़ी बोली का परिचय प्राप्त करने के साथ ही उसके नामकरण सम्बन्धी विवाद के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। इसके साथ ही वह खड़ी बोली के प्रयोग क्षेत्र और उसकी भाषिक विशेषताओं को जान और समझ सकेंगे। खड़ी बोली की उत्पत्ति से लेकर उसके आरंभिक स्वरूप से होते हुए आधुनिक काल तक उसकी व्याप्ति की विकास यात्रा के बारे में जानना भी छात्रों के लिए आवश्यक है अतः इस इकाई में इस सभी पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है । पत्रकारिता हमारे समाज का प्रमुख व अभिन्न अंग है । इस इकाई में खड़ी बोली की प्रारम्भिक पत्र–पत्रिकाओं के बारे में भी बताया गया है । इस प्रकार खड़ी बोली के उद्भव एवं विकास से सम्बन्धित सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर छात्रों को इस इकाई में प्राप्त हो सकेंगे ।

19.8 शब्दावली–

आक्रमणकारी– आक्रमण करने वाला

रेख्ता– अरबी फारसी से मिश्रित हिंदी में एक तरह की गजल / एक प्रकार की भाषा

ढांचा– किसी वस्तु की रचना का प्रारम्भिक स्वरूप

मानक– नापने के मानदंड

सधुक्कड़ी भाषा– साधुओं की भाषा

उन्नायक– उन्नत करने वाला / ऊपर उठाने वाला

19.9 संदर्भ ग्रन्थ

हिंदी भाषा– डॉ0 भोलानाथ तिवारी

हिंदी भाषा– डॉ0 हरदेव बाहरी

हिंदी– उद्‌भव, विकास और रूप– डॉ0 हरदेव बाहरी

भाषा विज्ञान– डॉ0 भोलानाथ तिवारी

19.10 प्रश्नावली

19.10.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

1. खड़ी बोली का प्रमुख क्षेत्र कौन सा है ?
    1. मथुरा
    2. आगरा
    3. झांसी
    4. मेरठ

    सही उत्तर– 4. मेरठ

2. भाषा वैज्ञानिकों नें खड़ी बोली का जन्म कब से माना है ?
    1. 900 ई0
    2. 1000 ई0

3. 1100 ई0
4. 1500 ई0 पू0

सही उत्तर– 2. 1000 ई0

3. खड़ी बोली के चार उन्नायकों में निम्नलिखित में कौन नहीं है ?
   1. लल्लू लाल
   2. सदासुख लाल
   3. सदल मिश्र
   4. लक्ष्मण सिंह

सही उत्तर– 4.लक्ष्मण सिंह

4. निम्नलिखित में से कसी पत्रिका का सम्पादन भारतेंदु हरिश्चंद्र नें नहीं किया ??
   1. हरिश्चंद्र चन्द्रिका
   2. हरिश्चंद्र मैगजीन
   3. बालाबोधिनी
   4. ब्राह्मण

सही उत्तर– 4. ब्राह्मण

5. निम्नलिखित में से सरस्वती पत्रिका का सम्पादन किसने किया ?
   1. भारतेंदु हरिश्चंद्र
   2. प्रताप नारायण मिश्र
   3. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी
   4. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

सही उत्तर– 3. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

19.10.2. लघु उत्तरीय प्रश्न

1. खड़ी बोली के विषय में आप क्या जानते है ? संक्षिप्त परिचय दीजिये ।
2. खड़ी बोली के क्षेत्रों के बारे में बताइये ।
3. खड़ी बोली की पांच भाषिक विशेषताओंके बारे में लिखिए ।
4. खड़ी बोली की किन्हीं चार पत्रिकाओं के के बारे में बताइये ।

19.10.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'खड़ी बोली के उद्‌भव एवं विकास' पर निबंध लिखिए ।
2. खड़ी बोली का परिचय देते हुए विस्तार से इसकी भाषिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।
3. खड़ी बोली के नामकरण के बारे में बताते हुए इसके आरम्भिक स्वरूप पर विस्तार से बताइये ।
4. खड़ी बोली का संक्षिप्त परिचय देते हुए इसके क्षेत्रों के बारे में लिखिए । साथ ही खड़ी बोली की पत्र–पत्रिकाओं पर विस्तार से प्रकाश डालिए ।

इकाई–20 हिंदी और उसकी प्रमुख बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार

रुपरेखा

20.0 प्रस्तावना

20.1 उद्देश्य

20.2 हिंदी की उत्पत्ति

20.3 हिंदी भाषा का विस्तार क्षेत्र

20.4 हिंदी की उपभाषाएँ

20.5 हिंदी की प्रमुख बोलियाँ–

बोलियों के क्षेत्र

बोलियों का साहित्य

बोलियों की विशेषताएं

20.6 सारांश

20.7 शब्दावली

20.8 संदर्भ ग्रन्थ

20.9 प्रश्नावली

20.9.1. बहुविकल्पीय प्रश्न

20.9.2. लघु उत्तरीय प्रश्न

20.9.3. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

20.0– प्रस्तावना–

'हिंदी और उसकी प्रमुख बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार' नामक इस इकाई में हिंदी के विस्तृत स्वरूप पर विस्तार से चर्चा की गयी है । वर्त्तमान समय में जो हिंदी जानी समझी व बोली जा रही है वह कई उपभाषाओं और बोलियों का मिला जुला रूप है । हिंदी के प्रारंभिक रूप तो पालि में ही मिलने लगे थे । आगे चलकर प्राकृत तक आते–आते इसमें और भी अधिक वृद्धि हुयी । माना जाता है कि अपभ्रंश काल में 'ये रूप चालीस प्रतिशत से भी अधिक' हो गए । मुख्य रूप से हिंदी का प्रारम्भ 1000 ईसवीं सन से माना जाता है। तब से हिंदी की विकास यात्रा अनवरत चल रही है । हिंदी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल की स्वर्णयुग कहा जाता है, यह युग में अवधी और ब्रज भाषा का उत्कर्ष काल रहा है । आगे चलकर रीतिकालीन दो सौ वर्षों तक ब्रजभाषा का एकाधिकार रहा है । उसके उपरान्त खड़ी बोली का वर्चस्व सामने आया । इनके साथ ही साथ अन्य बोलियों का भी किसी न किसी स्तर पर साहित्यिक रूप से जुडी रहीं । इन सभी बोलियों की अपनी अलग निजी विशिष्टताएं हैं । इस इकाई में प्रत्येक बोली के क्षेत्र, साहित्य, विशेषता आदि मुख्य बातों पर विस्तार से चर्चा की गयी है ।

20.1– उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को हिंदी के स्वरूप से भली प्रकार परिचित कराना है । छात्र अब तक यह जान और समझ चुके हैं कि हिंदी एक भाषा नहीं है बल्कि वह कई बोलियों का समुच्चय है । अब छात्रों के लिए इस समुच्चय की व्याख्या को जानना और समझना आवश्यक है । इस इकाई में हिंदी की पाँचों उपभाषाओं और उनकी बोलियों पर प्रकाश डाला गया है । इस इकाई के अध्ययन से छात्र हिंदी की उपभाषाओं और उन उपभाषाओं की बोलियों के बारे में विस्तार से जान सकेंगे ।

- हिंदी की उत्पत्ति
- हिंदी भाषा का विस्तार क्षेत्र
- हिंदी की उपभाषाएँ

- हिंदी की प्रमुख बोलियाँ और उनके क्षेत्र

20.2– हिंदी का उद्‌भव एवं विकास–

अधिकाँश भाषा वैज्ञानिकों नें माना है कि हिंदी का उद्‌भव शौरसेनी, अर्धमागधी और मागधी अपभ्रंश से हुआ है । क्योंकि हिंदी का स्वरूप पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजथानी हिंदी और बिहारी हिंदी से ही स्थापित हुआ माना जाता है। इस तरह से हिंदी का उद्‌भव 1000 ईसवीं सन से निर्धारित किया जाता है। डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें हिंदी शब्द का प्रयोग तीन अर्थों में स्वीकार किया है । उनके अनुसार 'हिंदी' शब्द अपने विस्तृततम अर्थ में हिंदी प्रदेश में बोली जाने वाली बोलियों का द्योतक है । हिंदी साहित्य के इतिहास में 'हिंदी' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में होता है जहाँ ब्रज, अवधी, डिंगल, मैथिली, खड़ी बोली आदि सभी में लिखित साहित्य का विवेचन किया जाता है ।

भाषाविज्ञान में प्रायः 'पश्चिमी हिंदी' और 'पूर्वी हिंदी' को ही हिंदी मानते हैं । ग्रियर्सन नें इसी आधार पर हिंदी प्रदेश की अन्य उपभाषाओं को राजस्थानी, पहाड़ी, बिहारी कहा था जिनमें 'हिंदी' शब्द का प्रयोग नहीं हैं, किन्तु अन्य दो ओ हिंदी मानने के कारण 'पश्चिमी हिंदी' तथा 'पूर्वी हिंदी' नाम दिया था । इस अर्थ में 'हिंदी' आठ बोलियों (ब्रज, खड़ीबोली, बुन्देली, हरियाणी, कन्नौजी, अवधी, बघेली, छतीसगढ़ी) का सामूहिक नाम है । तीसरे अर्थ में 'हिंदी' शब्द का संकुचित अर्थों में प्रयोग होता है । खड़ी बोली साहित्यिक हिंदी जो आज हिंदी प्रदेशों की सरकारी भाषा है पूरे भारत की राज्यभाषा है, समाचार पत्रों, फिल्मों में जिसका प्रयोग होता है तथा जो हिंदी प्रदेश के शिक्षा का माध्यम है और जिसे परिनिष्ठित हिंदी' या 'मानक हिंदी' आदि नामों से भी अभिहित करते हैं ।

20.3.–हिंदी भाषा का विस्तार क्षेत्र–

डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें अपने ग्रन्थ 'हिंदी भाषा' में हिंदी के भौगोलिक विस्तार पर प्रकाश डालते हुए इसे तीन क्षेत्रों में विभक्त किया है । उनके अनुसार हिंदी भाषा के प्रयोग क्षेत्रों को इस प्रकार समझना चाहिए–

(क)– हिंदी क्षेत्र– इसमें मुख्य रूप से हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा बिहार आते हैं ।

(ख) अन्य भाषा क्षेत्र– इस क्षेत्र मेनन कर्नाटक तथा आंध्र के दक्खिनी हिंदी वाले भाग के साथ ही कलकत्ता, शिलांग, बम्बई तथा अहमदाबाद आदि भारत के अहिन्दी भाषी क्षेत्र के कुछ बड़े–छोटे क्षेत्र आते हैं ।

(ग) भारतेतर क्षेत्र– इसके अंतर्गत मारिशस, फीजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड जैसे देश आते हैं, जहां हिंदी भाषी लोगो के काफी संख्या में बस जाने से हिंदी का विकास हुआ । इसके अतिरिक्त नेपाल के सीमावर्ती इलाके, इंग्लैण्ड, अफ्रीका में गयाना, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका के साथ–साथ हांगकांग, मलेशिया, सिंगापुर जैसे पूर्वी देशों तक हिंदी भाषियों के पहुँचने से क्षेत्र विस्तार हुआ है ।

डॉ0 हरदेव बाहरी लिखते है कि– 'भारत की भाषाओं पर बहुत व्यापक और सर्वाधिक कार्य करने वाले विद्वान सर जार्ज ग्रियर्सन नें बीसवीं शताब्दी के शुरू में हिंदी का क्षेत्र अम्बाला (तब पंजाब) से लेकर पूर्व में बनारस तक और उत्तर में नैनीताल की तलहटी से लेकर दक्षिण में बालाघाट (मध्य प्रदेश) तक निश्चित किया था । ..किन्तु बाद में परिस्थितियों नें हिंदी को एक बहुत बड़े क्षेत्र में फैलने का अवसर दिया है। अब इन क्षेत्रों में मारवाड़ी–जयपुरी आदि (राजस्थान में), मगही–मैथिली (बिहार में) और कुमांयूनी–गढ़वाली (उत्तर प्रदेश में) बोलियाँ तो हैं, सब की भाषा हिंदी ही है ।

20.4– हिंदी की उपभाषाएँ–

भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार किसी भी भाषा और बोली के बीच एक और कड़ी होती है उसे 'उपभाषा' कहते हैं । हिंदी की उपभाषाओं को पांच भागों में विभक्त किया गया है । इन पाँचों उपभाषाओं की अपनी–अपनी अलग कुछ बोलिया हैं जिनकी समेकित संख्या 18 है । प्राकृत के पांच प्रकार हैं उन्हीं के आधार पर अपभ्रंश के भी पांच भेद किये गए हैं । अपभ्रंश के उन्हीं भेदों से आगे चलकर हिंदी की पांच उपभाषाओं का विकास हुआ । इस विकास की प्रक्रिया को हम इस प्रकार समझ सकते हैं–

प्राकृत	अपभ्रंश	हिंदी की उपभाषाएँ
राजस्थानी प्राकृत >	राजस्थानी अपभ्रंश >	राजस्थानी हिंदी
शौरसेनी प्राकृत >	शौरसेनी अपभ्रंश >	पश्चिमी हिंदी
अर्धमागधी प्राकृत >	अर्धमागधी अपभ्रंश >	पूर्वी हिंदी
मागधी प्राकृत >	मागधी अपभ्रंश >	बिहारी हिंदी
खस प्राकृत >	खस अपभ्रंश >	पहाड़ी हिंदी

इस प्रकार हिंदी में राजस्थानी, पश्चिमी, पूर्वी, बिहारी और पहाड़ी ये पांच उपभाषाएँ मानी जाती हैं । इन पाँचों की उत्पत्ति अपभ्रंश से हुयी है ।

20.5– हिंदी की बोलियाँ

जैसा कि अभी बताया गया कि हिंदी किसी एक भाषा का नाम नहीं है बल्कि वह अट्ठारह बोलियों का समुच्चय है । किसी एक भाषा क्षेत्र में कई–कई बोलियाँ होती हैं और प्रत्येक उपभाषा की अपनी–अपनी बोलियाँ हैं, जिनका वर्णन इस प्रकार है–

1. **राजस्थानी हिंदी–**

   मारवाड़ी (पश्चिमी राजस्थानी)
   मालवी (दक्षिणी राजस्थानी)
   मेवाती (उत्तरी राजस्थानी)
   जयपुरी (ढूंढ़ाणी) (पूर्वी राजस्थानी)

2. **पश्चिमी हिंदी–**

   कौरवी (खड़ी बोली)
   ब्रज भाषा
   हरियाणवी
   बुन्देली
   कन्नौजी

3. **पूर्वी हिंदी–**

अवधी

बघेली

छतीसगढ़ी

4. **बिहारी–**

भोजपुरी

मैथिली

मगही

5. **पहाड़ी–**

गढ़वाली

कुमायूनी

नेपाली

इनका विस्तार से वर्णन इस प्रकार है–

क– राजस्थानी उपभाषा–

नाम से ही स्पष्ट है कि राजस्थानी राजस्थान क्षेत्र के लिए प्रयुक्त शब्द है । डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें माना है कि– 'कैरे नें 19वीं सदी के प्रथम चरण में भाषा सर्वेक्षण करवाया था जिसमें बीकानेरी, मारवाड़ी, उदयपुरी, हाड़ौती और मालवी के नाम आये द्य कुछ लोग राजस्थानी के लिए डिंगल या मारवाड़ी नाम का प्रयोग भी करते हैं किन्तु वास्तव में यह दोनों ही नाम राजस्थानी के सीमित क्षेत्र को अभिव्यक्त करते हैं । हिंदी भाषा के निरंतर सम्पर्क में रहने के कारण राजस्थानी और हिंदी में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया । राजनीतिक और सांस्कृतिक जागृति के साथ राजस्थान के लोगों का ध्यान अब अपनी भाषा की उन्नति की ओर गया । हिंदी की इस उपभाषा का क्षेत्र सम्पूर्ण राजस्थान और मालवा जनपद के साथ–साथ सिंध के कुछ क्षेत्रों तक फैला हुआ है । इस वर्ग की बोलियों को बोलने वालों की संख्या लगभग चार करोड़ से भी अधिक मानी गई है । साहित्यिक दृष्टि से यह बहुत समृद्ध है । चन्दवरदाई, बाँकीदास, सूर्यमल्ल आदि ने इसका अच्छा प्रयोग किया है। 'ढोला मारुरा दूहा' और 'बेली क्रिसन रूक्मिणी री', आदि राजस्थानी के ग्रन्थ हैं । इनके साथ ही संत साहित्य में भी राजस्थानी भाषा के शब्द मिलते हैं । मीरा, दादू,

हरिदास की भाषा भी राजस्थानी है । राजस्थानी हिंदी की प्रमुख भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. यह भाषा टवर्ग बहुला है।
2. पुल्लिंग और स्त्रीलिंग के बहुवचन के अंत में 'आँ' होता है जैसे– बादलाँ, राताँ, तारां ।
3. राजस्थानी में मराठी भाषा में प्रयुक्त होने वाली 'ळ' ध्वनि का प्रयोग भी मिलता है ।
4. राजस्थानी हिंदी में 'ळ' के साथ ही 'ण' और 'ड़' वर्णों का अधिक प्रयोग होता है ।
5. कुछ वर्णों के परिवर्तन इस प्रकार है –

–'को' के स्थान पर 'नै'

–'से' के स्थान पर 'सूं',

–'के' 'की' के स्थान पर 'रो, 'रा', 'री' अथवा 'को', 'का', 'की'

राजस्थानी उपभाषा के अंतर्गत 4 बोलियां आती हैं–

1. मारवाड़ी–

मारवाड़ी राजस्थानी हिंदी की सबसे प्रमुख बोली है, क्योंकि साहित्य में इसी बोली का बहुधा प्रयोग हुआ है । इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से हुआ । जोधपुर और उसके आस–पास जो बोली जाती है वह शुद्ध मारवाड़ी है । इसके अतिरिक्त अजमेर, किशनगढ़, मेवाड़, सिरोही, पालनपुर, जैसलमेर आदि क्षेत्र में प्रयुक्त होती है । इसका भौगोलिक विस्तार बहुत दूर–दूर तक है । इसकी प्रमुख उपबोलियाँ धुन्धारी (ढूढाइ), सिरोही, मेरवाड़ी, मेवाड़ी आदि हैं । मारवाड़ी बोलने वालों की संख्या एक करोंड़ के लगभग मानी जाती है । यह राजस्थानी की प्रतिनिधि बोली मानी जाती है । राजस्थानी भाषा का सर्वाधिक साहित्य इसी बोली में मिलता है । मीराबाई के पदों की भाषा भी मारवाड़ी है । मारवाड़ी की प्रमुख भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. महाप्राण ध्वनियों के स्थान पर अल्पप्राण हो जाता है, जैसे–

भूख > भूक

2. कई स्थानों पर 'ल' के स्थान पर 'ळ' मिलता है, जैसे–

   बादल > बादळ

   हल > हळ

3. 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग मिलता है ।
4. कई स्थानों पर 'च' और 'छ' का उच्चारण 'स' और 'ह' की तरह देखा जाता है । जैसे–

   चक्की > सक्की,

   छाछ > सास

5. मारवाड़ी 'ओकारांत बहुला' है, जैसे– थारो, थोड़ो आदि ।

2. जयपुरी–

जयपुरी को ढूंढ़ाणी भी कहा जाता है । यह पूर्वी राजस्थान की प्रमुख बोली है । बूँदी और कोटा की हड़ौती इसकी एक शाखाएं हैं । इसकी उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर से विकसित हुयी । जयपुरी की कुछ भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. जयपुरी में मारवाड़ी के 'ण' के स्थान पर 'न' प्रयुक्त होता है ।
2. संज्ञा कर्मकारक 'नै' और 'कै', करण और सम्प्रदान 'सूं' और 'सैं', अधिकरण 'मै' प्रयुक्त होता है ।
3. भविष्यकाल के लिए 'ग', 'ल' और 'स' रूपों का प्रयोग होता है तथा 'ह' का प्रयोग नहीं होता है, जैसे–

   करते हो > करोला

   जाऊँगा > जास्यूं

3. मेवाती–

मेवात क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण इसे मेवाती कहा जाता है । मेवाती हरियाणा के बहुत निकट मानी जाती है । इसके क्षेत्र अलवर, भरतपुर के उत्तर पश्चिम और हरियाणा के गुड़गाँव के साथ–साथ दक्षिण पूर्व हैं ।

4. मालवी–

मालवा उज्जैन के आस–पास का प्रमुख क्षेत्र है । मालवा के अतिरिक्त उज्जैन, प्रतापगढ़, रतलाम, इंदौर और देवास में इसका प्रयोग होता है साथ ही राजस्थान के कोटा और चित्तौडगढ़ भी शामिल हैं । मालवी की कुछ प्रमुख भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. ब्रज और बुन्देली की तरह ही मालवी भी ओकार बहुला है ।
2. इसके शब्दों में मध्य के 'इ' और 'उ' का 'अ' कर देने की प्रवृत्ति दिखाई देती है, जैसे–

   पंडित **>** पंडत,
   दिन **>** दन
   जामुन **>** जामन
   मानुस **>** मानस
   सगुन **>** सगन
3. 'ऐ' और 'औ' के स्थान पर 'ए' और 'ओ' मिलता है, जैसे–

   चौत **>** चेत
   ठौर **>** ठोर
   दौर **>** दोर

ख– पश्चिमी हिंदी–

पश्चिमी हिंदी की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से हुयी । इसके अंतर्गत ब्रज भाषा, खड़ी बोली/कौरवी, हरियाणवी, बुन्देली और कन्नौजी बोलियाँ आती हैं । भौगोलिक दृष्टि से इसका क्षेत्र पंजाबी, राजस्थानी, पहाड़ी, पूर्वी हिंदी और मराठी भाषा के बीच तक व्यापक रूप से फैला हुआ है । ऐसा माना जाता है कि इसे बोलने वालों की संख्या छः करोंड़ से कुछ अधिक है । साहित्यिक दृष्टि से यह बहुत सम्पन्न है । ब्रज भाषा ने साहित्य पर बहुत समय तक राज किया है । भक्तिकाल में तुलसी से लेकर सम्पूर्ण कृष्ण साहित्य और बाद में रीतिकालीन समग्र

साहित्य ब्रज भाषा में सृजित हुआ । आधुनिक काल में इसका प्रयोग होता रहा । खड़ी बोली आज तक साहित्य की मुख्य भाषा बनी हुयी है, अमीर खुसरो से लेकर वर्तमान समय तक खड़ी बोली साहित्य का अपना अलग भंडार है । साहित्य खड़ी बोली आज कला, विज्ञान, पत्रकारिता, सिनेमा, प्रोद्यौगिकी, विधि, समाज, विज्ञापन, मनोरंजन आदि की भाषा बनी हुयी है । यह निःसंदेह रूप से कहा जा सकता है कि पश्चिमी हिंदी वर्तमान समय में पूरे देश की सामान्य भाषा है । पश्चिमी हिंदी की भाषागत सामान्य विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. पश्चिमी हिंदी के उच्चारण में खड़ापन है ।
2. पश्चिमी हिंदी का 'अ' पूर्वी से बहुत अधिक विवृत्त है ।
3. पश्चिमी हिंदी में ह्रस्व 'इ' तथा 'उ' का उच्चारण दीर्घ 'ई' और 'ऊ' के अधिक निकट है ।
4. पश्चिमी हिंदी में पूर्वी की अपेक्षा दो स्वर एक साथ अपेक्षाकृत कम आते हैं, जैसे– दो, कौन, और, बैल ।
5. पश्चिमी हिंदी में इसका उच्चारण 'र' के रूप में होता है, जैसे–

   कृपा **>** क्रिपा **>** क्रपा

   ह्रदय **>** ह्रिदय **>** ह्रदय
6. पश्चिमी हिंदी के शब्दों के आदि में 'य', 'व' के स्थान पर 'यह' 'वह' हो जाता है । इसी प्रकार 'या' 'वा' के स्थान पर 'यामें' 'वामें' का प्रयोग मिलता है ।
7. पश्चिमी हिंदी की कौरवी, बाँगरू और निमाड़ी में ळ ध्वनियाँ भी मिलती हैं ।
8. 'ट' वर्ग की बहुलता है ।

पश्चिमी हिंदी के अंतर्गत आने वाली पाँचों बोलियों खड़ी बोली, ब्रज भाषा, बुन्देली, कन्नौजी व हरियाणवी का आपस में गहरा अन्तःसम्बन्ध है । इनका क्रमानुसार संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

1. **खड़ी बोली–**

खड़ी बोली मानक हिंदी को भी कहते हैं और लोक में प्रयुक्त एक बोली विशेष के लिए भी खड़ी बोली शब्द का प्रयोग किया जाता है । यह वह बोली है जो दिल्ली, मेरठ और उसके आस–पास के क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है और जिसके लिए भाषा वैज्ञानिक प्रायः 'कौरवी' शब्द का प्रयोग करते हैं । 'कौरवी' नाम राहुल सांकृत्यायन का दिया हुआ नाम है । इसका विकास अपभ्रंश के शौरसेनी रूप से हुआ । डॉ0 हरदेव बाहरी मानते हैं कि– 'इस बोली को हिन्दुस्तानी, सरहिंदी, बोलचाल की हिन्दुस्तानी, खड़ी बोली आदि कई नाम दिए गए हैं । इन सबसे अच्छा और सही नाम 'कौरवी' है । यह वाही प्रदेश है जिसे पहले कुरु जनपद कहते थे । खड़ी बोली तो मूलतः उसे कहते हैं जिसे सामान्य या मानक हिंदी भी कहा जाता है ।' इसके क्षेत्र दिल्ली, गाजियाबाद, रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून, अम्बाला का पूर्वी भाग, पटियाला का पूर्वी भाग आदि हैं। साहित्य की दृष्टि से यह समृद्ध भाषा है । इसमें लोक साहित्य भी मिलता है। कौरवी की अपनी कुछ उपबोलियाँ भीं हैं, जैसे– पश्चिमी कौरवी, पूर्वी कौरवी, पहाड़ताली और बिजनौरी । खड़ी बोली की भाषागत विशेषताएं निम्न लिखित हैं–

1. खड़ी बोली की सबसे प्रमुख विशेषता इसका आकारांत होना है, जैसे– आया, गया, खड़ा, बैठा करता आदि ।
2. खड़ी बोली के स्वर बहुत अधिक दीर्घीकरण की प्रवृत्ति नहीं पाई जाती है, यही कारण है कि दीर्घ स्वरों के बाद भी व्यंजन का द्वित्व रूप होता है, जैसे–

   बपू > बाप्पू

   बेटा > बेट्टा

   गाड़ी > गाड्डी
3. ह्रस्व स्वर शब्द के अंत में नहीं मिलते हैं ।
4. अनेक स्थानों पर महाप्राण ध्वनियों के स्थान पर अल्पप्राण ध्वनियों का प्रयोग मिलता है, जैसे–

   झूठ > झूट

   धोखा > धोका

5. 'ए' और 'ओ' के ह्रस्व रूप भी मिलते हैं । उच्चारण में ए कुछ इ के समान और ओ कुछ उ के समान प्रतीत होता है ।
6. 'औ' उच्चारण में 'ओ' सुनाई देता है, जैसे–

   नौ > नो

   औरत > ओरत
7. खड़ी बोली में मूर्धन्य ध्वनियों की अधिकता मिलती है, जैसे– कहाणी, लेणा, देणा आदि ।
8. अनेक स्थान पर 'न' के स्थान पर 'ण' प्रयुक्त होता है, जैसे–

   मानुस > माणुस
9. 'ल' के स्थान पर 'ळ' का प्रयोग भी मिलता है, जैसे–

   जंगल > जंगळ
10. ड़ के स्थान पर 'ड' और ढ. के स्थान पर ढ का प्रयोग मिलता है ।
11. खड़ी बोली में स्त्रीलिंग के लिए 'अन' प्रत्यय प्रयुक्त होता है, जैसे– नागिन–नागन, जोगिन–जोगन, धोबिन–धोबन।
12. खड़ी बोली की एक प्रमुख विशेषता महाप्राण को अल्पप्राण कर देना है ।
13. हिंदी की अन्य बोलियों की अपेक्षा कौरवीं में बलाघात अधिक है ।

2. ब्रजभाषा–

ब्रज मण्डल में प्रयुक्त होने के कारण यह ब्रज कहलाई । इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से हुआ है । इसके क्षेत्र मथुरा, आगरा, धौलपुर, अलीगढ़ मुख्य क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त बरेली, बदायूँ, एटा, मैनपुरी, गुडगाँव, भरतपुर, करौली आदि तक ब्रज का प्रयोग मिलता है। इसकी अपनी कुछ उपबोलियाँ भी हैं, जैसे– भुक्सा, अंतर्वेदी, भरतपुरी, डांगी, माथुरी आदि । साहित्य की दृष्टि से सर्वाधिक सम्पन्न बोली है । आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक यह प्रमुख भाषा बनी रही । भक्तिकाल के स्वर्णिम इतिहास में यह तुलसीदास और सूरदास की प्रमुख भाषा थी । इनके साथ ही नंददास, रसखान रहीम आदि की भाषा ब्रज ही थी । रीतिकाल का पूरा दो सौ साल तक का साहित्य ब्रजभाषा में ही

लिखा गया । केशवदास, भूषण, बिहारी, मतिराम, देव पद्माकर, घनानंद भी ब्रज भाषामें कविता करने के कारण ही जाने गए । आधुनिक काल में भारतेंदु हरिश्चन्द्र से लेकर जयशंकर प्रसाद नें भी ब्रज भाषा में रचनाएं की हैं । लोक साहित्य की दृष्टि से भी यह समृद्ध है । ब्रजभाषा की भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. ब्रजभाषा ओकारबहुला भाषा है, जैसे– आयो, गयो, दूजो, लेनो, देनो, भयो आदि ।
2. शब्दों के अंत में ह्रस्व इ और उ होता है, जैसे– बहुरि, करि, मनु, कालु आदि ।
3. पद के अंत में आने वाले ए और ओ के स्थान पर ऐ और औ हो जाता है, जैसे–

   के **>** कै

   में **>** मैं

   करो **>** करौ

   को **>** कौ
4. 'ऋ' का प्रयोग लिखने में तो होता है किन्तु उच्चारण में 'र' अथवा 'रि' प्रयुक्त होता है ।
5. ब्रज भाषा में महाप्राण ध्वनियों का अल्पप्राणीकरण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई देती है, जैसे–

   हाथ **>** हात

   भूखा **>** भूँका
6. मूर्धन्य 'ण' का प्रयोग नहीं मिलता है ।
7. 'ल' और 'ड़' के स्थान पर 'र' का प्रयोग दिखाई देता है, जैसे–

   खड़ो **>** खरो

   झगड़ो **>** झगरो

   पीला **>** पीरो

   छुबला **>** दूबरो

8. स्त्रीलिंग शब्दों के निर्माण के लिए ई, इनी, आइन आनी प्रत्ययों का प्रयोग होता है, जैसे–

   शेर **>** शेरनी

   मेर **>** मोरनी

   पंडित–पंडिताइन

9. अधिकाँश स्थानों पर शब्द के बीच में आने वाले 'र' का लोप हो जाता है और र के संयोगवाले दूसरे व्यंजन का द्वित्त्व हो जाया है. जैसे–

   मदरसा **>** मदस्सा

10. शब्द समूह की दृष्टि से माना जाता है कि इसमें अरबी–फारसी–तुर्की जके शब्दों की बहुलता है ।

3. **बुन्देली–**

बुन्देलखण्ड में प्रयुक्त होने से इसक बोली का नाम बुन्देलखण्डी पड़ा । यह बुंदेला राजपूतों का क्षेत्र होने के कारण बुन्देलखण्ड कहलाया । इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ । इसकी अपनी उपबोलियाँ हैं जैसे– बनाफरी, राठौरी, लोधांती आदि । इस बोली का क्षेत्र– उत्तर प्रदेश में झांसी, उरई, जालौन, हमीरपुर, बाँदा और मध्य प्रदेश में ओरछा, दतिया, पन्ना, चरखारी सागर, टीकमगढ़, सिउनी, होशंगाबाद बालाघाट, ग्वालियर और भोपाल के कुछ क्षेत्र हैं । साहित्य की दृष्टि से यह बहुत समृद्ध बोली है । भक्तिकाल के साथ ही रीतिकालीन साहित्य में इसा प्रमुख स्थान रहा है । केशवदास, बिहारी, मतिराम, पजनेस, श्रीपति रसनिधि, ठाकुर आदि कवि यहीं के थे । आचार्य पद्माकर की कर्मस्थली यही क्षेत्र रहा है । बुन्देली ब्रज भाषा के बहुत समीप मानी गयी है । बुन्देली का अपना लोक साहित्य भी बहुत समृद्ध है । 'ईसुरी के फाग', 'लोक गाथा आल्हा' आदि बुन्देली का प्रसिद्ध लोक साहित्य है । बुन्देली की भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. महाप्राण व्यंजनों के अल्पप्राणीकरण की विशेषता दिखाई देती है, जैसे–

   हाथ **>** हात
   जीभ **>** जीब

दूध > दूद
कंधा > कंदा
भूख > भूक
लाभ > लाब

2. 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण मूल स्वर तथा संयुक्त स्वर दोनों ही रूपों में पाया जाता है ।
3. शब्द के बीच में प्रयुक्त हुए 'र' का लोप हो जाता है, जैसे–

   सरे > साए
   गरी > गाई
   तुम्हारा > तुमाओ

4. 'स' के स्थान पर 'छ' का प्रयोग मिलता है, जैसे– सीढ़ी > छीड़ी । इसके साथ ही 'ड़' के स्थान पर 'र' (झगड़ा–झगरा), 'च' का 'स' (सोच–सोस) आदि परिवर्तन भी देखे जाते हैं ।
5. 'के लिए' के स्थान पर 'के लाने' का प्रयोग देखा जाता है ।
6. 'मैं' की अपेक्षा 'हम' का प्रयोग होता है।
7. 'आपन' का अर्थ 'हम' और 'तुमन' का अर्थ 'तुम' होता है।
8. बुन्देली में भी स्त्रीलिंग बनाने के लिए 'इन' और 'नी' प्रत्यय का प्रयोग होता है । जैसे–

   लड़का > लड़किन

   हरिन > हरिनी

4. **कन्नौजी–**

कन्नौजी का केंद्र कन्नौज अथवा कान्यकुब्ज है द्य यह शौरसेनी अपभ्रंश से निकली बोली है । इस क्षेत्र में बोली जाने के कारण ही इसका नाम कन्नौजी पड़ा । इसका क्षेत्र इटावा, फर्रुखाबाद, हरदोई, शाहजहांपुर, पीलीभीत, कानपुर आदि हैं द्य कन्नौजी और ब्रज भाषा में काफी समानता है द्य कन्नौजी का अपना कुछ लोक साहित्य मिलता है । कन्नौजी की भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. यह उकारांत बहुला है, जैसे– सबु, जातु, खातु, करतु आदि ।
2. इसमें ओकारान्ताता भी दिखाई देती है, जैसे– हमाओ, तुमाओ ।

3. इसमें अनुनासिकीकरण की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है, जैसे–

   बात > बाँत

4. 'औ' के स्थान पर 'अउ' का प्रयोग मिलता है, जैसे–

   कौन >कउन

   मौन > मउन

5. कन्नौजी में मध्यम 'ह' का लोप हो जाता है, जैसे–

   जाहि > जाइ

6. विकृत रूप में 'अन' या 'न' जुड़ जाता है, जैसे– बातन, खातन, घोड़न आदि ।
7. इसमें 'अ' का परिवर्तन 'ओ' के रूप में हो जाता है जैसे– छोटा > छोटो ।
8. कन्नौजी में एकवचन में आकारांत शब्द विकारी रूप में प्रायः इकारांत हो जाते हैं ।
9. स्त्रीलिंग बनाने के लिए 'आइन', 'इया' 'इ' प्रत्यय का प्रयोग होता है।

5. हरियाणी–

हरियाणा इसका मुख्य क्षेत्र है । इसके साथ ही दिल्ली, करनाल, जीन्द, हिसार, पटियाला आदि क्षेत्रों में भी प्रयुक्त होती है । इसे बांगरू भी कहते हैं । इसकी भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. हरियाणवी में 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग होता है, जैसे–

   पानी > पाणी

   अपना > अपणा

2. इसी प्रकार 'ड़' के स्थान पर 'ड' का प्रयोग भी मिलता है, जैसे– बड़ा > बडा ।
3. वर्तमानकालिक के लिए 'सूं', 'हूं', 'सैं', सै' का प्रयोग होता है ।

ग– पूर्वी हिंदी–

पूर्वी हिदी का विकास अर्धमागधी अपभ्रंश से हुआ है । पूर्वी हिंदी के अंतर्गत तीन बोलियाँ आती हैं– अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी । इनका आपस में गहरा सम्बन्ध है। भौगोलिक दृष्टि से पूर्वी हिंदी पहाड़ी, बिहारी, उड़िया, मराठी और पश्चिमी हिंदी के बीच का क्षेत्र है । इस क्षेत्र का विस्तार कानपुर से मिर्जापुर तथा लखीमपुर खीरी से बस्तर तक व्याप्त है । साहित्य की दृष्टि से यह बहुत समृद्ध है । भक्तिकाल का समग्र सूफी साहित्य अवधी भाषा में लिखा गया है । साहित्यिक अवधी में तुलसीदास के रामचरितमानस के साथ ही राम काव्य की अपनी अलग परम्परा है । पूर्वी हिंदी की अपनी कुछ निजी विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. पूर्वी भाषाओं में 'अ' का उच्चारण 'ओ' के बहुत समीप होता है ।
2. पूर्वी हिंदी में 'इ' 'उ' ह्रस्व अधिक है । इस कारण इसका उच्चारण दीर्घ 'ई' 'ऊ' की तरह प्रतीत होता है ।
3. पूर्वी हिंदी में दो स्वर एक साथ आते हैं जैसे– दुई, कउन, बइल, अइसा आदि ।
4. पूर्वी हिंदी के अधिकाँश क्षेत्रों में 'ऋ' का उच्चारण 'रि' की तरह होता है।
5. 'ण' के स्थान पर 'न' प्रयुक्त होता है।
6. 'श' और 'ष' के स्थान पर 'स' का प्रयोग होता है।
7. जिन शब्दों के आदि में 'य' 'व' प्रयुक्त होता है पूर्वी हिंदी में वह 'इ' 'उ' हो जाता है, जैसे– यहाँ, वहाँ, इहाँ, उहाँ । इसी तरह या वा के स्थान पर एमें, ओमें हो जाता है ।
8. पूर्वी हिंदी में 'ल' के स्थान पर 'र' आता है । जैसे–

   हल **>** हर

   गल **>** गर

   जल (जलना) **>** जर

पूर्वी हिंदी के अंतर्गत आने वाली तीनों बोलियों अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी में परस्पर थोड़ी बहुत भिन्नता पाई जाती है । डॉ0 हरदेव बाहरी कहते हैं कि– 'जितनी समानता पूर्वी हिंदी की बोलियों में है, उतनी किसी वर्ग की

बोलियों में नहीं है । वास्तव में अवधि, बघेली और छत्तीसगढ़ी का एक महाजनपद रहा है जिसे कोसल कहते थे ।' इन बोलियों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

1. अवधी–

अयोध्या (अवध क्षेत्र) में बोली जाने के कारण इसका नाम अवधी पड़ा । इसे 'कोसली' 'बैसवाड़ी' आदि नामों से भी पहचाना जाता है । अवध क्षेत्र में लखीमपुर खीरी, बहराइच, गोंडा, बस्ती, लखनऊ, सीतापुर, उन्नाव, प्रतापगढ़, बाराबंकी, सुल्तानपुर, फैजाबाद, रायबरेली आदि क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है । अवध क्षेत्र के बाहर इलाहाबाद, मिर्जापुर के पश्चिमी भाग, जौनपुर की भी प्रमुख बोली अवधी ही है। इसके साथ ही मोरिशस, नेपाल, फिजी, सूरीनाम आदि देशों में भी अवधी बोले जाने वालों की संख्या लाखों में है । बैसवाड़ी, बनौधी, मिर्जापुरी आदि इसकी अपनी बोलिया हैं ।

साहित्य और लोकसाहित्य दोनों दृष्टियों से अवधी अत्यंत समृद्ध भाषा है । भक्तिकलीन सूफी कवियों मुल्ला दाउद, जायसी, उस्मान, कुतुबन, मंझन आदि के साथ ही रामकाव्य के प्रणेता तुलसीदास की भाषा अवधी ही थी । आधुनिक काल में द्वारिका प्रसाद मिश्र, वंशीधर शुक्ल, रमईकाका, पढ़ीस आदि ने अवधी में रचनाएं की हैं । डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि– 'अवधी एक जीवित भाषा है और आज भी विकास के पथ पर है। उसमें आज भी परिवर्तन हो रहे हैं । जहाँ मध्यकाल में अरबी–फारसी के शब्द इसमें आ गए तो आधुनिक काल में अंग्रेजी के शब्द आये हैं। इधर बोलचाल की अवधी खड़ी बोली से प्रभावित हुयी है । अवधी की कुछ प्रमुख भाषागत विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. अवधी उकारांत बहुला भाषा है, जैसे– जातु, करतु, दिनु आदि ।
2. अवधी में सभी स्वरों के अनुनासिक रूप भी प्रयुक्त होते हैं ।
3. 'ए' और 'ओ' का 'अइ' 'अउ' या 'अए' 'अओ' हो जाता है, जैसे– ऐसा–अइसा ।
4. बहुत बार शब्द में 'ह' और 'र' का आगम हो जाता है, जैसे–

   रईस **>** रहीस,

   पसंद **>** परसंद
5. अवधी में 'ण' ध्वनि नहीं हैं ।

6. ड और ढ का प्रयोग कभी शब्द के मध्य और अंत में नहीं होता । हमेशा शब्द के प्रारम्भ में प्रयुक्त होता है।
7. ड़ ढ. हमेशा शब्द के अंत में प्रयुक्त होते हैं द्य
8. 'व' के स्थान पर बहुधा 'ब' का प्रयोग मिलता है, जैसे–

   विवके **>** बिबेक

   विष्णु **>** बिश्नू

   विद्यालय **>** बिद्यालय
9. 'ल' के स्थान पर 'र' का प्रयोग भी मिलता है, जैसे–

   अंजुलि **>** अंजुरी

   हल **>** हर
10. एकवचन से बहुवचन के लिए मुख्यतः 'अ' का 'एँ' हो जाता है, जैसे रात **>** रातें और कभी कभी 'न' का अन या 'न्ह' भी प्रयुक्त होता है, जैसे–

    सखी **>** सखियन / सखिन्ह

2. **बघेली–**

बघेली का उद्‌भव अर्धमागधी अपभ्रंश के एक क्षेत्रीय रूप से हुआ है । बघेली बघेलखंड की भाषा है। यह क्षेत्र बघेल राजपूत राजाओं के कारण बघेलखंड कहलाता है, उस क्षेत्र में बोली जाने के कारण इसका नाम बघेली पड़ा । यह अवधी की उपबोली मानी जाती है । इसके क्षेत्र रींवा, नागोद, शहडोल, सतना, मैहर आदि हैं । यह अवधी के बहुत अधिक निकट मानी जाती है । साहित्यिक दृष्टि से यह बहुत समृद्ध नहीं है, इसमें लोक साहित्य मिलता है । इसकी अपनी कुछ बोलियाँ भी हैं जैसें– गहोरा, तिरहारी, जुड़ार आदि हैं । बघेली की भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. अवधी की तुलना में बघेली के कुछ सर्वनाम भिन्न हैं, जैसे– 'म्वाँ', 'मोहि', 'त्वा', 'बहि', 'यहि' ।
2. 'व' के स्थान पर 'ब' की प्रवृत्ति दिखाई देती है, जैसे–

   आवा **>** आबा

जावा > जाबा

खावा > खाबा

3. विशेषण अधिकांशतः 'हा' प्रत्यय जोड़कर बनते हैं, जैसे–

   नीक > नीकहा

   अधिक > अधिकहा

4. डॉ0 हरदेव बाहरी मानते हैं कि इसके शब्दावली में आदिवासी जनजातियों की बोलियों के तत्त्व भी पाए जाते हैं ।

3. छत्तीसगढ़ी–

छत्तीसगढ़ में प्रयुक्त होने के कारण इसका नाम छत्तीसगढ़ी पड़ा । यह क्षेत्र पहले दक्षिण कोसल कहलाता था । इसके अंतर्गत सरगुजा, कोरिया, बिलासपुर, रायपुर, रायगढ़, दुर्ग, नंदगांव, खैरागढ़ आदि आते हैं । इसकी अपनी भी कुछ बोलियाँ हैं, जिनमे मुख्य रूप से सुरगुजिया, सदरी, बैगानी, बिंझवाली आदि का नाम लिया जाता है । छत्तीसगढ़ी अवधी के समीप मानी जाती है । इसकी प्रमुख भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. छत्तीसगढ़ी में महाप्राणीकरण की प्रवृत्ति पाई जाती, इस कारण क के स्थान पर ख, द का ध, ज का झ, च का छ प्रयोग मिलता है ।
2. 'स' के स्थान पर 'छ' का प्रयोग भी दिखाई देता है, जैसे–

   सोता > छोता

3. 'श' और 'ष' के स्थान पर 'स' का प्रयोग ही होता है, जैसे–होश–होस,

   भाषा > भासा

4. बहुवचन के लिए अंत में 'न' का प्रयोग किया जाता है, जैसे–

   लड़का > लरिकन

5. पुल्लिंग को स्त्रीलिंग बनाने के लिए इन, आनि, इया आदि प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं ।

घ– बिहारी हिन्दी

बिहारी उपभाषा मुख्यतः बिहार में प्रयुक्त होती है । ग्रियर्सन नें अपने भाषा सर्वेक्षण में पाया की इस भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 36,239,967 के आस–पास थी । मैथिली के अतिरिक्त इसमें लोक साहित्य पाया जाता है । डॉ0 भोलानाथ तिवारी नें इसे पूर्वी बिहारी और 'पश्चिमी बिहारी' इन दो भागों में विभाजित किया है । उनके अनुसार 'पूर्वी बिहारी' में मैथिली और मगही और 'पश्चिमी बिहारी' में भोजपुरी । निष्कर्षतः बिहारी उपभाषा की इसकी तीन बोलियाँ मैथिली, मगही और भोजपुरी है। साहित्य रचना की दृष्टि से मैथिली ही सम्पन्न है । इसका भौगोलिक विस्तार दक्षिण में छोटा नागपुर, उत्तर में नेपाल की सीमा के आस–पास के क्षेत्र से लेकर पश्चिम में बस्ती, जौनपुर, बनारस और मिर्जापुर से लेकर पूर्व में माल्दह और दिनाजपुर तक है । सब मिलाकर पूरे बिहार के साथ ही यह भाषा उत्तर प्रदेश के बलिया, गाजीपुर जौनपुर, आजमगढ़ बनारस, देवरिया गोरखपुर आदि जिलों में बोली जाती है। इसकी कुछ प्रमुख भाषिक विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. पूर्वी हिंदी की अपेक्षा बिहारी हिंदी कुछ अधिक व्यंजनांत भाषा है । जैसे–

   भला **>** भल

   घोड़ा **>** घोड़

2. कुछ विशेष अवसर को छोड़ कर अक्षर के अंत में संस्कृत की तरह 'अ' का उच्चारण होता है ।
3. अधिकाँश ध्वनियाँ पूर्वी हिंदी के ही समान हैं ।

बिहारी हिंदी के अंतर्गत आने वाली तीनों बोलियों भोजपुरी, मैथिली और मगही में बहुत भिन्नता पाई जाती है । इनका परिचय इस प्रकार है–

1. भोजपुरी–

भोजपुर में प्रयुक्त होने के कारण इसका नाम भोजपुरी पड़ा । इसकी उत्पत्ति पश्चिमी, मागधी, या मागधी अपभ्रंश के पश्चिमी रूप से मानी जाती है ।

यद्यपि यह विस्तृत भू खंड में प्रयुक्त होने वाली भाषा है । डॉ0 हरदेव बाहरी मानते हैं कि– 'राज भोज के वंशजों ने बिहार में मॉल जनपद में आकर अपना नया राज्य स्थापित किया था जिसकी राजधानी भोजपुरी थी । राजधानी के नाम पर उस क्षेत्र का नाम भी भोजपुरी हो गया । भोजपुरी उसी क्षेत्र की बोली है । इस क्षेत्र के अंतर्गत उत्तर प्रदेश में बस्ती का कुछ भाग, गोरखपुर, देवरिया, गाजीपुर, बलिया. बनारस, मिर्जापुर का कुछ भाग, जौनपुर का पूर्वी भाग, बिहार के शाहाबाद, छपरा, चम्पारण, राँची का कुछ भाग और पलामू के कुछ भाग आते हैं । भारत से बाहर मारिशस, फिजी आदि देशों में भी भोजपुरी बोलने वालों की संख्या बहुत है । साहित्य की दृष्टि से समृद्ध होने के साथ साथ यह सिनेमा की भी भाषा है। एक अनुमान के अनुसार इसे बोलने वालों की संख्या साढ़े तीन करोंड़ से अधिक है । भोजपुरी की प्रमुख विशेषताएं हैं–

1. अ इ उ के रूप अति ह्रस्व होते हैं ।
2. 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण 'अइ' और 'अउ' के रूप में हो जाता है । जैसे–

   पैसा **>** पइसा

   मैला **>** मइला

   गौना **>** गउना
3. स्वरों का अनुनासिकीकरण की अधिकता मिलती है । जैसे–

   पापड़ **>** पांपर

   हिस्सा **>** हींसा

   पेच **>** पेंच
4. भोजपुरी में दीर्घीकर्ण की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है । जैसे–

   त्वा **>** तावा

   डिब्बा **>** डीबा

   बत्ती **>** बाती
5. भोजपुरी में 'ण' का प्रयोग नहीं होता है ।

6. कई शब्दों के मध्य में आने वाले 'र' का लोप दिखाई देता है, जैसे–

करि > कइ

लरिका > लइका

धरि > धइ

7. इसके साथ ही 'ड़' का प्रयोग 'र' के रूप में होता है, जैसे–

जाड़ा > जारा

थोडा > थोरा

8. भोजपुरी में अधिकाँश शब्दों में 'ल' के स्थान पर 'र' प्रयुक्त होता है । जैसे–

पीतल > पीतर

उजल > ऊजर

साली > सारी

9. इसी प्रकार 'ड़' के स्थान पर भी 'र' की पृवृत्ति दिखाई देती है, जैसे–

खड़ा > खरा

थोड़ा > थोरा

जाड़ा > जारा

10. 'स' और 'श' के स्थान पर ह का मिलता है, जैसे–

अष्टमी > अहटमी

मास्टर > माहटर

रास्ते > राहते

2. मैथिली–

मिथिला से सम्बन्धित होने के कारण इसे मैथिली नाम पड़ा । इसे 'तिरहुतिया' भी कहा जाता है । इसकी उत्पत्ति मागधी अपभ्रंश से मानी जाती है । यह बिहारी उपवर्ग की प्रमुख बोली है । ग्रियर्सन के सर्वेक्षण के अनुसार इसे बोलने वालों की संख्यां एक करोड़ से अधिक थी। यह दरभंगा, मुज्जफरपुर, मधुबनी, सहरसा, पूर्णिया, उत्तरी मुंगेर और उत्तरी भागलपुर में

बोली जाती है। मैथिली की अपनी छः उपबोलियाँ हैं– उत्तरी मैथिली, दक्षिणी मैथिली, पूर्वी मैथिली, पश्चिमी मैथिली, छिकाछिकी और जोलहा। साहित्यिक दृष्टि से बिहारी की सभी बोलियों में सर्वाधिक सम्पन्न बोली मैथिली ही है । विद्यापति की पदावली इसी भाषा में लिखी गयी है और उन्होंने इसी भाषा के लिए 'देसिल बयना सब जन मिट्ठा' कहा है। मैथिली की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. उच्चारण में बहुत कुछ भोजपुरी के समान है ।
2. मैथिली में सबसे ज्यादा प्रयोग 'छ' और 'ल' ध्वनियों का होता है ।
3. मैथिली में लगभग सभी स्वर स्वरांत होते हैं ।
4. इस बोली में क्रियाओं में लिंग भेद नहीं होता है ।
5. ए ऐ ओ औ के ह्रस्व और दीर्घ के रूप में दो–दो उच्चारण होते हैं ।
6. 'ल' के स्थान पर 'न' भी मिलता है, जैसे– लवण **>** नून ।

3. **मगही–**

मगध प्रांत से सम्बन्धित होने के कारण इसका नाम मगही पड़ा। इसका क्षेत्र गया, पटना, हजारीबाग, भागलपुर और मुंगेर का कुछ भाग है । यह भोजपुरी के बहुत सामान है । 'मगही का परिनिष्ठित रूप गया जिले में बोला जाता है । मगही का अपना कोई साहित्य नहीं है किन्तु लोक साहित्य की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है । 'गोपीचंद' और 'लोरिक' जैसे लोक साहित्य इसी भाषा में लिखे गए हैं । मगही की कुछ प्रमुख विशेषताएं हैं–

1. मगही में बहुत सी संज्ञाओं के दीर्घ रूप मिलते हैं, जैसे– नाऊ–नउवा
2. अब–जब–तब–कब के स्थान पर अखनी–जखनी–तखनी–कखनी प्रयुक्त होता है ।
3. इधर–उधर–किधर के स्थान पर एहर–ओहर–केहर का प्रयोग होता है ।

ड.– पहाड़ी हिंदी–

पहाड़ी भागों में बोली जाने के कारण इसका नाम पहाड़ी पड़ा। पहाड़ी उपभाषा के अंतर्गत कुमायुंनी, गढ़वाली और नेपाली बोलियाँ आती हैं। इनमें से कुमायुंनी, गढ़वाली दोनों बोलियों पर तिब्बती, चीनी और खास भाषाओं का प्रभाव दिखाई देता है। डॉ0 सुनीतिकुमार चटर्जी पहाड़ी बोलियों का मूलाधार पैशाची, दरद या खस अपभ्रंश को मानते हैं। ग्रियर्सन के भाषा–सर्वेक्षण के अनुसार पहाड़ी बोलने वालों की संख्या इक्कीस लाख से ऊपर थी । डॉ0 भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि– 'पहाड़ी की बोलियों में साहित्यिक महत्त्व केवल 'नेपाली' तथा कुछ कुमायुंनी का ही है। अन्यों में लोक साहित्य ही है । 'पहाड़ी' के लिए प्रमुखतः नागरी लिपि का प्रयोग होता है तथा गौड़ रूप से टर्की, फारसी, कोची तथा सिरमौरी का । अब फारसी का प्रचार कम होता जा रहा है।' पहाड़ी हिन्दी की अपनी कुछ भाषिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. पहाड़ी हिंदी में सानुनासिक स्वरों में अधिकता है।
2. लगभग सभी स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ राजस्थानी से मिलती जुलती हैं।
3. इसकी प्रमुख विशेषता ओकार बहुलता है ।

पहाड़ी हिंदी के अंतर्गत आने वाली बोलियों का परिचय इस प्रकार है–

1. कुमायूँनी–

मुख्य रूप से कुमायूँ में बोले जाने के कारण इसे कुमायूँनी कहते हैं । इस क्षेत्र का पुराना नाम कूर्मांचल था । ग्रियर्सन के अनुसार इसे बोलने वालों की संख्या 4,36,788 थी। कुमायूँनी का क्षेत्र नैनीताल, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ के आस–पास का क्षेत्र है । इसके साथ ही यह कुमायूँ कमिश्नरी के नैनीताल (उत्तरी भाग), चमोली तथा उत्तर काशी में भी बोली जाती है । इसके बहुत से स्थानीय रूप भी विकसित हुए हैं जिनमें से मुख्य हैं– खसपरजिया, कुमैयाँ, फल्दकोटिया, पछाइं, चौगरखिया, दानपुरिया, गंगोला, सीराली, जोहारी, भोटिया आदि । कुमायूँनी पर राजस्थानी का बहुत गहरा प्रभाव दिखाई देता है । ऐसा माना जाता है कि यद्यपि कुमायुंनी के पास अपना कोई प्राचीन साहित्य तो नहीं है किन्तु इधर कुछ शताब्दियों में इसमें साहित्य का सृजन हुआ है । गुमानी पन्त, कृष्णदत्त पांडे, सिवदत्त सत्ती

आदि इस भाषा के प्रमुख साहित्यकार हैं । कुमायूँनी की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. कुमायूँनी ओकारबहुला बोली है, जैसे– घोड़ो, चेलो ।
2. कुमायूँनी पर कई अन्य बोलियों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। जैसे–

   –राजस्थानी के प्रभाव के कारण ण और ळ ध्वनियाँ ।

   –अवधि के प्रभाव से 'ए' 'ओ के स्थान पर 'या' 'वा' प्रयुक्त होना ।

   –कौरवी के प्रभाव से अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति ।
3. इस बोली में कर्ता के साथ 'ले', कर्म के साथ 'कणि' और करण के साथ 'थे' कारक चिह्नों का प्रयोग होता है ।

2. गढ़वाली–

गढ़वाल क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण इसका नाम गढ़वाली पड़ा। यह उत्तराखंड, केदारखंड का क्षेत्र है । ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के अनुसार गढवाली बोलने वालों की संख्या 6,70,824 के आस–पास थी। इस बोली के क्षेत्र गढ़वाल, उसके आस–पास टेहरी, अल्मोड़ा, देहरादून के उत्तरी भाग है। कुमायूँनी के ही भांति गढ़वाली की भी अनेक उपबोलियाँ विकसित हो गयी। जैसे राठी, श्रीनगरिया, दसौलया, नगपुरिया, टेहरी, सलानी आदि । गढ़वाली पर राजस्थानी, पंजाबी और वैशाली का कुछ प्रभाव दिखाई देता है। गढ़वाली की लिपि भी नागरी है इसमें लोक साहित्य तो मिलता है किन्तु साहित्य न के बराबर पाया जाता है । गढ़वाली की अपनी कुछ अलग विशिष्टताएं हैं, जो इस प्रकार हैं–

1. स्वरों में अनुनासिकीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है, जैसे–

   पैसा **>** पैंसा

   सात **>** सांत

   प्यार **>** प्यार
2. स श न ण ल ळ भेद व्यंजन कहे गए हैं ।

3. कर्ता के साथ 'न', 'ल' और कर्म के साथ 'कूँ', 'कुणी' और करण के साथ 'सें' 'ती' परसर्ग प्रयुक्त होते हैं ।

3. नेपाली–

यह मुख्य रूप से नेपाल में बोली जाती और वहाँ की राष्ट्रभाषा है। भारत में यह सिक्किम, असम, मणिपुर, मेघालय आदि में प्रयुक्त होती है।

20.6 सारांश–

इस इकाई में हिंदी की उपभाषाओं और बोलियों पर विस्तार से चर्चा की गयी । हिंदी देश की सर्वाधिक बोली व समझी जाने वाली भाषा है । यह पांच उपभाषाओं और अट्ठारह बोलियों का समुच्चय है । इस इकाई में पाँचों उपभाषाओं का परिचय देते हुए उनकी विशेषताओं के बारे में बताया गया है । हिंदी की अट्ठारह बोलियाँ देश भर के विविध क्षेत्रों में व्यापक रूप से फैली हुयी हैं । सबके क्षेत्र अलग–अलग है और सबकी अपनी कुछ अलग विशेषताएं भी हैं जो उन्हें एक दूसरे से अलग चिन्हित कराती हैं । इस अध्याय में प्रत्येक बोली पर विस्तार से चर्चा करते हुए उनके प्रयोग क्षेत्रों के बारे में भी बताया गया है । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से छात्र न केवल हिंदी की उपभाषाओं और बोलियों के बारे में भली प्रकार से जान समझ सकेंगे बल्कि इन बोलियों की विशिष्टताओं से भी परिचित हो सकेंगे ।

20.7 शब्दावली–

समेकित– एकीकृत

समुच्चय– समूह / राशि

प्रौद्यौगिकी– प्राविधिकी

परिनिष्ठित– पूर्णतया कुशल / शुद्ध

महाप्राण– व्याकरण के अनुसार वह वर्ण जिसके उच्चारण में प्राण वायु का विशेष व्यवहार करना पड़ता है, जैसे– ख, घ, झ, फ आदि ।

अल्पप्राण– व्याकरण के अनुसार वह वर्ण जिन्हें बहुत कम वायु प्रवाह का से बोला जाता है उन्हें अल्पप्राण कहा जाता है, जैसे– क ग, ज, प आदि ।

ओकारांत– वह शब्द जिसके अन्त में 'ओ' आता हो ।

उकारांत– वह शब्द जिसका अन्त में 'उ' से होता हो ।

20.8 संदर्भ ग्रन्थ–

डॉ0 हरदेव बाहरी– हिंदी भाषा

डॉ0 भोलानाथ तिवारी– हिंदी भाषा

डॉ0 भोलानाथ तिवारी– भाषा विज्ञान

20.9. प्रश्नावली

20.9.1. बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पश्चिमी हिंदी की उत्पत्ति किस अपभ्रंश से हुई ?
    1. मागधी
    2. अर्धमागधी
    3. शौरसेनी
    4. राजस्थानी

सही उत्तर– 3– शौरसेनी अपभ्रंश

2. पूर्वी हिंदी की उत्पत्ति किस अपभ्रंश से हुई ?
    1. मागधी
    2. अर्धमागधी
    3. शौरसेनी
    4. राजस्थानी

सही उत्तर– 2– अर्धमागधी अपभ्रंश

3. निम्नलिखित में से कौन सी बिहारी की बोली नहीं है–
    1. भोजपुरी
    2. मैथिली
    3. मगही
    4. अवधी

सही उत्तर– 4– अवधी

4. निम्नलिखित में से कौन सी पश्चिमी हिंदी की बोली नहीं है–

    1. ब्रज भाषा
    2. खड़ी बोली
    3. भोजपुरी
    4. बुन्देली

सही उत्तर– 3– भोजपुरी

5. निम्नलिखित में से कौन अवधी का कवि नहीं है–

    1. जायसी
    2. कुतबन
    3. तुलसीदास
    4. सूरदास

सही उत्तर– 3– तुलसीदास

6. निम्नलिखित में से कौन खड़ी बोली का क्षेत्र नहीं है–

    1. दिल्ली
    2. लखनऊ
    3. मेरठ
    4. सहारनपुर

सही उत्तर– 2– लखनऊ

20.9.1. लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. पश्चिमी हिंदी की बोलियों के नाम लिखिए ।
2. खड़ी बोली से आप समझते हैं ?
3. पूर्वी हिंदी के अंतर्गत कितनी बोलियाँ आती है, संक्षेप में बताइये ।
4. राजस्थानी उपभाषा की विशेषताएं संक्षिप्त रूप में बताइये ।

5. पहाड़ी हिंदी के क्षेत्रों पर प्रकाश डालिए ।

20.9.1. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. हिंदी की उपभाषाओं एवं उनकी बोलियों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
2. राजस्थानी हिंदी की विशेषताएं बताते हुए इसकी बोलियों राजस्थानी हिंदी की विशेषताएं बताते हुए इसकी बोलियों पर विस्तार से प्रकाश डालिए ।
3. पूर्वी हिंदी से आप क्या समझते है ? इसकी बोलियों के बारे में बताते हुए उनके क्षेत्र विशेषताओं के बारे में लिखिए।
4. पश्चिमी हिंदी पर विस्तार से प्रकाश डालिए ।

खंड–2

हिन्दी भाषा की संरचना और उसकी विशेषताएँ

इकाई –6
हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप

इकाई –7
हिन्दी ध्वनियाँ, शब्द–रचना और प्रकार

इकाई –8
हिन्दी की वाक्य–रचनाए वाक्य परिवर्तन : कारण और दिशाएँ

इकाई –9
हिन्दी की व्याकरणिक कोटियाँ

खण्ड–2 परिचय

परास्नातक हिंदी कार्यक्रम के अन्तर्गत हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास [MAHI-114(N)] पाठ्यक्रम का यह दूसरा खण्ड है, जिसका शीर्षक हिंदी भाषा की संरचना और उसकी विशेषताएँ है। इस खण्ड के अंतर्गत कुल चार इकाइयाँ (इकाई 6 से इकाई 9 तक) है।

इकाई–6 में हिंदी भाषा के मानक स्वरुप का उल्लेख है।

इकाई–7 के अंतर्गत हिंदी ध्वनियों तथा शब्द रचना और प्रकार की विस्तृत जानकारी दी गई है।

इकाई–8 में हिंदी की वाक्य रचनाओं एवं वाक्य परिवर्तनों के कारण और दिशाओं का वर्णन है।

इकाई–9 के अंतर्गत हिंदी की व्याकरणिक कोटियों की व्यापक जानकारी दी गई है।

अतः इन समस्त इकाईयों के माध्यम से आप हिंदी की संरचना और उसकी विशेषताओं की विस्तृत समझ विकसित कर सकेंगे।

इकाई 6
हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप

6.2.1 मानक का तात्पर्य

6.2.2 मानक हिन्दी की स्वन व्यवस्था

6.2.3 शब्दावली

6.2.4 मानक हिन्दी की व्याकरणिक विशेषताएँ

6.3 सारांश

6.4 संदर्भ ग्रंथ

6.5 प्रश्नावली

6.0 प्रस्तावना

पश्चिम में जैसलमेर–बीकानेर से पूर्व में भागलपुर तक, उत्तर में नेपाल की तराई से लेकर दक्षिण में दुर्ग–बस्तर–बालाघाट तक हिन्दी प्रदेश बहुत विस्तृत है। 'हिन्दी' संज्ञा का प्रयोग हिन्दी प्रदेश की पाँच उपभाषाओं तथा उसके अन्तर्गत 18 बोलियों के लिए किया जाता है। इतने बड़े क्षेत्र में अनेक उपभाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। एक क्षेत्र का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र की बोली को पूरी तरह नहीं समझ पाता है। ज्ञान–विज्ञान, शिक्षा–शासन, सम्पर्क के लिए एक मानक भाषा की आवश्यकता होती है। हिन्दी की बोली खड़ीबोली को मानक भाषा के रुप में विकसित किया गया है। प्रस्तुत इकाई में मानक हिन्दी के स्वरूप, ध्वनिगठन, शब्दावली तथा व्याकरण के विविध पक्षों का संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

6.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करके आप मानक हिन्दी के स्वरूप, उसके ध्वनिगठन, शब्दों के स्रोत तथा व्याकरण की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। ज्ञान–विज्ञान, राजभाषा, राष्ट्रभाषा आदि रुपों में इसी मानक हिन्दी का व्यवहार हो रहा है। 'हिन्दी' कहने से इसी का बोध होता है। हिन्दी की अन्य बोलियाँ जो मध्यकाल में साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी का प्रतिनिधित्व कर रही थीं अब उनकी स्थिति बोली की है। यद्यपि अलगाववादी तथा क्षेत्रीयता की भावना के कारण केन्द्र

सरकार हिन्दी बोलियों मे से मैथिली को भाषा का दर्जा दे दिया है। भोजपुरी के लिए भी माँग उठती रहती है। राजस्थानी का अलग दावा पेश है। वास्तव में मानक हिन्दी में सबका योगदान है। इस तथ्य को विस्मृत कर दिया जाता है।

हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप–किसी भाषा क्षेत्र की विविध बोलियों में से एक को मानक के रुप में विकसित किया जाता है। शिक्षा, सम्पर्क, ज्ञान–विज्ञान में उसी भाषा का प्रयोग किया जाता है।

6.2.1 मानक का तात्पर्य–मानक शब्द अंग्रेजी के स्टैन्डर्ड का हिन्दी रूप है। आचार्य रामचन्द्र वर्मा ने मानक की व्याख्या इस प्रकार की है। वह निश्चित या स्थिर किया हुआ सर्वमान्य मान या माप जिसके अनुसार किसी की योग्यता श्रेष्ठता गुण आदि का अनुमान या कल्पना की जाय। भाषा के संदर्भ में इस व्याख्या का विशेष महत्व नहीं है। मानक का भाषा के संदर्भ में तात्पर्य है। ऐसी भाषा जिसकी ध्वनि, व्यवस्था, शब्दावली, व्याकरण आदि की ऐसी सर्वमान्य वैज्ञानिक व्यवस्था हो जो आदर्श रूप में प्रत्येक भाषा–भाषी के लिए स्वीकार हो। हिन्दी क्षेत्र में अनेक उपभाषाएं तथा बोलियाँ है उनका अपना निजी व्याकरण है और भाषा–व्यवहार का निजी तौर तरीका, उनमें परस्पर भेद अवश्य है लेकिन एक बोली दूसरी बोली वाले व्यक्तियों के लिए पूरी तरह अग्राह्य नहीं है कुछ नितान्त स्थानीय प्रयोगों को छोड़कर ज्यादातर बोधगम्यता बनी रहती है। हिन्दी शब्द समूहवाची संज्ञा है इसके द्वारा मारवाड़ी, ब्रजी, बुन्देली, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, मगही आदि सभी बोलियों का बोध होता है। जिस भाषा क्षेत्र में अनेक बोलियाँ उपबोलियाँ होती है उनमें से वह बोली अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जो राजधानी क्षेत्र या उसके आसपास व्यवहार में आती रहती है। खड़ी बोली राजधानी दिल्ली के आसपास की बोली होने के कारण हिन्दी की मानक भाषा बनने के लिए अग्रसर हुई। मुगलकाल में ही खड़ी बोली ने अरबी, फारसी के शब्दो के मेलजोल से उर्दू भाषा का उदय हुआ जिसे हिन्दू मुस्लिमों के बीच एक सीमा तक सम्पर्क भाषा बनने का अवसर मिला। खड़ी बोली का संस्कार करके और अन्य बोलियो के कुछ तत्वो को सम्मिलित करके मानक हिन्दी का गठन किया गया। बोलियों से अलग करने के लिए इसके लिए स्टैन्डर्ड हिन्दी का प्रयोग किया गया। लल्लू लाल ने खड़ी बोली शब्द का प्रयोग किया है। चूँकि खड़ी बोली दिल्ली, मेरठ के आस–पास की बोली के लिए प्रयोग में आता है। इसलिए इसके लिए मानक हिन्दी या परिनिष्ठित हिन्दी की संज्ञाएं प्रचलित हुईं हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि मानक हिन्दी खड़ी बोली से काफी भिन्न हो गयी है। ग्रीब्स महोदय ने 1885 में व्याकरण प्रकाशित कराया जिसमें उन्होंने स्टैन्डर्ड हिन्दी की संज्ञा का प्रयोग किया इसके पूर्व केलाग महोदय ने सन् 1875 ई. में अपने व्याकरण में खड़ीबोली प्योर स्पीज, हाई हिन्दी शब्दो का प्रयोग किया। बोलचाल की हिन्दी को मानक स्वरूप प्रदान करने का श्रेय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालमुकुन्द गुप्त, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, महावीरप्रसाद द्विवेदी, आदि विद्वानों का है। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती

पत्रिका का सम्पादन करते हुए मानक हिन्दी के स्वरुप निर्धारण में सबसे बड़ी भूमिका का निर्वाह किया। डॉ. भोलानाथ तिवारी का कथन है कि किसी भाषा के मानक रुप का अर्थ है उस भाषा का वह रूप जो उच्चारण रूप रचना वाक्य–रचना, शब्द और शब्द–रचना, अर्थ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ प्रयोग तथा लेखन आदि की दृष्टि से उस भाषा के सभी नहीं तो अधिकांश सुशिक्षित लोगों द्वारा शुद्ध माना जाता है। 'मानकता अनेकता में एकता की खोज है। आरम्भिक वैयाकरणों में कामता प्रसाद गुरु, किशोरीदास बाजपेयी, रामचन्द्र वर्मा आदि ने व्याकरण लिखकर हिन्दी के मानकीकरण को मजबूत किया।

हिन्दी भाषा के मानकीकरण में ध्वनि, शब्द, शब्द–रूप, शब्दार्थ, वाक्य आदि का जो रूप स्थिर किया है उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

6.2.2 मानक हिन्दी की स्वन व्यवस्था–मानक हिन्दी में अ, इ, उ, ऋ, ह्रस्व स्वर हैं, आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ दीर्घ स्वर हैं।

इन स्वरों में अंग्रेजी से आगत ऑ स्वर को भी समाहित कर लिया गया है। अंग्रेजी के डॉक्टर के उच्चारण में इस स्वर की आवश्यकता है। तत्सम शब्दों में ऋ का लेखन किया जाता है लेकिन इसका वास्तविक उच्चारण लुप्त हो चुका है हिन्दी में इसे रि पढ़ा जाता है। यद्यनपि भाषा व्यवहार में ह्रस्व, ए, ओ का भी प्रचलन है लेकिन लेखन में इसकी उपेक्षा है, दक्षिण भारतीय भाषाओं में चूँकि ह्रस्व ए, ओ के प्रयोग है उनके लिए अलग से लिपि चिन्ह भी है अनुवाद आदि में उसकी जरूरत पड़ती है इसलिए इसके लिए लेखन में ऐ, ओ का विधान किया गया है। मानक हिन्दी मे ऐ, ओ का उच्चारण ब्रजभाषा से ग्रहण किया गया है जो खड़ीबोली से भिन्न है इसका उच्चारण ऐ, औ, संयुक्त स्वर के लिए प्रयुक्त होता है। मानक हिन्दी में जिन व्यंजनों को सम्मिलित किया गया है वे संस्कृत परम्परा से आगत है।

क वर्ग–क, ख, ग, घ, ङ

च वर्ग–च, छ, ज, झ, ञ

ट वर्ग–ट, ठ, ड, ढ,ण

त वर्ग–त, थ, द, ध, न

प वर्ग–प फ, ब भ, म

य, र, ल, व, स, श, ष ह

इन व्यंजनों में ड़, ढ़ उक्षिप्त मूर्धन्य व्यंजन है मानक हिन्दी के ये निजी व्यंजन है इनका प्रयोग शब्दारम्भ में नहीं होता, शब्द के मध्य या अन्त में ही होता है। फारसी से आगत क़, ख़, ग़, ज़ फ़ आदि ध्वनियों को भी मानक हिन्दी में सम्मिलित किया गया है। तालव्य श तथा मूर्धन्य ष का सही उच्चारण प्रायः नहीं होता है। लेखन में अवश्य इनकी शुद्धता दिखाई देती है।

6.2.3 शब्दावली–मानक हिन्दी में शब्दों के चार वर्ग है तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी।

तत्सम का अर्थ है संस्कृत के समान, शब्द, संस्कृत के बहुत से शब्द बिना ध्वनि परिवर्तन के हिन्दी में स्वीकृत हुए है। जैसे कमल, सुर, कवि, हरि, वायु, मति, नदी, उपवन आदि। आधुनिक ज्ञान–विज्ञान तथा प्राविधिक शब्दावली के निर्माण में संस्कृत के प्रकृति, प्रत्यय के अनुसार हजारों शब्द निर्मित किये गये हैं। इन शब्दों को वर्तमान अर्थ में पुराने संस्कृत कोशों में संग्रहीत नहीं किया गया। तद्भव शब्द संस्कृत शब्दों के ही रूपान्तरित प्रयोग है। हिन्दी के मौलिक शब्दावली की दृष्टि से तद्भव शब्दों का विशेष महत्व है। हिन्दी के क्रिया पद और सर्वनाम प्रायः तद्भव है। देशज शब्द देशी भाषाओं से ग्रहण किये गये हैं। द्रविड़, कोल, आदि भाषाओं से बहुत से शब्द हिन्दी में सम्मिलित हुए है जैसे बूडना, खिलना, गोड, लुकना, ढ़कना आदि। हिन्दी अपने आरम्भ काल से ही फारसी के सम्पर्क में विकसित हुई है। फारसी के साथ अरबी, तुर्की आदि से सम्बन्धित शब्द हिन्दी में समाविष्ट हुए हैं। चूँकि मुस्लिम काल में फारसी शासन की भाषा थी इसलिए बहुत से प्रशासनिक शब्द हिन्दी में अपनाये गये। मुस्लिम शासकों के बाद भारत में अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हुई। फलस्वरूप भारतीयों का सम्पर्क अंग्रेजी भाषा से हुआ। शासन प्रशासन तथा विज्ञान एवं प्रविधि से सम्बन्धित प्रचुर शब्दावली हिन्दी में आ गयी; उदाहरणार्थ–कोर्ट, अपील, जज, कलेक्टर, सूट, पैन्ट, इन्जन, टैपराइटर आदि।

कुछ शब्द पुर्तगाली, फ्रांसीसी आदि भाषाओं के भी मिलते हैं।

6.2.4 मानक हिन्दी की व्याकरणिक विशेषताएँ–मानक हिन्दी में कारकों की रूप–रचना स्वतन्त्र परिसर्गों के संयोजन से होती है, कर्त्ता कारक में ने परसर्ग का प्रयोग होता है। वर्तमान काल और भविष्यकाल में कर्त्ता का प्रयोग ने के बिना ही किया जाता है। जैसे–

श्याम जाता है

सीता जाती है

वह जायेगा

वह जायेगी

ने का प्रयोग भूतकाल में केवल सकर्मक क्रिया के साथ किया जाता है। जैसे–उसने खाना खाया।

मोहन ने पुस्तक पढ़ी

जिन वाक्यों में ने का प्रयोग होता है उनमें कर्म की प्रधानता होती है अर्थात् क्रिया का लिंग, वचन कर्त्ता के अनुसार न होकर कर्म के अनुसार होते हैं। जैसे–

मोहन ने मिठाईयाँ खायीं।

सीता ने मेला देखा।

कर्म कारक में को परसर्ग का प्रयोग किया जाता है। को के प्रयोग के बिना भी कर्म कारक का निर्देश किया जा सकता है। जैसे–

मोहन राम को मारता है (कर्म को का प्रयोग)

राम पुस्तक पढ़ता है (कर्म पुस्तक में को का प्रयोग नहीं किया गया है)

करण कारक में से या द्वारा परसर्ग लगाये जाते हैं। करण का प्रयोग रीति, मूल्य, तुलना, अंग विकार, मानसिक विकार, कारण, उद्देश्य आदि का बोध कराने के लिए किया जाता है, जैसे–आदमी कान से सुनता है।

रावण अपने अत्याचार से राक्षस समझा जाता था।

दूध मँहगे भाव से बिकता है।

वह जाति से छोटा भले ही है कर्म से महान है।

सम्प्रदान कारक को और 'के लिए' सम्प्रदान के परसर्ग हैं। जैसे–

इस आदमी के लिए यह भोजन पर्याप्त है।

सोना आभूषण के लिए है।

राम मोहन को पुस्तक देता है।

किसी वस्तु के अलग होने या वियोग होने की स्थिति में **अपादान** के परसर्ग 'से' का प्रयोग होता है। सूचना पाने, सुनने, सीखने, चुराने, भयभीत होने उत्पन्न होने आदि अनेक संदर्भों में अपादान से का प्रयोग होता है। जैसे–

नेता जनता से वोट माँगते हैं।

उसने आने से इन्कार कर दिया।

वह झंझटों से छुटकारा पा गया।

हरि अपने पद से हटा दिया गया।

चपरासी कल से काम शुरू करेगा।

सम्बन्ध–कारक किसी व्यक्ति या वस्तु से सम्बन्ध की सूचना देता है मानक हिन्दी में सम्बन्ध कारक के लिए का, के, की प्रयुक्त होते है। जैसे–

वह नीमा का घर है।

राम की बहन रो रही है।

उसका समान आग के हवाले कर दिया गया।

अधिकरण–यह कर्त्ता और कर्म का आधार है इसके लिए में, पर परसर्गो के प्रयोग होते हैं।

उदाहरणार्थ–

निधि घर में रहती है।

मेज पर किताब रखी है।

सृजन पढ़ने में ध्यान लगाता है।

मानक हिन्दी में लिंग दो है–पुंल्लिंग और स्त्रीलिंग। पुंल्लिंग को स्त्रीलिंग में परिणत करने के लिए आ, इ, इया, याँ, आइन, नी आदि अनेक प्रत्ययों का प्रयोग होता है जैसे बाला, लड़की, चिड़ियाँ, बानिन, शेरनी आदि।

मानक हिन्दी में लिंग निर्धारण की बड़ी समस्या है, खास तौर से ऐसे शब्दों में जो संस्कृत, अंग्रेजी आदि से हिन्दी में आये क्योंकि इन भाषाओं में दो लिंग से अधिक लिंगों का विधान है।

सर्वनाम–मानक हिन्दी के पुरुषवाची सर्वनाम निम्नलिखित हैं–

उत्तम पुरुष–	एकवचन	बहुवचन
	मैं	हम
	मुझे	हमें
मध्यम पुरुष–	तू, तुम	तुम, तुम लोग
	तुझ	तुम,
अन्य पुरुष–	यह	ऐ
	वह	वे

क्रिया–मानक हिन्दी में क्रिया–रचना में कृदन्ती प्रयोगों की बहुलता है। कुछ कृदन्ती तद्भव रूप भी प्रयोग में आते हैं। ज्यादातर क्रियाओं में मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया दोनों का विधान है। क्रिया में लिंग परिवर्तन का नियम है, यही नहीं कर्त्ता अथवा कर्म के वचन का भी उस पर प्रभाव पड़ता है। जैसे–

राम खाता है
सीता खाती है
लड़का जाता है
लड़कियाँ जाती हैं।

मानक हिन्दी में प्रमुख रुप से तीन काल हैं वर्तमान, भूत और भविष्य। पूर्णता, अपूर्णता, संभावना, निश्चितता आदि दृष्टियों से भी रूप रचना में भेद किया जाता है। आज्ञार्थ और विधिलिंग की क्रिया रचना भिन्न–भिन्न प्रकार से होती है।

वर्तमान काल

(1) वर्तमान (अपूर्ण)

मैं पढ़ता हूँ।	हम पढ़ते हैं।

(2) वर्तमान (आज्ञार्थ)

मैं पढ़ूँ।	हम पढ़ें।

(3) वर्तमान (सम्भावनार्थ)

अगर मैं पढ़ूँ	अगर हम पढ़ें।

(4) वर्तमान (पूर्ण)

मैं चला हूँ। हम चले हैं।

(5) वर्तमान (अपूर्ण संभाव्य)

मैं पढ़ता होऊँ। हम चले होवें।

(6) वर्तमान (पूर्ण संभाव्य)

मैं चला होऊँ। हम चले होवें।

(7) (भूत अपूर्ण)

मैं पढ़ता था। हम पढ़ते थे

(8) भूत (पूर्ण)

मैं चला था। हम चले थे।

(9) भूत (पूर्ण सम्भाव्य)

मैं चला होता। हम चले होते।

(10) भूत (अपूर्ण सम्भाव्य)

मैं पढ़ता होता हम पढ़ते होते।

(11) भूत (निश्चयार्थ)

मैं चला। हम चले

(12) भूत (सम्भावनार्थ)

मैं पढ़ता। हम पढ़ते।

(13) (भविष्यत् अपूर्ण)

मैं पढ़ता होऊँगा। हम पढ़ते होंगे।

(14) (भविष्यत् पूर्ण)

मैं पढ़ चुकूँ हम पढ़ चुकेंगे।

(15) भविष्यत् (निश्चयार्थ)

मैं पढूँगा हम पढ़ेंगे।

(16) भविष्यत् (आज्ञार्थ)

तू पढ़ना तुम पढ़ना।

काल रचना में प्रयुक्त कृत् प्रत्यय मानक हिन्दी में वर्तमान काल में 'त' प्रत्यय जिसका बहुवचनीय रुप 'ते' होता है का प्रयोग किया जाता है। पुंल्लिंग स्त्रीलिंग एवं वचन के भेदानुसार ता, ते, ती इसके रूपान्तरण है। स्त्रीलिंग बहुवचन में मुख्य क्रिया में कोई परिवर्तन नहीं किया जाता, वर्तमान कृदन्त के साथ है, हैं, हो, हुँ आदि सहायक क्रियाओं के प्रयोग होते है।

भूत कृदन्त में या का प्रयोग होता है जैसे गया, गयी, गये। भूत में था, थे, थी, सहायक क्रियाओं का विधान है, भविष्यकाल में गा, गे गी के प्रयोग होते हैं जैसे वह पढ़ेगा, वे पढ़ेंगे, तू पढ़ेगा, तुम पढ़ोगे, हम पढ़ेंगे।

मानक हिन्दी में संयुक्त क्रियाओं का प्रचुर प्रयोग होता है। संयुक्त क्रियाओं में एक क्रिया अपने मूल अर्थ को छोड़ देती है जैसे भाग गया, तोड़ डाला, उठ बैठा, खा लिया, सोता रहा आदि। संयुक्त क्रियाओं के प्रयोग वर्तमान तथा भूत दोनों में होते हैं।

विशेषण और विशेष्य–हिन्दी में संस्कृत की तरह विशेषण और विशेष्य सदैव समान लिंग वचन के नहीं होते है। आकारान्त विशेषण में पुल्लिंग, स्त्रीलिंग तथा वचन का भेद किया जाता है स्त्रीलिंग में वचन भेद नहीं होता है जैसे अच्छा लड़का

अच्छे लड़के

अच्छी लड़कियाँ

अच्छी लड़कियां

अन्य विशेषणों में विशेष्य का प्रभाव नहीं दिखाई देता, जैसे सुन्दर लड़का, सुन्दर लड़के, सुन्दर लड़की, सुन्दर लड़कियाँ।

क्रिया विशेषण–क्रिया विशेषण अव्यय जैसे, होते है उनमें बिना किसी परिवर्तन के वाक्य प्रयोग किया जाता है, जैसे–

वह आज आयेगा।

सीता कल वाराणसी जायेगी।

अब मुझसे काम नहीं होगा।

वह दूर चला गया।

वाक्य–रचना–मानक हिन्दी में वाक्य विन्यास में पहले कर्त्ता, फिर कर्म उसके बाद मुख्य क्रिया, पुनः सहायक क्रिया रखी जाती है। जैसे–

राम मोहन को मारता है।

विविध कारकों को मिलाकर वाक्य–रचना की स्थिति इस प्रकार है–

राम ने लंका के राजा रावण को सीता के अपहरण के अपराध में बाणों से मार दिया।

विशेषण और विशेष्य को एक साथ रखने का विधान है इसी तरह क्रिया विशेषण को भी क्रिया के समीपस्थ होने की अपेक्षा है। कुछ पदो का परसर्ग के साथ स्थानान्तरण करने से अर्थ की हानि नहीं होती जैसे–रावण ने जंगल से सीता का अपहरण किया।

इस वाक्य में रावण कर्त्ता है अपहरण कर्म है। कर्त्ता का प्रयोग आरम्भ में है और कर्म का वाक्यान्त में। यदि इस वाक्य में पदों का स्थान परिवर्तन किया जाय जैसे रावण ने सीता का अपहरण जंगल से किया तो अर्थ की विशेष हानि नहीं होती। कुछ वाक्यों में कर्त्ता कर्म के स्थान परिवर्तन का कारकीय दृष्टि से अन्तर पैदा हो जाता है। जैसे–

राम श्याम को मारता है।

श्याम राम को मारता है।

6.3 सारांश–हिन्दी प्रदेश बहुत विस्तृत है। इसीलिए उसके अन्तर्गत अनेक उपभाषाएँ तथा बोलियाँ है। उनमें संरचनात्मक भेद भी मौजूद है। अतः अनेक बोलियों के तत्त्वों के समावेश से एक ऐसी मानक भाषा की आवश्यकता हुई जो सभी प्रदेशों में समान रूप से समझी जाए। मानक भाषा के लिए राजधानी के आस–पास की बोली खड़ीबोली को स्वीकार किया गया। यह बोली अपने खड़ेपन के कारण आधुनिक शासन–प्रशासन के लिए अधिक उपादेय प्रतीत हुई। मुगलकाल में ही यह हिन्दू–मुसलमानों के बीच सम्पर्क का कार्य रेख्ता तथा उर्दू के रूप में कर रही थी। खड़ीबोली का मानकीकरण अवधी, ब्रज आदि बोलियों के तत्त्वों के समावेश से हुआ है। राजभाषा के रुप में स्वीकृत फारसी का भी इसमें योगदान है। बहुत से अंग्रेजी तथा देशी भाषाओं के शब्द भी इसमें सम्मिलित किए गए हैं। इसका ध्वनि गठन, व्याकरण आदि एकदम वही नहीं है जो खड़ीबोली (या कौरवी) के ग्रामीण रुप का है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश परम्परा से आगत ध्वनियों तथा शब्दों के साथ फारसी, अंग्रेजी के प्रभाव से इसका भाषिक गठन किया गया है। शिवप्रसाद सितारे हिन्द, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त आदि आरंभिक गद्य लेखकों ने मानकीकरण में विशेष योगदान किया है।

6.4 संदर्भ ग्रंथ–

1. हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य–प्रो. रामकिशोर शर्मा
2. हिन्दी भाषा–भोलानाथ तिवारी
3. हिन्दी भाषा–डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया।

6.5 प्रश्नावली

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मानक भाषा का क्या तात्पर्य है?
2. मानक हिन्दी के कितने नाम सुझाए गए?
3. मानक हिन्दी के पुरुषवाची सर्वनामों का उल्लेख कीजिए?
4. अपादान का प्रयोग कहाँ किया जाता है।
5. 'ने' के प्रयोग का क्या नियम है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मानक हिन्दी के स्वरूप का विवेचन कीजिए।
2. मानक हिन्दी की काल–रचना तथा भाव–रचना पर प्रकाश डालिए।
3. मानक हिन्दी के ध्वनिगठन तथा शब्द योजना पर प्रकाश डालिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. ऑ ध्वनि किस भाषा से आई है–

(क) अंग्रेजी (ख) उर्दू

(ग) अरबी (घ) संस्कृत

2. ऐ, औ का मानक उच्चारण किस बोली का है–

(क) खड़ीबोली (ख) अवधी

(ग) मैथिली (घ) ब्रजभाषा

3. 'खाता है' के विषय मे कौन कथन गलत है–

(क) वर्तमान कृदन्त + वर्तमान सहायक क्रिया

(ख) तिङन्त तथा सहायक क्रिया

(ग) सकारात्मक वाक्य, कर्त्ता रहित

(घ) एक वचन की मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया

4. हिन्दी में लिंग की समस्या का कारण है–

(क) व्याकरण की अव्यवस्था

(ख) विविध भाषाओं से आगत शब्द

(ग) विविध भाषाओं के आगत शब्दों का लिंग भेद

(घ) उपर्युक्त में से कोई कोई नहीं

उत्तर–1. (क), 2. (घ), 3. (ख), 4. (ग)

इकाई 7
हिन्दी ध्वनियाँ, शब्द रचना और प्रकार

इकाई की रूपरेखा

7.0 प्रस्तावना

7.1 उद्देश्य

7.2 हिन्दी ध्वनियाँ

- 7.2.1 स्वर
- 7.2.2 व्यंजन
- 7.2.3 स्वर संयोग
- 7.2.4 व्यंजन संयोग

7.3 शब्द–रचना

- 7.3.1 उपसर्ग
- (क) संस्कृत उपसर्ग
- (ख) हिन्दी उपसर्ग
- (ग) विदेशी भाषा से आए उपसर्ग
- 7.3.2 प्रत्यय
- (क) कृत प्रत्यय
- (ख) तद्धित प्रत्यय
- (ग) हिन्दी में विदेशी प्रत्यय
- 7.3.3 समास

7.4 शब्दों के प्रकार

- 7.4.1 तत्सम
- 7.4.2 तद्भव
- 7.4.3 देशी
- 7.4.4 विदेशी
- 7.4.5 संकर
- 7.4.6 विदेशी तद्भव

7.5 सारांश

7.6 प्रश्नावली

7.0 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने मानक हिन्दी के विषय में जानकारी प्राप्त की। मानक हिन्दी की ध्वनियाँ, शब्द–रचना, शब्दों के प्रकार आदि पर इस इकाई में विस्तार से विचार किया गया है। हिन्दी भाषा का ध्वनिक गठन परम्परा से आगत ध्वनियों से हुआ है किन्तु कुछ ध्वनियों में उच्चारण का अन्तर आ गया है। हिन्दी ने संस्कृत तथा प्राकृत–अपभ्रंश दोनों की भाषिक परम्पराओं को अपनी प्रकृति के अनुसार परिणत करके स्वीकार किया है। फारसी, अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं तथा भारत की अनार्य देशी भाषाओं का भी उस पर प्रभाव है। कई ध्वनियाँ तथा शब्द विदेशी भाषाओं से आए हैं।

7.1 उद्देश्य

इस इकाई में आप मानक हिन्दी की ध्वनियों अर्थात् स्वर–व्यंजन की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। हिन्दी शब्दों के निर्माण में प्रत्यय, उपसर्ग तथा समास की भूमिका का अध्ययन करेगे तथा शब्दों की विविध प्रकारों का परिचय प्राप्त करेंगे। किसी भाषा की संरचना दो प्रमुख आधारों ध्वनि और शब्द का ज्ञान अति आवश्यक होता है।

7.2 हिन्दी ध्वनियाँ

7.2.1 स्वर

हिन्दी में स्वर अधिकांशतः वैदिक परम्परा से आये हैं। मानक हिन्दी में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, ऋ आदि स्वर ध्वनियों का प्रयोग होता है अंग्रेजी के प्रभाव से ऑ को भी सम्मिलित किया गया है। हिन्दी में प्रयुक्त स्वरों की निम्न लिखित विशेषताएँ हैं।

मात्रा की दृष्टि से हिन्दी स्वरों को दो भागों में बाँटा गया है–ह्रस्व – ऐसे स्वर जिनके उच्चारण में एक पल लगता है। इन स्वरों की एक मात्रा मानी जाती है। अ, इ, उ, ऋ, ह्रस्व स्वर माने गये हैं।

दीर्घ स्वर–इनके उच्चारण में ह्रस्व की तुलना में दुगुना समय लगता है। इसलिए इनकी दो मात्राएँ मानी जाती हैं। इन्हें दीर्घ स्वर कहते हैं। आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ आदि दीर्घ स्वर हैं उच्चारण की दृष्टि से स्वर की मात्राएँ दो से अधिक भी होती हैं जिन्हें प्लुत कहते हैं। लेकिन मानक हिन्दी में दीर्घता अर्थभेदक है अतः उसकी स्वनमिक महत्ता है। प्लुत स्वरों में अर्थभेद पैदा करने की क्षमता नहीं है जैसे कम = काम, धन = धान किला = कीला यदि ध के उच्चारण में अधिक समय देकर उच्चारण का समय बढ़ा दिया जाय तो नया शब्द नहीं बनता है। उच्चारम मे जिह्वा की स्थिति के अनुसार हिन्दी स्वरों के तीन भेद हैं।

अग्रस्वर–इनके उच्चारण में जीभ का अगला भाग उठता है उदाहरणार्थ–इ, ई, ए, ऐ।

मध्य स्वर–इनके उच्चारण में जीभ का मध्य भाग उठता है उदाहरणार्थ–अ

पश्च स्वर–इनके उच्चारण में जीभ का पिछला भाग उठता है जैसे–आ, ओ, उ, ऊ, ओ, औ।

मुखविवर के खुलने के आधार पर स्वरों के चार भेद हैं–

विवृत्त–मुँह एकदम खुला–आ

अर्धविवृत्त–मुँह आधा खुला–अ

अर्धसंवृत्त–थोड़ा भिचा–ए, ओ

संवृत्त–लगभग बन्द–इ, ई, उ, ऊ

ओष्ठों की स्थिति के अनुसार–स्वर के दो भेद हैं–

वृत्तमुखी (गोल ओष्ठ की स्थिति) ऊ, ओ, औ

अवृत्तमुखी–इ, ई, आ, ऐ

उच्चारण स्थान की दृष्टि से–

कोमल तालव्य–अ, आ

कठोर तालव्य–इ, ई

कंठ तालव्य–ए, ऐ

कंठोष्ठ्य–ओ, औ

ओष्ठ्य–उ, ऊ

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ मूल स्वर हैं तथा ऐ, औ, संयुक्त स्वर है। इन समस्त स्वरों को मौखिक कहा जाता है यदि इनमें अनुसार लग जाता है तो अं, ऊं, इ आदि अनुनासिक हो जाते हैं।

7.2.2 व्यंजन–उच्चारण स्थान की दृष्टि से व्यंजनों के अधोलिखित भेद हैं–

कोमल तालाव्य–क, ख, ग, घ, ङ

मूर्धन्य–ट, ठ, ड़, ढ़, ड, ढ, ण, ष

तालु वर्त्स्य–च, छ, ज, झ, ञ, श

तालव्य–य

वर्त्स्य–न, न्ह, स, ज, ल्ह, र, न्ह

दन्त्य–त, थ, द, ध

ओष्ठ्य–प, फ, ब, भ, म, व

दन्त्योष्ठ्य–फ, ब

जिह्वामूलीय–क़, ख़, ग़

नासिक्य–ङ, ञ, ण, न म

काकल्य–ह

श्वास के आभ्यान्तर (भीतरी) प्रयत्न के अनुसार–

स्पर्श–क से म तक

स्पर्श–संघर्षी–च वर्ग के उच्चारण में श्वास स्पर्श करके रगड़ के साथ (संघर्षण करता) निकलता है। इसीलिए च, छ, ज, झ, ञ को स्पर्श–संघर्षी कहते हैं।

संघर्षी–कुछ ध्वनियाँ ऐसी हैं जिनके उच्चारण में जीभ बहुत हल्का स्पर्श करती है। श्वास विशेष घर्षण के साथ निकलता है जैसे श, ष, स, ह, ख, ग, ज फ।

पार्श्विक–कभी–कभी कुछ ध्वनियों के उच्चारण में हवा जीभ के पक्षों (पार्श्व) से निकल जाती है, इन्हें पार्श्विक ध्वनि कहते हैं, जैसे ल।

लुंठित–इस प्रकार की ध्वनियों में श्वास जीभ की नोंक से लुढ़कता हुआ निकलता है, जैसे–र

उत्क्षिप्त–इस प्रकार की ध्वनियों के उच्चारण में जीभ का उत्क्षेप होता है। जीभ मूर्धा से टकरा कर थोड़ा आगे खिसक जाती है, जैसे–ड़, ढ़

अल्पविवृत्त–इसमें मुख द्वार थोड़ा खुला रहता है–जैसे–य, व

बाह्य प्रयत्न के अनुसार–

सघोष–ऐसी ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ परस्पर निकट रहती हैं जिससे कंपन या तरंग पैदा होती है–जैसे ग, घ, ङ, ज, झ, ञ, ड, ढ, ण, द, ध, न ब, भ, म, य, र, ल, व।

अघोष–इनके उच्चारण में स्वरतन्त्रियाँ दूर रहती हैं अतः कंपन नहीं होता–क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष।

बाह्य प्रयत्न के अन्तर्गत प्राणत्व के आधार पर भी ध्वनियों का वर्गीकरण किया जाता है। प्राण का शाब्दिक अर्थ वायु या वायु की शक्ति है। कुछ व्यंजनों के उच्चारण में श्वास–वायु का जोर अधिक लगता है कुछ में कम। जिनके उच्चारण में अधिक बल लगता है उन्हें महाप्राण और जिनमें कम बल लगता है उन्हें अल्पप्राण कहते हैं। महाप्राण में ह ध्वनि का किंचित समावेश रहता है। हिन्दी व्यंजनों की स्थिति इस प्रकार है–

अल्पप्राण–क, ग, ङ, च, ज, ञ, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, म, ड़, र, ल

महाप्राण–ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, फ, भ, ढ

(अर्थात् वर्ग का पहला वर्ण अल्पप्राण, दूसरा महाप्राण, तीसरा अल्पप्राण, चौथा महाप्राण तथा पाँचवाँ अल्पप्राण है।)

अनुनासिकता के आधार पर हिन्दी ध्वनियों के तीन भेद हैं–

मौखिक–जिसमें मुख से हवा निकले जैसे–क, ख, ट, ठ आदि।

अनुनासिक–जिसमें मुख और नाक दोनों से हवा निकले जैसे कँ, खँ, टँ आदि।

नासिक्य–जिसमें हवा नाक से ही निकले जैसे–ङ, ञ, ण, न म (अर्थात् वर्ग के पाँचवें वर्ण)

7.2.3 स्वर–संयोग–जब दो स्वर एक साथ आते हैं तो उन्हें स्वर संयोग कहते हैं, जैसे–आई, कई, मई। इन शब्दों में आ + ई, क + अ + ई, म + अ + ई के संयोग है। हिन्दी में तीन स्वरों का भी संयोग हो सकता है–जैसे–आइए, जाइए (ज् + आ + इ + ए)

7.2.4 व्यंजन संयोग–दो व्यंजन एक साथ जुड़कर एक गुच्छ बनाते हैं। दोनों व्यंजन एक साँस में एक अक्षर की तरह उच्चरित होते हैं जैसे–अंत, सन्त, प्यास, स्कंध, स्तुति, स्पष्ट।

संयोग–जब दो व्यंजनों का उच्चारण साथ–साथ किया जाए जैसे–कमला, विमला, जनता (उच्चारण जन्ता, मन्दा, सल्टा

व्यंजन संयोग में कुछ विशेष ध्यातव्य तथ्य हैं–दो महाप्राण व्यंजन का संयोग होने पर एक अल्पप्राण हो जाता है क्योंकि दो महाप्राण व्यंजनों का उच्चारण एक साथ नहीं हो पाता है जैसे–युद्ध, रग्घू, रक्खा आदि।

शब्द विन्यास में सभी व्यंजन आदि में नहीं आते हैं जैसे–ङ्, ण, ढ़, ड़।

शब्दान्त मे महाप्राण व्यंजनों की महाप्राणता क्षीण हो जाती है जैसे भूख (उच्चारण भूक) दूध (उच्चारण दूद)।

व और ब, परस्पर विनिमय की ध्वनियाँ हैं। 'व' के स्थान पर उच्चारण 'ब' किया जाता है जैसे–राम को वनवास हो गया (उच्चारण में राम को बनबास हो गया)

मानक हिन्दी में स, श का स्पष्ट उच्चारण होता है किन्तु 'ष' का उच्चारण 'श' की तरह किया जाता है। व्रज तथा अवधी क्षेत्र के लोग ष को ख या स की तरह बोलते हैं।

7.3 शब्द–रचना–हिन्दी में अन्य अनेक प्रतिष्ठित भाषाओं की तरह प्रत्यय तथा उपसर्ग को जोड़कर नए–नए सार्थक शब्दों के निर्माण की क्षमता है।

7.3.1 उपसर्ग–शब्द के आरंभ में जुड़कर शब्द को नयी आकृति तथा नया अर्थ प्रदान करने वाले भाषिक तत्त्व उपसर्ग हैं। हिन्दी में संस्कृत के उपसर्ग के साथ हिन्दी के निजी उपसर्ग भी हैं। कुछ उपसर्ग विदेशी भाषाओं से भी आए हैं।

(क) संस्कृत उपसर्ग–इन उपसर्गों का प्रयोग तत्सम शब्दों में होता है। बहुत से परिभाषिक शब्द इन्हीं उपसर्गों के द्वारा बनाए गए हैं। संस्कृत के 22 उपसर्ग हैं जिनके द्वारा शब्दों का निर्माण किया गया है।

प्र–प्रकाश, प्रहार, प्रभार, प्रकार्य, प्रचलन, प्रबुद्ध

परा–पराकाष्ठा, पराभव, पराक्रम

अप–अपमान, अपकर्ष, अपहरण, अपकीर्ति, अपयश

सम्–संहार, संस्कार, सम्मान, समादर

अनु–अनुगमन, अनुमान, अनुचर, अनुभव, अनुकरण

अव–अवतार, अवनत, अवगत

आ–आजीवन, आवास, आगत

निस–निस्तार, निश्चय, निष्कासन, निष्कर्ष

निर्–निराहार, निर्दोष, निराकरण, निर्दय

दुस्–दुस्सह, दुष्काल, दुष्कर्म

दुर–दुराचरण, दुराग्रह, दुर्भिक्ष, दुर्दैव

अति–अत्यन्त, अतिचार, अतीत, अत्यावश्यक

अधि–अधिगम, अधिकार, अधिष्ठान

अभि–अभिगमन, अभिधान, अभ्यागत

अपि–अपिकर्ण, अपिधान

उत्–उत्कर्ष, उद्भव, उच्चारण, उत्सव

उप–उपयोग, उपहार, उपकार

प्रति–प्रतिकार, प्रतिष्ठा, प्रतिगमन

वि–विज्ञान, वियोग

नि–निक्षेप, निपात, निकाय, निकास

सु–सुयश, सुजन, सुबुद्धि

परि–परिसर, परिगणित

कुछ अव्यय तथा उपसर्ग भी उपसर्ग के समान प्रयोग में लाए जाते हैं जैसे–

अन्तः–अन्तर्धान, असत्–असत्कार, अलं–अलंकार आवि–आविष्कार, कु–कुतर्क, चिर–चिरकाल, तद्–तदाकार

(ख) हिन्दी उपसर्ग–ये उपसर्ग तद्भव शब्दों के साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे–अ = अकाज, अन् = अनमोल, अनपढ़, अध = अधमरा, अधजला, उन् = उन्तीस, उन्तालीस, औ = औगुन, औढर, कु = कुपूत, दु = दुबला, दुधारा, स = सपूत

(ग) विदेशी भाषा से आए उपसर्ग–ज्यादातर उपसर्ग फारसी से आए हैं; जैसे–कम = कमजोर, खुश = खुशबू, गैर = गैर हाजिर, दर = दरअसल, ना = नापसन्द, ब = बखूबी, बे = बेमान, बद = बदचलन, ला = लापरवाह, हर = हरसाल आदि।

7.3.2 प्रत्यय–किसी शब्द या धातु के अर्थ में परिवर्तन लाने के लिए प्रत्यय जोड़े जाते हैं। हिन्दी के प्रत्यय शब्द के अन्त में जोड़े जाते हैं। प्रत्यय दो प्रकार के हैं।

(क) कृत प्रत्यय–क्रिया या धातु में लगने वाले प्रत्यय को कृत प्रत्यय कहते हैं और उसमें जो शब्द बनता है उसे कृदन्त कहते हैं जैसे–विद + अ प्रत्यय (गुण सहित) वेद, चुर् धातु + अ प्रत्यय = चोर, बूझ (ना) क्रिया + अक्कड़, प्रत्यय = बुझक्कड़।
(ख) तद्धित प्रत्यय–क्रिया से भिन्न संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि में लगने वाले प्रत्यय को तद्धित कहते हैं। इस प्रत्यय से जो शब्द बनता है उसे तद्धितान्त कहते हैं; जैसे–गरम (विशेषण) + आहट प्रत्यय = गरमाहट, मीठा = आस = मिठास, लड़क = पन = लड़कपन।

संज्ञावाची कृत् प्रत्यय

प्रत्यय	धातु	कृदन्त शब्द
अ	चल धातु + अ	चाल (वृद्धि सहित)
अन्त	गढ़ (ना) क्रिया + अन्त	गढ़न्त
अक	पठ धातु + अक	पाठक
आ	फिर (ना) क्रिया + आ	फेरा
आई	खोद (ना) क्रिया + आई	खुदाई
अन	चल (ना) क्रिया + अन	चलन
आन	थक (ना) + आन	थकान
आप	मिल (ना) + अप	मिलाप
आऊ	बिक (ना) + आऊ	बिकाऊ
आवट	लिख (ना) + आवट	लिखावट
ई	बोल (ना) + ई	बोली
औता	समझ (ना) + औता	समझौता
त	बच (ना) + त	बचत
नी	कर (ना) + नी	करनी

कतृवाचक कृदन्त

अक्कड़	पी + (ना) क्रिया + अक्कड	पियक्कड
आक	तैर + (न) क्रिया + आक	तैराक
आ	लड़ + (ना) क्रिया + आ	लड़ाकू
ईया	जड़ + (ना) क्रिया + इया	जड़िया
एरा	लूट + (ना) क्रिया + एरा	लुटेरा
ओड	हँस + (ना) क्रिया + ओड़	हँसोड़
विशेषवाची कृन्दन्त		
आ	कट + आ	= कटा
आऊ	विक + आऊ	= बिकाऊ

इयल	मर + इयल	= मरियल

संज्ञावाची तद्धितान्त

अ	कुशल + अ	= कौशल (वृद्धि सहित)
आ	बोझ + आ	= बोझा
आई	पंडित + आई	= पंडिताई
आका	धड़ + आका	= धड़ाका
आटा	सर्र् + आटा	= सर्राटा
आन	ऊँचा + आन	= ऊँचान
आपा	बूढ़ा + आपा = बुढ़ापा	
आयत	पंच + आयत = पंचायत	
आरा	निपट + आरा = निपटारा	
आवट	आम + आवट = अमावट	
आहट	कडु + आहट = कडुवाहट	
इमा	रक्त + इमा = रक्तिमा	

इया, इ, उ, ओला, औता, क, पन ऋ आदि अन्य तद्धित प्रत्ययों के भी प्रयोग होते हैं।

विशेषणवाची तद्धितान्त–इस वर्ग में ज्यादातर संस्कृत के प्रत्यय है जिनका प्रयोग तत्सम शब्दों में होता है।

इक	इतिहास + इक	= ऐतिहासिक
इति	कंटक + इति	= कंटकित
इम	अंत + इम	= अंतिम
य	मान + य	= मान्य
इल	फेन + इल	= फेनिल
ईन	ग्राम्य + ईन	= ग्रामीण
उक	काम + उक	= कामुक
ठ	कर्म + ठ	= कर्मठ
तन	पुरा + तन	= पुरातन
त्य	पूर्व + त्य	= पौर्वात्य
मय	जल + मय	= जलमय
ल	मंजु + ल	= मंजुल
वान	गुण + वान	= गुणवान

क्रिया विशेषण वाची तद्धितान्त शब्द

तया	विशेष + तया	विशेषतया
सर्व	सर्व + दा	सर्वदा
पूर्वक	दया + पूर्वक	दयापूर्वक
पुत्र	पुत्र + वत	पुत्रवत
सात	आत्म + सात	आत्मसात

(ग) हिन्दी में विदेशी प्रत्यय

आना – घराना

कार – जानकार

दान – (दानी) (पात्र सूचक)–पानदान, गोंददानी, सिंगारदान

दाँ–ज्ञानी के अर्थ में) उर्दूदाँ

बन्द–मोहरबन्द

खाना–डाकखाना

बाज –बैठकबाज

7.3.3 समास–समास के द्वारा भी दो पदो को एक साथ लाकर नया अर्थ देने का विधान है। हिन्दी में संस्कृत परम्परा से छः समास आये हैं–अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि, द्वन्द्व।

(1) अव्ययीभाव–अव्ययीभाव का अर्थ है अव्यय हो जाना। इसमें पहला अथवा दूसरा पद अव्यय होता है। अव्यय वाला पद प्रायः प्रधान रहता है। संज्ञा विशेषण तथा अव्ययों की पुनरुक्त यदि क्रिया–विशेषण के रूप में हो तो उसे भी अव्ययी भाव समास माना जाता है।

समस्त पद	विग्रह
निडर	नि + डर = डर से रहित
दिनोदिन	दिन–दिन
रातोरात	रात–रात (हर रात के अर्थ में)
धड़ाधड़	धड़ के बाद धड़ (आवाज का क्रम)
आमरण	मरण पर्यन्त
यथाशक्ति	**शक्ति के अनुसार**

लिखते–लिखते, खाते–खाते, आप ही आप आदि अव्ययी भाव समास हैं।

तत्पुरुष–जिस समास में दूसरा पद प्रधान है उसे तत्पुरुष कहते हैं। इसके अनेक भेद उपभेद है।

(क) समानाधिकरण तत्पुरुष–इसमे दोनों पद समान अधिकरण अर्थात् समान विभक्ति में रहते हैं तथा एक ही वस्तु का निर्देश करते हैं। इसी को कर्मधारय समास की भी संज्ञा दी जाती है जैसे–भलमानस

(ख) व्यधिकरण तत्पुरुष–इसमे दोनों पद भिन्न–भिन्न विभक्तियों में रहते हैं और भिन्न पदार्थों का निर्देश करते हैं जैसे बैलगाड़ी। इसके छः भेद हैं–द्वितीया तत्पुरुष–इसमें कर्म परसर्ग का लोप रहता है, जैसे, अवकाश प्राप्त = अवकाश को प्राप्त

तृतीया तत्पुरुष–इसमें करण परसर्ग का लोप रहता है जैसे मदान्ध–मद से अन्ध, जरा से जर्जर = जरा जर्जर, कनकटा = कान से कटा, अकाल पीड़ित = अकाल से पीड़ित।

चतुर्थी तत्पुरुष–इसमें सम्प्रदान के परसर्ग का लोप रहता है, जैसे देश के लिए हित = देशहित, बलि–पशु = बलि के लिए पशु, विद्यत्गृह = विद्यना के लिए गृह।

पंचमी तत्पुरुष–इसमें अपादान के परसर्ग का लोप रहता है, जैसे–देश निकाला = देश से निकाला, धर्म भ्रष्ट = धर्म से भ्रष्ट

षष्ठी तत्पुरुष–इसमें सम्बन्ध के परसर्ग का लोप रहता हैं जैसे–राजघर = राजा का घर

सप्तमी तत्पुरुष–इसमें अधिकरण के परसर्ग का लोप रहता है जैसे आप बीती = आप पर बीती

नत्र तत्पुरुष (निषेध) अटूट = न टूटने वाला

कर्मधारय–समानाधिकरण तत्पुरुष को ही कर्मधारय कहा जाता है। इसमें एक पद अथवा दोनों विशेषण रहते हैं। विशेषण–विशेष्य के अलावा उपमानोपमेय भाव भी कर्मधारय समास में हो सकता है। उदाहरण स्वरूप

समस्त पद	विग्रह
महापुरुष	महान पुरुष
ऋषिवर	ऋषियों में श्रेष्ठ
घनश्याम	घन की तरह श्याम
चरणकमल	कमल के समान चरण

द्विगु–पूर्वपद संख्यावाची होने पर कर्मधारय का ही एक उपभेद है संख्या पूर्वपद समास द्विगु समास के नाम से जाना जाता है।

जैसे– त्रिभुवन–तीनों भुवनों का समाहार

त्रिफला–तीन फलों का समाहार

सतसई–सात सौ वाली

बहुब्रीहि–इस समास में न तो पूर्वपद प्रधान होता है और न उत्तर पद बल्कि अन्य पद की ही प्रधानता रहती है; जैसे–

तपोधन = तप है धन जिसका

अनुचित = जो उचित नहीं है

द्वन्द्व–इसमें दोनों पद प्रधान रहते हैं। एक साथ कई पद हो सकते है जैसे–

दाल–भात, भूल–चूक, खान–पान आदि

एक ही अर्थ के द्योतक दो शब्दों का भी द्वन्द्व समास होता है जैसे बाल बच्चा।

7.4 शब्दों के प्रकार–हिन्दी में चार प्रकार के शब्द हैं।

7.4.1 तत्सम–संस्कृत के समान शब्द को तत्सम कहते हैं, इनकी दो कोटियाँ हैं। एक कोटि उन शब्दों की है जिनका प्रयोग संस्कृत वाङ्मय में है। दूसरी कोटि उन शब्दों की है जो समय–समय पर संस्कृत की प्रकृति और प्रत्यय के आधार पर गढ़े गए हैं। कर्म, देवता, सत्य, अर्ध, रात्रि, दिवस, वायु, पर्वत, गिरि, नदी, उपवन, वन, सन्ध्या, शत्रु, मित्र, पिता आदि अनेक शब्द परम्परागत तत्सम है। अधीक्षक, अभियंता, परिचालक, निदेशक, प्रशासक, प्रभाग आदि निर्मित हैं।

7.4.2 तद्भव–ऐसे शब्द जो ध्वनि परिवर्तन के कारण नए रुप में ढल गए हैं। इनका भी मूल स्रोत संस्कृत ही है जैसे–मग, सच, रात, पाहन, पत्थर मानुस, गाभिन, हाथ, मुँह, आँख, थान, धान, गेहूँ, आदि। हिन्दी के क्रिया पद और सर्वनाम तद्भव हैं। संज्ञा पदों की भी पर्याप्त संख्या है।

7.4.3 देशी–देशी या देशज शब्दों की परिभाषा विवादास्पद है। कुछ विद्वान् मानते हैं कि जिन शब्दों की संस्कृत से व्युत्पत्ति सिद्ध करना संभव नहीं है, वे देशज हैं। हेमचन्द्र, वीम्स, भण्डारकर इसी मत के समर्थक हैं। सुनीति कुमार चटर्जी का मानना है कि अनार्य भाषाओं से आगत शब्द देशी हैं। इसके अन्तर्गत तीन प्रकार के शब्द हैं–

1. ऐसे शब्द जिन की व्युत्पत्ति सिद्ध नहीं होती है; जैसे–पेड़, धब्बा, झंझट, पेठा।

2. ऐसे शब्द जो अनार्य भाषाओं के लिए गए हैं–गोड़, लुकना, बूडना, गोद, कौड़ी।

3. ऐसे शब्द जिन्हें जनता ने बनाया है, जैसे– चूं चूं, पों पों, सटकना, डगमग आदि।

7.4.4 विदेशी शब्द–हिन्दी में फारसी, अंग्रेजी, अरबी, तुर्की आदि अनेक भाषाओं के शब्द आ गए हैं–

फारसी शब्द–अदालत, इजलास, सरकार, चपरासी, खजांची, हाकिम, सिपाही, हवलदार, सिक्का, कमीज, कुर्ता, पाजामा, साफा, चादर, बरफी, हलवा, गुलाब जामुन, मुहल्ला, परगना, देहात, बुखार, जुकाम, जरुर, शायद, नरम, नाखुश आदि।

तुर्की–चाकू, कैंची, गलीचा, उर्दू, चम्मच, दरोगा आदि।

अंग्रेजी–अपील, इन्जन, रेल, कम्प्यूटर, शर्ट, पैंट, कैमरा, क्लोरोफार्म।

पुर्तगाली–आलमारी, आया, पाव, पादरी, पिस्तौल,

फ्रांसीसी–कूपन, बेसिन, अंग्रेज

डच–तुरुप, बम

चीनी–चाय, लीची

जापानी–रिक्शा

7.4.5 संकर शब्द–कुछ शब्द ऐसे हैं जो देशी प्रत्यय या शब्द तथा विदेशी प्रत्यय या शब्द के मेल से बने हैं; जैसे–चोर दरवाजा, पानदान, हेड मुंशी, हेड पंडित, अजायबघर, रेलगाड़ी, धन–दौलत आदि।

7.4.6 विदेशी तद्भव–कुछ विदेशी शब्द ऐसे हैं जिनको ध्वनि परिवर्तन के साथ ग्रहण किया गया है; जैसे–लालटेन, अस्पताल, रंगरूट, लेवर (लेवरर–मजदूर) फजूल (फिजूल)

7.5 सारांश–हिन्दी ध्वनियों में संस्कृत परम्परा की ध्वनियाँ गृहीत हैं। कुछ ध्वनियाँ फारसी एवं अंग्रेजी से आई हैं। संस्कृत की कुछ ध्वनियों में उच्चारण का स्थान तथा स्वरूप में परिवर्तन हो गया है। हिन्दी में 11 स्वर हैं। ऑ इनके अतिरिक्त है। नई ध्वनियों में ड़, ढ़, उल्लेखनीय हैं। स्वर अग्र, मध्य, पश्च, वृत्तमुखी, अवृत्तमुखी अनेक प्रकार के हैं। व्यंजनों में भी उच्चारण स्थान, प्रयत्न, घोषत्व तथा प्राणत्व की दृष्टि से भेद है। हिन्दी में नए–नए शब्दों का निर्माण उपसर्ग, प्रत्यय आदि के द्वारा किया जाता है। हिन्दी में चार प्रकार के शब्द हैं–तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी। कुछ शब्द संकर तथा कुछ विदेशी–तद्भव भी है।

7.6 प्रश्नावली–

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. तत्सम शब्दों में प्रयुक्त पाँच प्रत्ययों का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।
2. हिन्दी के निजी पाँच उपसर्गों को उदाहरण सहित लिखिए।
3. खुदाई, बिकाऊ के प्रकृति – प्रत्यय का विश्लेषण कीजिए।
4. पाठक, फेरा, लिखावट मे किस तरह का प्रत्यय लगा है। ये शब्द तद्धितान्त है या कृदन्त।

5. तपोधन, त्रिफला, अनुचित शब्दों में कारण सहित समास निर्देश कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण कीजिए।
2. हिन्दी शब्दों के विविध प्रकारों का विवेचन कीजिए।
3. शब्द–रचना में प्रत्ययों तथा उपसर्ग की क्या भूमिका है? विवेचन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. घनश्याम का सही विग्रह है–

   (क) घन की तरह श्याम (ख) घन और श्याम

   (ग) घना श्याम (घ) घनिष्ठ श्याम

2. दाल–भात में कौन समास है–

   (क) द्वन्द्व (ख) बहुव्रीहि

   (ग) द्विगु (घ) अव्ययीभाव

3. जिसमें दोनों पद समान विभक्ति में रहते हैं तथा एक ही वस्तु का निर्देश करते है उसे कहते हैं–

   (क) अव्ययीभाव (ख) बहुव्रीहि

   (ग) कर्मधारण (घ) द्विगु

4. दान किस भाषा से आया प्रत्यय है–

   (क) अरबी (ख) फारसी

   (ग) संस्कृत (घ) भारतीय अनार्य भाषा

उत्तर–1. (क), 2. (क), 3. (ग), 4. (ख)

इकाई 8

हिन्दी की वाक्य रचना–वाक्य अपूर्ण परिवर्तन : कारण और दिशाएँ

इकाई की रूपरेखा

8.0 प्रस्तावना

8.1 उद्देश्य

8.2 हिन्दी की वाक्य–रचना

- 8.2.1 उद्देश्य–विधेय
- 8.2.2 संज्ञा का वाक्य–रचना में स्थान
- 8.2.3 सर्वनाम
- 8.2.4 विशेषण
- 8.2.5 क्रिया

8.3 वाक्य में शब्द–क्रम

8.4 वाक्य के प्रकार

- 8.4.1 सरल वाक्य
- 8.4.2 मिश्र वाक्य
- 8.4.3 संयुक्त वाक्य
- 8.4.4 अर्थ के आधार पर वाक्य भेद

8.5 वाक्य–परिवर्तन : कारण और दिशाएँ

- 8.5.1 परिवर्तन के कारण
- 8.5.2 परिवर्तन की दिशाएँ

8.6 सारांश

8.7 प्रश्नावली

8.0 प्रस्तावना

भाषा के गठन में ध्वनि लघुत्तम इकाई का कार्य करती है। किन्तु ध्वनि प्रायः सार्थक नहीं होती है। व्याकरणिक दृष्टि से रूप तत्त्व लघुतम इकाई है किन्तु उसकी स्वतंत्र सार्थकता नहीं होती है किसी शब्द या धातु से जुड़ने पर ही वह सार्थक होता है। अर्थ की दृष्टि से शब्द स्वतंत्र सार्थक इकाई मानी जाती है किन्तु भाषा व्यापार शब्द के स्तर पर नहीं वाक्य के स्तर पर ही होता है। अतः वाक्य संरचना का अध्ययन भाषा अध्ययन के लिए आवश्यक है। पिछली इकाई में आप हिन्दी ध्वनियों, शब्द–रचना तथा उसके प्रकार का अध्यन कर चुके हैं। इस इकाई में वाक्य–रचना, वाक्य–परिवर्तन उसके कारण और दिशाओं पर प्रकाश डाला गया है।

8.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने से आपको हिन्दी वाक्य–रचना का ज्ञान होगा। वाक्य–रचना में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि का विन्यास कैसे और किस प्रकार से किया जाता है। क्रिया को काल और भाव की सूचना देने के लिए किस तरीके से रूपान्तरित किया जाता है आदि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त होगा। इस इकाई में आप वाक्यों के रचनागत भेदों तथा अर्थगत भेदों को भी समझ सकेंगे। वाक्य क्यों बदल जाते हैं और उनके क्या मुख्य कारण है उनके विषय में भी आपको जानकारी मिलेगी। हिन्दी के परिनिष्ठित प्रयोग के लिए समस्त जानकारियाँ अत्यन्त उपादेय हैं।

8.2 हिन्दी की वाक्य–रचना

पूर्ण अर्थ की प्रतीति करानेवाले सार्थक शब्द समूह को वाक्य कहा जाता है। वाक्य को कुछ विद्वान् भाषा की लघुतम पूर्ण इकाई मानते हैं। हिन्दी की वाक्य रचना में मूल वाक्य में एक उद्देश्य तथा एक विधेय रहता है जैसे–

1. मोहन खाता है।
2. कुत्ता भाग गया।
3. मोहन के वृद्ध पिता का देहान्त हो गया।

उपर्युक्त वाक्यों में मोहन, कुत्ता, मोहन के वृद्ध पिता उद्देश्य है अर्थात् वाक्य के कर्त्ता हैं। खाता है, भाग गया, देहान्त हो गया, विधेय हैं।

उद्‌देश्य एवं विधेय

8.2.1 उद्देश्य–वाक्य का वह भाग उद्देश्य कहा जाता है जिसके विषय में शेष भाग में कुछ कहा जाता है।

विधेय–वाक्य का वह भाग विधेय है जो उद्देश्य के बारे में कहा गया है।

वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को कहीं–कहीं यथावत कहीं–कहीं परिवर्तन के साथ प्रयोग में लाया जाता है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया विकारी शब्द हैं।

8.2.2 संज्ञा का वाक्य –रचना में स्थान–किसी व्यक्ति का वस्तु तथा भाव को संज्ञा कहते हैं। संज्ञा के प्रयोग लिंग, वचन तथा कारक (कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण) की दृष्टि से किए जाते हैं। व्यक्तिवाचक, जातिवाचक संज्ञा एक वचन, बहुवचन दोनों में प्रयुक्त होती है जैसे–साहित्यकारों ने अनेक प्रकार के रामों को अंकित किया है। समूह वाचक संज्ञा का भी आवश्यकतानुसार एकवचन तथा बहुवचन होता है। जैसे–

1. एम.ए. की कक्षा में दो सौ छात्र हैं।

2. आज विश्वविद्यालय में कक्षाएँ नही चलीं।

द्रव्य वाचक संज्ञा का बोध परिमाण में होता है, संख्या में नहीं जैसे–दस ग्राम सोना, एक लीटर दूध, एक किलो चीनी।

आकारान्त पुंलिंग संज्ञा के वचन भेद दो प्रकार के हैं एक सामान्य एक वचन, बहुवचन, दूसरा तिर्यक, एक वचन तथा बहुवचन।

1. लड़का जाता है (सामान्य एक वचन)

2. लड़के जाते हैं (सामान्य बहुवचन)

3. यह लड़के की पुस्तक है (तिर्यक बहुवचन)

4. यह लड़कों की कक्षा है (तिर्य । बहुवचन)

कर्त्ता, दाता, भ्राता, पिता, काका, चाचा, बाबा आदि को एकारान्त नहीं किया जाता है।)

आकारान्त से इतर पुंलिंग शब्द सामान्य एक वचन, बहुवचन तथा तिर्यक् एकवचन में अपरिवर्तित रहते हैं। बहुवचन में परिवर्तन किया जाता है–

1. बालक जाता है (सामान्य एकवचन)

2. बालक जात हैं (सामान्य बहुवचन)

3. बालक का घर है (तिर्यक् एकवचन)

4. बालकों का घर है (तिर्यक् बहुवचन)

5. माली नहीं आया

6. माली नहीं आए।

जिन संज्ञा पदों की बहुवचनीय रचना नहीं होती है उनके साथ समूह वाचक शब्द लोग, वृंद, गण, जन आदि जोड़कर सामूहिकता का बोध कराया जाता है, जैसे–गुरुजन, मुनिगण आदि।

स्त्रीलिंग के संज्ञापद पुंल्लिंग के समान नहीं रहते हैं इनका वचनगत रूपान्तरण भिन्न है। जैसे–

लड़की सोती है।

लड़कियाँ सोती हैं।

लड़की की किताब है।

लड़कियों की किताब है।

अकारान्त स्त्री लिंग का सामान्य बहुवचन परिवर्तन होता है जैसे–रातें ठंडी हैं। तिर्यक् बहुवचन में ओं, यों, जोड़े जाते हैं जैसे–

1. इन बातों में क्या रखा है।

2. नदियो का पानी दूषित हो गया है।

8.2.3 सर्वनाम–हिन्दी में सर्वनामों का वाक्य में प्रयोग विशिष्ट है। मैं, वह, तू, तुम, हम वे यह ये आदि पुंल्लिंग तथा स्त्रीलिंग दोनों हैं। पुंल्लिंग तथा स्त्रीलिंग का अन्तर बताने के लिए क्रिया में लिंग परिवर्तन का विधान है, जैसे–

1. वह पढ़ता है।

2. वह पढ़ती है।

3. वे पढ़ते हैं।

4. वे पढ़ती है।

जिन वाक्यों में 'ने' का प्रयोग होता है, उनमें कर्त्ता के आधार पर लिंग भेद नहीं होता, जैसे–

1. मैंने कहा

2. तूने/तुमने किया

3. उसने बुलाया

सर्वनामों में वचन भेद होता है। संज्ञा की तरह सामान्य तथा तिर्यक् दो वर्ग हैं।

जैसे–

वह जाता है (सामान्य एकवचन)

वे जाते हैं (सामान्य बहुवचन)

उसने काम किया (तिर्यक् एकवचन)

उन्होंने अपना काम किया (तिर्यक् बहुवचन)

तू पढ़ता है (सामान्य एकवचन)

तुम पढ़ते हो (सामान्य बहुवचन)

तुझे जाना है (तिर्यक् एकवचन)

तुम्हें खाना है (तिर्यक् बहुवचन)

मैं पढ़ता हूँ (सामान्य एकवचन)

हम पढ़ते हैं (सामान्य बहुवचन)

मुझे यह काम करना चाहिए (तिर्यक् एकवचन)

हमे यह काम करना चाहिए (तिर्यक् बहुवचन)

8.2.4 विशेषण

हिन्दी में विशेषण और विशेष्य के लिंग वचन की समरूपता सर्वत्र नहीं रहती है। आकारान्त विशेषण विशेष्य के अनुसार बदलते हैं किन्तु अन्य विशेषण अपरिवर्तित रहते है। जैसे–

वह अच्छा लड़का है

वे अच्छे लड़के हैं

वह अच्छी लड़की है

वे अच्छी लड़कियाँ है

पंजाबी की तरह हिन्दी में अच्छीयाँ लड़कियाँ नहीं होता। अन्य विशेषण इस प्रकार प्रयुक्त होते हैं, जैसे–

वह सुन्दर लड़का है।

वे सुन्दर लड़के हैं।

वह सुन्दर लड़की है।

वे सुन्दर लड़कियाँ हैं।

8.2.5 क्रिया–हिन्दी में क्रिया में लिंग वचन का स्पष्ट प्रभाव रहता है, जैसे–

राम जाता है।

सीता जाती है।

लड़के जाते हैं

लड़कियाँ जाती है।

सकर्मक और अकर्मक क्रिया का भूतकाल की वाक्य रचना पर स्पष्ट प्रभाव रहता है। हिन्दी में भूतकालिक सकर्मक क्रिया में ही कर्त्ता के साथ ने का प्रयोग होता है और वहाँ क्रिया के लिंग और वचन कर्म के अनुसार रक्खा जाता है, जैसे–

राम ने मिठाई खायी।

मैंने रोटियाँ खाईं।

यदि एक से अधिक कर्त्ता हों और वे भिन्नार्थक और परसर्ग रहित हों तो क्रिया बहुवचन में रखी जाती है, जैसे–

राम और श्याम दिल्ली गये।

उमा और रमा घर आ गये।

यदि कर्त्ता भिन्न–भिन्न लिगों में है तो क्रिया निकटतम् कर्त्ता के लिंग के अनुसार होती है, जैसे–

सीता और राम आये।

बालक और बालिकायें आयीं।

निर्जीव संज्ञा के अन्वय मे क्रिया एकवचन की होती है, जैसे–

राम के पास एक घड़ी एक कलम है।

कभी–कभी वाक्य में कर्त्ता कई पुरुषों में आता है ऐसी स्थिति में पहले अन्य पुरुष फिर मध्यम पुरुष उसके पश्चात् उत्तम पुरुष को रखना चाहिए क्रिया अन्तिम पुरुष के अनुसार होगी, जैसे–राम तुम और हम खायेंगे।

8.3 वाक्य में शब्द क्रम–1. हिन्दी में पहले कर्त्ता फिर मुख्य कर्म, फिर, गौण कर्म तत्पश्चात् मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया आती है।

2. विशेषण विशेष्य के पूर्व रखा जाता है।

जैसे–काली गाय चर रही है।

3. सर्वनाम का विशेषण सर्वनाम के बाद आता है; जैसे–वह भला है। वह काला है।

4. प्रश्नवाचक सर्वनाम क्रिया से पहले रखे जाते हैं; जैसे–वह कौन है?

5. ही, भी, आदि उन्हीं शब्दों के बाद रखे जाते हैं, जिन पर बल देना होता है–

1. राम ही आएगा।

2. कृष्ण भी जाएगा।

6. यदि जब, जहाँ, ज्योंही, आदि प्रधान वाक्य के पूर्व आते हैं तो इसके साथ तब, वहाँ, त्योंही रखे जाते हैं।

उदाहरण–1. यदि वह समय से आ जाता तो उसका काम न बिगड़ता।

2. जब वह आएगा, तब मैं जाऊँगा।

3. आप जहाँ जाएँगे, वहाँ पाएँगें।

4. पुलिस ज्योंही पहुँची त्योंही चोर भाग गया।

8.4 वाक्य के प्रकार–रचना के आधार पर वाक्य के निम्नलिखित भेद हैं–

8.4.1 सरल वाक्य–जिस वाक्य में एक उद्देश्य तथा एक विधेय हो उसे सरल वाक्य कहते हैं, जैसे–'मोहन टहलता है।'

इस वाक्य में 'मोहन' उद्देश्य है तथा 'टहलता है' विधेय है। यदि एक वाक्य में एकाधिक उद्देश्य और विधेय हो तो संरचना की दृष्टि से वह दो सरल वाक्यों से मिलकर बना होता है किन्तु उसे सरल वाक्य की ही कोटि में रखा जाता है, जैसे–'रागिनी और मोहिनी जा रही हैं' इस वाक्य का सही तात्पर्य है रागिनी जा रही है, मोहिनी जा रही है। इसी तरह से विधेय के एक से अधिक होने पर भी सरल वाक्य ही माना जाता है, जैसे–

'प्रेम पकाता, खाता है। इस वाक्य मे दो विधेय हैं किन्तु वाक्य की संरचना सरल ही मानी जाएगी। हिन्दी के सरल वाक्य निम्न प्रकार के होते हैं–

1. अकर्मकीय–ऐसे वाक्य जिसमें क्रिया अकर्मक हो जैसे–राम हँसता है, मोहन रोता है।

2. एक कर्मकीय–ऐसे वाक्य जिसमें एक कर्म का प्रयोग हो; जैसे–रामू रोटी खाता है।

3. द्विकर्मकीय–जिन वाक्यों में दो कर्म हों उन्हें द्विकर्मकीय कहा जाता है, जैसे–निर्भय रामू को पत्र लिखता है। ऐसे वाक्यों में एक कर्म सम्प्रदान जैसा प्रतीत होता है।

4. कर्त्तृपूरकीय–इसमें विशेषण या संज्ञा कर्त्ता का पूरक बनकर आता है। जैसे–

1. राधिका सुन्दर है (कर्त्ता का पूरक विशेषण)

2. मुहम्मद अध्यापक है (संज्ञा पूरक)

5. कर्मपूरकीय–ऐसे वाक्यों में विशेषण या संज्ञा कर्म के पूरक होते हैं–

1. नेहा गोविन्द को बुद्धिमान मानती है।

2. वह मूर्ख आदमियों को पसन्द करता है।

उप वाक्य–जब दो या अधिक सरल वाक्य मिलकर वाक्य बनाते हैं तो उन मिले हुए वाक्यों को उपवाक्य कहते हैं; जैसे–रेणु गयी और श्यामा आई। इस वाक्य में दो उपवाक्य हैं। उपवाक्यों में एक प्रधान रहता है तथा अन्य आश्रित रहते हैं, ऐसे छात्र की अध्यापक सराहना करते हैं जो पढ़ने में अच्छे होते हैं। इसमें पढ़ने में अच्छे होते हैं आश्रित उपवाक्य है। आश्रित उपवाक्य के तीन भेद हैं–

1. संज्ञा पद बन्ध युक्त–जैसे–मोहन चाहता है कि वह अधिकारी बने। 'अधिकारी बनना' चाहना का कर्म है। यह संज्ञा पदबंध है।

2. विशेषण पदबंध युक्त–उस लड़की का देहान्त हो गया जो बहुत सुन्दर थी। इस वाक्य में 'बहुत सुन्दर' लड़की की विशेषता बता रहा है।

3. क्रियाविशेषण पदबंध युक्त–मोहन ऐसे रेंग रहा है जैसे जानवर चल रहा हो। क्रिया विशेषण उपवाक्य क्रिया विशेषण के स्थान पर आते हैं।

8.4.2 मिश्र वाक्य–इसमे एक प्रधान उपवाक्य होता है, शेष आश्रित उपवाक्य होते हैं। दोनों आश्रित उपवाक्य प्रधान वाक्य के अधीन रहते हैं, जैसे–ऐसे व्यक्ति जो सत्यवादी होते हैं उनका सभी आदर करते हैं। यह एक मिश्र वाक्य है। इसमें 'ऐसे व्यक्ति जो सत्यवादी होते हैं, प्रधान है तथा उनका सभी आदर करते हैं आश्रित है।

8.4.3. संयुक्त वाक्य–जिस वाक्य में एक से अधिक सरल वाक्य होते हैं। दोनों प्रधान होते हैं। दो या दो से अधिक स्वतंत्र वाक्यों के साथ कोई आश्रित उपवाक्य

आये तो भी सम्पूर्ण संयुक्त वाक्य ही होगा जैसे–मोहन ने कहा कि तुम यहाँ से चले जाओ किन्तु उसने नहीं सुना।

8.4.4 अर्थ के आधार पर वाक्य भेद

अर्थ के आधार पर वाक्य के नौ भेद हैं–

1. विधान बोधक–जिस वाक्य से किसी कार्य के होने का बोध होता है; जैसे वह खाता है, राम सोता है।

2. निषेधात्मक–जिस वाक्य में नकार का भाव हो जैसे–वह नहीं खाता है, सीता रात में नहीं सोती है।

3. प्रश्नवाचक–जिस वाक्य में प्रश्न हों, जैसे–क्या वह पढ़ता है? क्या सीता खाएगी?

4. प्रश्नवाचक निषेधात्मक–इसमें प्रश्न और नकार दोनों का भाव रहता है। क्या वह नहीं आएगा। वह क्यों नहीं गया।

5. आज्ञार्थ बोधक–जिसमे किसी को आदेश दिया जाए; जैसे–तुम पढ़ो, वह जाए।

6. विस्मयबोधक–जिसमें आश्चर्य, घृणा, शोक, हर्ष की अभिव्यक्ति हो, जैसे–अरे, उसका देहान्त कैसे हो गया। छिः छिः उसने बहुत घृणित कार्य किया।

7. संभावनार्थ–जिस वाक्य में संभावना व्यक्त की जाए जैसे–वह आज आने वाला है, मुझे लगता है कि वह कलकत्ता नहीं जाएगा।

8. संदेहार्थ–जिस वाक्य में कार्य के प्रति संदेह व्यक्त किया जाए। जैसे–प्रतिभा के उत्तीर्ण होने मे संदेह है।

9. शर्त बोधक–जिस वाक्य में शर्त रखी जाए, जैसे–यदि बहुत से तेज जाओगे तभी ट्रेन मिल जाएगी।

10. इच्छार्थक–आशीर्वाद, इच्छा, शुभकामना व्यक्त करने वाले वाक्य को इच्छार्थक कहते हैं; जैसे–ईश्वर तुम्हारा भला करे। सफलता के लिए मेरी शुभकामना है।

8.5 वाक्य परिवर्तन : कारण और दिशाएँ–वाक्य रचना सदैव एक जैसी नहीं रहती है। मूल भाषा से निकली हुई भाषाओं में अन्य परिवर्तनों की तरह वाक्य में भी परिवर्तन होता है। संस्कृत, पालि, प्राकृत में विभक्तियों का महत्त्व था। जैसे–जैसे विभक्तियाँ कम होती गयीं, भाषा वियोगात्मक होती गयी। हिन्दी में स्वतंत्र परसर्गों का संयोजन होता है और एक सीमा तक शब्दों का स्थान भी नियत हो गया है। इसमें संस्कृत की तरह शब्दों का व्यतिक्रम संभव नहीं है, जैसे–ताडयति रामः मोहनं। मोहनं ताडयति रामः। दोनों वाक्यों में स्थान भेद से अर्थभेद नहीं हुआ। हिन्दी में राम मोहन को मारता है। मोहन राम को मारता है। वाक्यों में स्थान भेद से कर्त्ता–कर्म की स्थिति बदल गयी है। आवश्यकतानुसार या

शैली भेद से सरल वाक्य तथा संयुक्त या मिश्र वाक्यों में भी परिवर्तन होता है चाम्स्की आदि भाषा वैज्ञानिक मानते हैं कि एक बीज वाक्य होता है उसी से निषेधात्मक, प्रश्नवाचक आदि अनेक प्रकार के वाक्य रूपान्तरित किए जाते हैं। मूल वाक्य में अधियोजी जोड़कर विस्तार किया जाता है जैसे–राम गया। बीज वाक्य राम आज शाम को कलकत्ता अपने भाई के पास ट्रेन से चला गया। यह वाक्य बीज वाक्य का विस्तार है।

8.5.1 परिवर्तन के कारण–वाक्य परिवर्तन का मुख्य कारण भाषा प्रयोग की सुविधा या सुबोधता है। भाषा की प्रकृति ही है कठिनता से सरलता की ओर उन्मुख होना। वाक्य परिवर्तन निम्नलिखित अन्य कारण सुझाए गए हैं।

1. अन्य भाषाओं का प्रभाव–पीछे संकेत किया जा चुका है कि हिन्दी भाषा पर अनेक देशी–विदेशी भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। आदरार्थ बहुवचन क्रिया का प्रयोग फ़ारसी प्रभाव से हिन्दी में आया है, जैसे गाँधी जी पैदा हुए थे। इसी तरह वाक्य रचना में 'कि' जोड़ना भी फ़ारसी का प्रभाव है। मैंने कहा कि यह कार्य नहीं हो सकेगा। डॉ. भोलानाथ तिवारी का मानना है कि अंग्रेजी 'द' की छाया हिन्दी पर है जैसे–'The man who had come yesterday was a thief' वह आदमी जो कल आया था, चोर था।

2. अंग्रेजी में कहा जाता है– A Critical study हिन्दी में इसी तर्ज पर 'एक आलोचनात्मक अध्ययन' प्रयोग चल पड़ा।

अनावश्यक शब्दों का प्रयोग–कभी–कभी बल देने के लिए अनावश्यक शब्दों को जोड़ दिया जाता है; जैसे–आइएगा जरुर से जरुर। आपका बहुत स्वागत है। 'मात्र' शब्द का प्रयोग रुपये के अंत में इसलिए किया जाता है ताकि कोई संख्या को घटा–बढ़ा न सके लेकिन कभी–कभी बीच में भी इसका प्रयोग मिलता है–मुझे पचास रुपये मात्र चाहिए।

8.5.2 परिवर्तन की दिशाएँ–वाक्य परिवर्तन की निम्न दिशाएँ हैं–

1. वचन परिवर्तन–संस्कृत भाषा में तीन वचन थे। हिन्दी में दो ही हैं। अतः दो वचन को बहुवचन जैसे प्रयोग होने लगे, जैसे–दो बच्चे चले गए। 'तुम' का हिन्दी में बहुवचनीय प्रयोग है।

2. लिंग परिवर्तन–हिन्दी वाक्य रचना में क्रिया का प्रयोग लिंग के अनुसार होता है। हिन्दी में अनेक स्रोतों से शब्द आए हैं, स्रोत भाषाओं में लिंग–व्यवस्था अलग है अतः नपुंसक लिंग या सामान्य लिंग को पुंल्लिंग या स्त्रीलिंग में रखना आवश्यक है। पुस्तक पढ़ी जाती है। दही खट्टा है। (कहीं कहीं खट्टी है भी लिख देते हैं।)

3. परसर्गों के लोप भी देखे जाते हैं जैसे–आँखों देखी घटना (आँखों से देखी घटना)

पदक्रम में परिवर्तन–फ़ारसी के प्रभाव से पदों में परिवर्तित स्वरुप मान्य हुआ है। 'हिन्दी के विभागाध्यक्ष का कथन है। इस वाक्य को यों कहा जाता है, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग का कथन है।

8.6 सारांश–वाक्य भाषा अभिव्यक्ति की प्रमुख व्याकरणिक इकाई है। हिन्दी वाक्यों की रचना में अन्य भाषाओं की तरह उद्देश्य और विधेय रहता है। विकारी शब्द जैसे–संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और क्रिया–विशेषण के प्रयोग कारकीय परसर्गों के संयोजन के साथ होता है। वाक्य–रचना में क्रिया के द्वारा लिंग तथा वचन की सूचना दी जाती है। क्रिया–रचना में काल एवं भाव का भेद होता है। क्रिया के अकर्मक तथा सकर्मक का असर भूतकाल में 'ने' परसर्ग के प्रयोग के संदर्भ मे विशेष रूप से विचारणीय होता है। रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन प्रमुख भेद हैं–सरल वाक्य, मिश्र वाक्य और संयुक्त वाक्य। सरल वाक्य मे एक उद्देश्य तथा एक विधेय होते हैं। एकाधिक उद्देश्य तथा एक विधेय तथा एकाधिक विधेय से भी सरल वाक्य बन सकते हैं। मिश्रवाक्य में एक प्रधान होता है शेष वाक्य आश्रित होते हैं। संयुक्त वाक्य में दोनों वाक्य प्रधान तथा स्वतंत्र होते हैं। अर्थ की दृष्टि विधानार्थक, प्रश्नवाचक निषेधात्मक, संदेहार्थक, संभाव्य, आज्ञार्थ, विस्मयादि बोधक आदि वाक्य के भेद हैं। वाक्य सदैव समान नहीं रहते हैं। शैली तथा अन्य भाषाओं के प्रभाव से उनकी संरचना में परिवर्तन हो जाता है।

8.7 प्रश्नावली

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. वाक्य में वचन परिवर्तन क्यों होता है।
2. हिन्दी में लिंग की सूचना देने के लिए वाक्य गठन कैसे होता है।
3. वाक्य रचना में विशेषण और विशेष्य के स्थान और सम्बन्धों पर प्रकाश डालिए।
4. अर्थ की दृष्टि वाक्य के कितने भेद हैं।
5. उपवाक्य किसे कहते हैं।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. काल रचना तथा भाव रचना की दृष्टि से क्रिया के वाक्य प्रयोगों का परिचय दीजिए।
2. वाक्य के भेदों–उपभेदों पर प्रकाश डालिए।
3. वाक्य परिवर्तन के कारणों तथा दिशाओं पर प्रकाश डालिए।
4. वाक्य के प्रमुख भेदों का उदाहरण सहित विवेचन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. वाक्य रचना में सकर्मक क्रिया का प्रभाव किस काल में पड़ता है–

   (क) वर्तमान (ख) भूत

(ग) भविष्य (घ) आज्ञार्थ

2. निम्नलिखित में से कौन शब्द वाक्य में सामान्य एक वचन तथा बहुवचन दोनों हो सकता है–

(क) लड़का (ख) बालिका

(ग) पत्थर (घ) रात

3. 'राम ने कहा कि तुम चले जाओ किन्तु उसने सुना नहीं' कैसा वाक्य है–

(क) सरल (ख) संयुक्त

(ग) मिश्र (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

4. 'तुम्हें जाना है' वाक्य में 'तुम्हें' क्या नहीं है–

(क) मध्यम पुरुष (ख) सर्वनाम

(ग) तिर्यक् एकवचन (घ) तुम का कारकीय रूपान्तरण

उत्तर–1. (ख), 2. (ग), 3. (ख), 4. (ग)

इकाई 9
हिन्दी की व्याकरणिक कोटियाँ

इकाई की रूपरेखा

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 कोटि का तात्पर्य और प्रकार

9.2.1 हिन्दी की प्राथमिक व्याकरणिक कोटियाँ

9.2.2 हिन्दी की द्वितीयक व्याकरणिक कोटियाँ

(क) पुरुष

(ख) वचन

(ग) लिंग

9.2.3 कारक विभक्ति

(क) कर्त्ता

(ख) कर्म

(ग) करण

(घ) सम्प्रदान

(ङ) अपादान

(च) सम्बन्ध

(छ) अधिकरण

9.2.4 काल तथा भाव

9.2.5 वाच्य

9.3 प्रकार्यात्मक कोटि

9.3.1 कर्त्ता, विधेय, अधियोजी

9.4 सारांश

9.5 संदर्भ ग्रंथ

9.6 प्रश्नावली

9.0 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने हिन्दी वाक्य रचना, वाक्य परिवर्तन उनके कारण और दिशाओं का अध्ययन किया है। इस इकाई में हिन्दी की व्याकरणिक कोटियों पर प्रकाश डाला गया है। वाक्य–रचना के लिए इन कोटियों का अध्ययन

आवश्यक है। इस इकाई में हिन्दी के पुरुष, वचन, लिंग, कारक, काल रचना, वाच्य, उद्देश्य, विधेय तथा विशेषक आदि पर विचार किया गया है।

9.1 उद्देश्य

हिन्दी भाषा के सही–सही व्यवहार के लिए इन कोटियों के प्रयोग तथा नियम को जानना आवश्यक है। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप, पुरुष वचन, लिंग, कारक, काल–रचना, भाव–रचना, उद्देश्य, प्राप्त कर सकेंगे। हिन्दी की व्याकरणिक कोटियों की विशिष्टताओं तथा समस्याओं से भी आप भलीभाँति अवगत होंगे। हिन्दी भाषा का प्रयोग करते समय आप सहज ज्ञान से काम लेते हैं जब कोई समस्या उठती है या सही–गलत का तर्कपूर्ण निर्णय अपेक्षित होता है तो उस समय नियमों का ज्ञान विशेष उपादेय होता है।

9.2 कोटि का तात्पर्य और प्रकार–कैटेगरी का हिन्दी अनुवाद है। प्राचीन काल में कोटि उन विशिष्ट प्रकारों या विधाओं को कहा जाता था जिनसे वस्तुओं का गुण कथन किया जाता है। श्रेणीकरण के पीछे यह मान्यता थी कि भौतिक संसार का निर्माण वस्तुओं या द्रव्यों से हुआ है। जिनके कुछ गुण धर्म है। कोटियों की धारणा का प्रभाव व्याकरण पर भी पड़ा। जॉन लियोन्स ने व्याकरणिक कोटियों को तीन भागों में वर्गीकृत किया है–

1. प्राथमिक कोटियाँ–इसमें पद भेद की कोटियाँ हैं, जैसे–संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि।

2. द्वैतीयक कोटियाँ–इसमें काल, वचन, पुरुष, लिंग आदि का समावेश है।

3. प्रकार्यात्मक कोटियाँ–इसके अन्तर्गत कर्त्ता (उद्देश्य), विधेय, अधियोजी आदि हैं।

हिन्दी की विभिन्न व्याकरणिक कोटियों के सम्बन्ध में शब्द–भेद, वाक्य–रचना आदि के संदर्भ में पर्याप्त विवेचन किया जा चुका है। यहाँ उनको व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है।

9.2.1 हिन्दी की प्राथमिक व्याकरणिक कोटियाँ–इसके अन्तर्गत पदों के वे भेद हैं जिनका व्याकरणिक प्रयोग होता है; जैसे–संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण जिन्हें एक शब्द में संस्कृत व्याकरण मे 'नाम' कहा गया है। 'क्रिया' को आख्यात तथा क्रिया–विशेषण को अविकारी शब्द या अव्यय कहा जाता है।

संज्ञा–हिन्दी में संज्ञा पद अकारान्त, आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त आदि अनेक प्रकार के हैं जैसे–राम, घोड़ा, हरि, गाड़ी, मधु, आलू आदि। संज्ञा के प्रमुख भेद हैं व्यक्तिवाचक, स्थान वाचक, समूह वाचक, भाव वाचक, द्रव्यवाचक, जैसे–राम, मोहन, कलकत्ता, छात्र, कक्षा, महँगाई, मिठाई चाँदी, सोना आदि।

सर्वनाम–संज्ञा के बदले जिन पदों का प्रयोग होता है, वे सर्वनाम हैं। सर्व अर्थात् सब का नाम है सर्वनाम। इसके पुरुषवाची, प्रश्नवाची, समूहवाची, सम्बन्धवाची अनेक भेद हैं।

पुरुषवाची–वह, मैं, तुम

समूहवाची–सब, सभी

निजवाची–अपना, अपने, अपनी, स्वयं

प्रश्नवाची–कौन, क्या

निश्चयवाचक–यह, वह

सम्बन्धवाचक–जो, जिस, किस

अनिश्चयवाचक–कोई, कुछ

विशेषण–नाम शब्द की विशेषता या गुण कथन करने वाले पद को विशेषण कहते हैं। विशेषण कई प्रकार के हैं–

गुणवाचक–काला, गोरा, अच्छा, सुन्दर

संख्यावाची–एक, दो, तीन, चार

परिमाणवाची–इतना, कितना, थोड़ा, बहुत

सार्वनामिक विशेषण–कौन आदमी, क्या बात है

आवृत्तिवाचक–दुगुना, चौगुना

समुदाय वाचक–दसों, बीसियों

क्रिया–जिसमें किसी काम का करना या होना पाया जाय उसे क्रिया कहते है। क्रिया के दो भेद हैं–

1. **सकर्मक**–जिस क्रिया से सूचित होने वाले व्यापार का फल कर्म पर पड़ता है; जैसे–राम पुस्तक पढ़ता है, खाता, पीता, लिखता आदि क्रियाएँ सकर्मक हैं।

2. **अकर्मक**–जिस धातु से सूचित व्यापार और फल कर्त्ता तक ही सीमित रहे उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं, जैसे–लड़का सोता है, वह गया।

क्रिया के दो भेद और भी हैं–मुख्य क्रिया, जैसे–खाता, पीता, सहायक क्रिया, जैसे–है, हैं, हो, था, थे, थी।

व्युत्पत्ति के अनुसार हिन्दी की क्रियाएँ तीन प्रकार की हैं–

1. मूल क्रिया–करना, बैठना

2. यौगिक क्रिया–धिक्कारना, बतियाना, चलवाना

3. संयुक्त क्रिया–गिर पड़ना, उठ बैठना, सो जाना आदि।

क्रिया–विशेषण–अविकारी शब्द हैं जो क्रिया की विशेषता बताते हैं; जैसे–यहाँ, वहाँ, नीचे, पास आज, कल, अति, भारी, काफी, ऐसा, वैसा, एकाएक आदि।

पदबंध, वाक्य आदि की व्याकरणिक इकाई है। यदि पदों को प्राथमिक कोटि में स्थान दिया गया है तो इन्हें भी इसमें सम्मिलित किया जा सकता है। पदबंध वाक्य के पूर्व की कोटि है। इसमें क्रिया नहीं रहती है। जैसे–जीवन से निराश आदमी, गोली से घायल चोर। वाक्य के विषय मे विचार किया जा चुका है।

9.2.2 हिन्दी की द्वितीयक व्याकरणिक कोटियाँ–इसके अन्तर्गत पुरुष, वचन, लिंग काल तथा वाच्य का समावेश है।

(क) पुरुष–हिन्दी में यह सर्वनाम की कोटि है। संस्कृत में सर्वनाम तथा क्रिया दोनों की रूप–रचना में पुरुष का भेद रखा जाता था। वक्ता तथा श्रोता की भागीदारी के अनुसार पुरुष के तीन भेद हैं–

प्रथम पुरुष या अन्य पुरुष–जो बात–चीत में प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं करता है, वह वक्ता तथा श्रोता से पृथक् व्यक्ति होता है; जैसे–वह, वे, नाम को भी इसी मे रखा जाता है।

मध्यम पुरुष–जो श्रोता के रूप में उपस्थित रहता है; जैसे–तू, तुम आदि।

उत्तम पुरुष–जो वक्ता होता है; जैसे–मैं, हम।

उत्तम पुरुष तथा मध्यम पुरुष के प्रयोग प्रायः मानव के लिए होते हैं।

हिन्दी में 'तू' का प्रयोग कम होता है। इसमें लघुता या छोटेपन का भाव है अतः इसके स्थान पर बहुवचनीय 'तुम' का प्रयोग अधिक करते हैं। इसी तरह मैं की जगह 'हम का प्रयोग करते हैं।

(ख) वचन–वचन का सम्बन्ध मुख्यतः संख्या विधान से है। हिन्दी में दो वचन है–1. एकवचन 2. बहुवचन।

एकवचन–यह एक संख्या का सूचक है; जैसे–लड़का, राम, लड़की, केला, आदि।

बहुवचन–एक से अधिक संख्या के लिए बहुवचन का प्रयोग होता है। जैसे–लड़के, लड़कियाँ, केले आदि।

हिन्दी में आकारान्त पुंल्लिंग शब्द के अलावा अन्य शब्द बहुवचन में अपरिवर्तित रहते हैं, जैसे–पत्थर, मुनि, गुरु बालक आदि।

हिन्दी में एक वचन से बहुवचन बनाने के लिए निम्नलिखित प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है–

ए	लड़का	लड़के	सामान्य बहुवचन
एं	रात	रातें	"
ओं	लड़का	लड़कों	तिर्यक बहुवचन

एँ	बाला	बालाएँ	सामान्य बहुवचन
याँ	लड़की	लड़कियाँ	″
यों	लड़की	लड़कियों	तिर्यक् बहुवचन
ओं	माला	मालाओं	″
याँ	चिड़िया	चिड़ियाँ	″

जिन शब्दों के एकवचन तथा बहुवचन रुप समान रहते हैं उन्हें बहुवचन को स्पष्ट करने के लिए समूहवाची शब्द जोड़ दिया जाता है।

जैसे– 1. गुरु पढ़ाता है।

2. गुरु पढ़ाते हैं।

3. मुनि तप करता है।

4. मुनि तप करते हैं।

5. पत्थर गिरता है।

6. पत्थर गिरते हैं।

गुरुजन, मुनिजन, अध्यापक गण, सेवकगण आदि प्रयोग बहुवचनीय हैं।

(ग) लिंग–हिन्दी मे दो लिंग होते हैं–

1. पुल्लिंग
2. स्त्रीलिंग

दोनों लिंगों के अलगाव के लिए स्पष्ट नियमों का निर्देश नहीं मिलता है। लिंग विभाजन प्राकृतिक लिंग–व्यवस्था के समरूप नहीं है। चूँकि हिन्दी में अनेक स्रोतों से शब्द आए हैं और स्रोत भाषाओं में व्याकरणिक लिंगों का विधान भिन्न ढंग का है, उदाहरण के लिए अंग्रेजी में चार लिंग हैं–पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग, सामान्य लिंग, संस्कृत में तीन हैं। सभी प्रकार के शब्दों को हिन्दी के दो लिंगों में ही समाविष्ट करने की व्यवस्था है। अतः बहुत सी भ्रान्तियाँ रह जाती हैं और लिंग विभाजन व्यवस्थित नहीं प्रतीत होता है–जैसे–सड़क लम्बी, चौड़ी, बड़ी होकर स्त्रीलिंग है, रास्ता पुल्लिंग है। इसी तरह पुस्तक का तद्भव शब्द पोथा पुल्लिंग है और पुस्तक स्त्रीलिंग है। आकारान्त शब्द ज्यादातर पुल्लिंग है, जैसे–लड़का, बेटा, नेता, किन्तु संस्कृत परम्परा से आगत बालिका, माला, वाला आदि स्त्रीलिंग है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के स्त्री तथा पुंल्लिंग शब्दों को प्रायः उसी लिंग में रखने का विधान है। एच. परमेश्वरन ने अपने एक लेख में कहा है कि 'संज्ञाओं के साथ लगने वाले बहुवचन प्रत्ययों के आधार पर हम सही अनुमान कर सकते हैं कि वह संज्ञा पुल्लिंग है या स्त्रीलिंग। दाढ़ी शब्द इसलिए स्त्रीलिंग है कि उसके साथ 'याँ' बहुवचन प्रत्यय लगता है। जुड़ा पुल्लिंग इसलिए है कि उसके साथ वाला प्रति स्थापन बहुवचन प्रत्यय लगता है।' पहचान का यह नियम इसलिए सटीक नहीं है कि बहुवचन बनाने के प्रत्यय लिंग निर्धारण के बाद ही लगते हैं। बहुत लोग

श्लोक को 'श्लोके' कहते हैं रात के तर्ज पर। 'दही' पुल्लिंग है किन्तु ईकार के कारण कुछ लोग स्त्रीलिंग में प्रयोग करते हैं। हिन्दी के सर्वनामों की रूप रचना की दृष्टि से लिंग भेद नहीं है। वह, मैं, तुम, वे, हम, कुछ, सब आदि सर्वनाम पुंल्लिंग और स्त्रीलिंग दोनों हैं। लिंग का अन्तर बताने के लिए क्रिया में लिंग परिवर्तन का नियम है जैसे–वह जाता है। वह जाती है। तुम जाते हो। तुम जाती हो। मै जाता हूँ। मैं जाती हूँ आदि। जिन वाक्यों में 'ने' का प्रयोग होता है उनमें क्रिया कर्म के लिंग, वचन के अनुसार होती हैं अतः कर्त्ता के सर्वनाम के लिंग का पता नहीं चलता है। जैसे–'उसने पुस्तक पढ़ी' वाक्य में पढ़ने वाला स्त्री या पुरुष है इसका ज्ञान नहीं हो सकता है।

9.2.3 कारक–विभक्ति–हिन्दी निर्विभक्तिक भाषा है। इसमें कारक की सूचना देने के लिए स्वतंत्र रूप से परसर्ग जोड़े जाते हैं। पुंल्लिंग, स्त्रीलिंग सभी प्रकार के शब्दों में परसर्गों का समान ढंग से प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में आठ कारक हैं, उनके अलग–अलग परसर्ग हैं–

कर्त्ता–ने
कर्म–को
करण–से, द्वारा
सम्प्रदान–को, के लिए
अपादान–से
सम्बन्ध–का, के, की (कुछ सर्वनामों में रा, रे, री)
अधिकरण–में, पर, ऊपर

संज्ञा, सर्वनाम विशेषण के साथ कुछ अपवादों को छोड़कर परसर्ग जोड़ते हैं समय शब्द मे कुछ विकार आ जाता है जिसे शब्द का तिर्यक् रूप कहते हैं। कुछ शब्दों के कारकीय रूप नीचे दिए जा रहे हैं–

आकारान्त पुल्लिंग–लड़का

	एकवचन (सामान्य)	बहुवचन (सामान्य)	तिर्यक् एकवचन	तिर्यक बहुवचन
कर्त्ता	लड़का	लड़के	लड़के ने	लड़कों ने
कर्म			लड़के को	लड़कों को
करण			लड़के से	लड़कों से
सम्प्रदान			लड़के द्वारा	लड़कों द्वारा
अपादान			लड़के के लिए	लड़कों के लिए
अपादान			लड़के से	लड़कों से
सम्बन्ध			लड़के का, की के	लड़कों का के, की

अधिकरण लड़के में, लड़के पर लड़कों में, पर

शब्द–रचना की यह विधि सभी आकारान्त पुल्लिंग पर लागू है किन्तु कुछ इसके अपवाद हैं, जैसे–तत्सम् शब्द–विधाता, राजा, योद्धा, महात्मा, वक्ता, नेता, विजेता, दाता, भ्राता, कर्त्ता, युवा, आदि। पुनरुक्ति वाले सम्बन्ध वाचक शब्द जैसे–दादा, माया, काका, चाचा, जीजा आदि। अगुवा, मुखिया, हिया आदि, कुछ विदेशी शब्द जैसे–दरोगा, मौला, मियाँ आदि।

आकारान्त से भिन्न पुल्लिंग शब्द तिर्यक् बहुवचन में रुपान्तरित होकर परसर्ग स्वीकार करते हैं। एकवचन में बिना किसी विकार के परसर्ग जुड़ जाता है, जैसे–

1. मुनि ने, मुनि को, मुनि से, मुनि द्वारा, मुनि के लिए, मुनि वा मुनि में

2. मुनियों ने, मुनियों को, मुनियों से, मुनियों के लिए, मुनियों का मुनियों में।

अधिकांश स्त्रीलिंग की संज्ञाएँ के सामान्य एकवचन के साथ ही परसर्ग जुड़ जाता है। जैसे–

लड़की ने, लड़की को, लड़की से, लड़की के लिए, लड़की का, लड़की में तिर्यक बहुवचन में यों जोड़कर परसर्ग का संयोजन होता है। जैसे–लड़कियों ने, को, से, के लिए, का, के की, में पर आदि।

सर्वनामों की कारकीय रचना

मूलरूप तिर्यक रूप जुड़नेवाले परसर्ग

मैं, मुझ, मैंने, मुझे/मुझको, मुझसे, मेरे लिए, मुझसे, मेरा, मुझमें, मुझ पर

हम, हम, हमने, हमें, हमको, हमसे, हमारे लिए, हमसे, हमारा, हमारे, हमारी, हममें, हम पर

तू, तुझ, तूने, तुझे/तुझको, तुझसे, तेरे लिए, तुझसे, तेरा, तेरे तेरी, तुझ पर, तुझमें।

तुम, तुम्ह, तुमने, तुम्हें/तुमको, तुम से, तुम्हारे लिए, तुम से, तुम्हारा, तुम्हारे, तुम्हारी, तुममें, तुम पर

वह, उस, उसने, उसे/उसको, उससे, उसके द्वारा उसके लिए, उसका उसके, उसकी, उसमें उस पर

वे, उन/उन्ह, उन्होंने, उनको/उन्हें, उनसे, उनके द्वारा, उनके लिए, उनसे, उनका, उनके, उनकी, उन पर, उनमें।

यह, इस, इसने, इसे/इसको/इससे इसके द्वारा, इसके लिए, इससे, इसका, इस पर, इसमें

ये इन/इन्हें इन्होंने, इनको/इन्हें, इनसे, इनके लिए, इनसे, इनका, इनकी, इनके, इनमें, इन पर

कारकों का प्रयोग–हिन्दी में कारकों के प्रयोग का निश्चित विधान है।

(क) कर्त्ता–कर्त्ता का प्रयोग परसर्ग सहित तथा परसर्ग रहित दोनों रूपों मे होता है। भूतकाल की सकर्मक क्रिया के अलावा थूकना, छींकना, खाँसना, नहाना, खखारना के साथ भी ने के प्रयोग मिलते हैं। संयुक्त क्रिया के अंतिम खंड यदि अकर्मक हों तो ने का प्रयोग नहीं होता है। जैसे–

सीता खाना बना चुकी, मैं खा चुका। सजातीय कर्म की उपस्थिति में 'ने' का प्रयोग होता है। जैसे–

सैनिकों ने लड़ाइयाँ लड़ीं।

(ख) कर्म– कर्म में भी परसर्ग सहित तथा परसर्ग रहित शब्दों के प्रयोग होते हैं। जैसे–राम पुस्तक पढ़ता है, सीता मोहन को पीटती है। कर्म के साथ 'को' का प्रयोग होने पर क्रिया कर्त्ता के अनुसार रहती है। जैसे–पुलिस ने बदमाश को पीटा। कर्म के साथ को का प्रयोग होने पर क्रिया पर उसका असर नहीं पड़ता क्रिया पुंल्लिंग में ही रखी जाती है, जैसे–

कवियों को बुलाया गया है। प्राणिवाचक या गौण कर्म के साथ 'को' का प्रयोग अवश्य होता है, जैसे–गाय बछड़े को दूध पिलाती है। कहीं–कहीं कर्त्ता के स्थान पर भी 'को' का प्रयोग मिलता है, जैसे–राधा को ज्वर है। श्यामा को स्कूल जाना है। इस तरह के कर्त्ता अनुभव कर्त्ता है। व्यक्तिवाचक, अधिकार वाचक, तथा सम्बन्धवाचक कर्म में 'को' का प्रयोग होता है–

1. अध्यापक शिष्य को पढ़ा रहा है।
2. नेता अपने चमचों को खोज रहा है।

(ग) करण–जिसके द्वारा (साधन) फल प्राप्ति की चेष्टा की जाती है; जैसे–राम ने बाण से मारा। रीति, मूल्य, तुलना, अंग विकार, मानसिकविकार, कारण, उद्देश्य आदि का बोध कराने के लिए भी करण परसर्ग से या द्वारा के प्रयोग किए जाते हैं; जैसे–1. वह आँख से अंधा है।

2. दुष्ट अपनी चाल से मारा गया।
3. वह जाति से छोटा है।
4. राम आसानी से हर काम कर लेता है।
5. गल्ला महँगे भाव से बिकता है।

(घ) सम्प्रदान–कर्म द्वारा जिसे चाहा जाता है, उसे सर्वनाम कहते हैं, देना, कहना, दिखाना, प्रतिज्ञा करना, रचना, नयना, प्रत्यक्ष होना आदि क्रियाओं के साथ परम्परया सम्प्रदान होता है। उदाहरणार्थ–बच्चों को श्याम ने मिठाई दी। हम लोगों को आधे–घंटे के भीतर प्रस्थान करना चाहिए। मन को विश्राम नहीं मिला, सूझना, माना, नींद आना, पसंद आना आदि के साथ सम्प्रदान का प्रयोग होता है।

(ङ) अपादान–अपादान से अलगाव की सूचना दी जाती है जैसे–राजू नगर से बाहर गया। सूचना पाने, सुनने, सीखने, मांगने, चाहने, इनकार करने, असहमत होने, सम्बन्ध तोड़ने, छूटने, अधिकार या स्थान से च्युत होने, भयभीत होने, उत्पन्न होने, आरंभ सूचक तथा अन्तर सूचक आदि क्रियाओं के साथ अपादान का प्रयोग होता है–

1. आपसे सूचना पाकर मुझे दुख हुआ।
2. उसने हरि से समाचार सुना।
3. गुरु से बहुत ज्ञान सीखने को मिलता है।
4. विजय ने पिता से सम्बन्ध तोड़ लिया।
5. वह पद से मुक्त कर दिया गया।
6. प्रत्येक नेता प्रायः एक दूसरे से असहमत रहता है।
7. कल से कार्य का आरंभ होगा।

(च) सम्बन्ध–इस कारक से किसी व्यक्ति या वस्तु का सम्बन्ध अन्य से बताया जाता है। सम्बन्ध कारक का प्रयोग स्व–स्वामि, कार्य–करण, जाति–व्यक्ति, गुण–गुणी, सामान्य–विशेष, गम्य–गम्यक, सामीप्य, जन्म–जनक आदि अनेक रूपों में होता है; जैसे–

1. वह लाखों का मालिक है।
2. उसका अपना कारोबार है।
3. बिजली गिरने के कारण उसकी मृत्यु हुई।
4. वह ऊँची जाति का है।
5. मोहन श्याम का बेटा है।

(छ) अधिकरण–यह कर्त्ता और क्रिया का आधार होता है; जैसे–

1. मोहन ने कमरे में प्रवेश किया।
2. पुस्तक मेज पर है।
3. वह जमीन पर गिर पड़ा।
4. काम मे लगो।

काल तथा भाव–जिस तरह कारक नाम शब्दों की व्याकरणिक कोटि है उसी तरह क्रिया की व्याकरणिक कोटि काल तथा भाव–सूचक लकार हैं। काल और भाव की दृष्टि से क्रिया के 16 भेद किये गए हैं। इन भेदों में क्रिया की संरचना में सर्वत्र अन्तर नही दिखाई देता है। क्रिया मे मुख्य काल भेद तीन हैं–

1. वर्तमान काल
2. भूतकाल
3. भविष्य काल

वर्तमान काल के छह उपविभाग हैं।

1. वर्तमान (अपूर्ण)–मैं पढ़ता हूँ।

2. वर्तमान पूर्ण–वह चला है।

3. वर्तमान (पूर्ण संभाव्य)–मैं चला होऊँ।

4. वर्तमान (अपूर्ण संभाव्य)–मैं पढ़ता होऊँ

वर्तमान (आज्ञार्थ)–वह पढ़ें।

वर्तमान (संभावनार्थ)–अगर वह पढ़ें।

वर्तमान आज्ञार्थ और संभावनार्थ में अंतर केवल 'अगर' जोड़ने से आता है। क्रिया की रचना एक समान है।

भूत (अपूर्ण)–मैं पढ़ता था।

भूत (पूर्ण)–मैं चला था।

भूत अपूर्ण संभाव्य–मैं पढ़ता होता

भूत पूर्ण संभाव्य–मै चला होता।

भूत पूर्ण निश्चयार्थ–मैं चला।

भूत संभावनार्थ–मैं पढ़ता।

भविष्यत (अपूर्ण)–मैं पढ़ता होऊँगा।

भविष्यत पूर्ण–मैं पढ़ चुकूँगा।

भविष्यत् निश्चयार्थ–मैं पढूँगा।

भविष्य आज्ञार्थ–तू पढ़ना।

विध्यर्थ के लिए हिन्दी में 'चाहिए' का प्रयोग होता है। जैसे–उसे पढ़ना चाहिए। करिए, पढ़िए क्रिया भी विध्यर्थ है किन्तु आदरार्थ इसे आज्ञा हेतु भी प्रयोग किया जाता है।

9.2.5 वाच्य–हिन्दी में तीन वाच्य हैं–

कर्त्तृ वाच्य–इसमें कर्त्ता की प्रधानता होती है। क्रिया कर्त्ता के लिंग–वचन का अनुसरण करती है। जैसे–

1. सोहन पढ़ता है।

2. गीता लिखती है।

3. लड़के जाते हैं।

4. लड़कियाँ जाती हैं।

कर्मवाच्य–इसमें कर्मप्रधान होता है। क्रिया कर्म का अनुसरण करती है। जैसे–पुस्तक पढ़ी जाती है। ग्रंथ देखा गया।

भाव वाच्य–इसमें भाव प्रधान होता है। क्रिया सदैव पुंल्लिंग में रखी जाती है। जैसे–1. सीता से उठा नहीं जाता है।

2. आंख की दुर्बलता से राम से पढ़ा नहीं जाता है।

9.3 प्रकार्यात्मक कोटि–इसके अन्तर्गत उद्देश्य, विधेय तथा अधियोजी (विशेषक) को सम्मिलित किया जाता है। उद्देश्य को ही कर्त्ता कहते हैं। कर्त्ता (विषय) के सम्बन्ध में जो टिप्पणी की जाती है उसे विधेय कहते हैं। हिन्दी के प्रत्येक सरल वाक्य में दो प्रमुख घटक होते हैं कर्त्ता (उद्देश्य) और विधेय। 'राम ने मोहन को मारा' वाक्य में राम ने कर्त्ता या उद्देश्य है और 'मोहन को मारा' विधेय है। उद्देश्य तथा विधेय के साथ जुड़ने वाले विशेषण तथा क्रिया विशेषण वाक्य को विस्तार देते हैं, जैसे–'राम ने मोहन को कल सायं पाँच बजे मैदान में मार डाला' इस वाक्य में कल सायं पाँच बजे को यदि हटा दिया जाए तो वाक्य की हानि नहीं होती। अतः इसे अधियोजी या विशेषक कहा जाता है।

9.4 सारांश–व्याकरणिक कोटियों के अन्तर्गत प्राथमिक, द्वितीयक तथा प्रकार्यात्मक तीन विभाग है। प्राथमिक के अन्तर्गत पद, पद के भेद, वाक्य आदि की गणना की जाती है। कुछ विद्वान् इन्हें व्याकरणिक इकाई मानते हैं। द्वितीयक कोटि में वचन, पुरुष, लिंग, विभक्ति, काल भाव, वाच्य आदि का समावेश है। तृतीय के अन्तर्गत कर्त्ता, विधेय तथा अधियोजी को सम्मिलित किया गया है। पद, वाक्य आदि का वर्णन पिछली इकाई में किया गया है। हिन्दी मे वचन दो है–एक वचन तथा बहुवचन, पुरुष तीन हैं यह मुख्यतः सर्वनाम की कोटि है। उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष, अन्य पुरुष का विभाजन वक्ता, श्रोता तथा विषय की दृष्टि से किया गया है। मैं, हम उत्तम पुरुष हैं, तू, तुम मध्यम तथा वह, वे, यह, ये अन्य पुरुष। सर्वनामों में लिंग भेद नहीं है। क्रिया में लिंग भेद किया जाता है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया में वचन भेद होता है। लिंग दो हैं–पुंल्लिंग तथा स्त्रीलिंग। नपुंसक लिंग को इन्हीं दोनों में समाहित किया गया है। पुंल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के अनेक प्रत्यय हैं जैसे–ई, आ, नी, आनी, इनी, इया आदि। नाम शब्दों को कारकों में, विभाजित करने के लिए परसर्गो का अलग से संयोजन किया जाता है। ने, को, से, का के, की, में पर आदि हिन्दी के कारकीय परसर्ग हैं।

काल रचना के लिए क्रिया का रुपान्तरण वर्तमान, भूत, भविष्य में किया जाता है। इनमें पूर्णता, अपूर्णता तथा संभाव्य के भी भेद है। आज्ञार्थ तथा विधि लिंग भी भाव सूचक प्रयोग है। हिन्दी में वाच्य तीन हैं–कर्त्तृवाच्य, कर्मवाच्य तथा भाव वाच्य। कर्त्त वाच्य मे कर्त्ता, कर्मवाच्य मे कर्म तथा भाव वाच्य मे भाव या क्रिया की प्रधानता रहती है। प्रकार्यात्मक कोटि में उद्देश्य, विधेय तथा विशेषक का विचार किया जाता है। उद्देश्य को कर्त्ता कहते हैं तथा विधेय को टिप्पणी तथा विशेषक। विशेषक वाक्य का वह भाग है जो विशेषण अथवा क्रिया विशेषण के रूप में जोड़ा जाता है।

9.5 संदर्भ ग्रंथ–

1. हिन्दी भाषा–भोलानाथ तिवारी
2. हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य–प्रो. रामकिशोर शर्मा
3. हिन्दी उद्‌भव, विकास और रूप–डॉ. हरदेव बाहरी
4. हिन्दी भाषा–डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया।

9.6 प्रश्नावली–

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. अपादान का प्रयोग कहाँ और कैसे होता है?
2. उत्तम पुरुष सर्वनाम के वचन तथा कारक रचना पर प्रकाश डालिए।
3. वर्तमान काल के कितने उपविभाग हैं।
4. हिन्दी की लिंग सम्बन्धी समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
5. हिन्दी परसर्गों का नामोल्लेख कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी में पुरुष, वचन तथा लिंग सम्बन्धी प्रयोगों का विवेचन कीजिए।
2. हिन्दी काल–रचना तथा भाव–रचना का उदाहरण सहित परिचय दीजिए।
3. हिन्दी कारकों के स्वरूप तथा प्रयोग पर प्रकाश डालिए।
4. उद्देश्य, विधेय तथा वाच्य पर प्रकाश डालिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'लड़के का घर है' मे लड़के के विषय मे कौन कथन गलत है–

   (क) बहुवचन (ख) संज्ञा

   (ग) कर्त्ता (घ) पुंल्लिंग

2. अधियोजी क्या है–

   (क) अधिकरण का दूसरा नाम

   (ख) वाक्य का परिहार्य अंश

   (ग) वाक्य का प्रधान अंश

   (घ) वाक्य रचना का नियम

3. निम्नलिखित में से किस शब्द का प्रयोग एकवचन तथा बहुवचन दोनों में हो सकता है–

   (क) लड़की (ख) बाला

   (ग) पत्थर (घ) रात

4. 'सीता से उठा नहीं जाता' किस वाच्य में है–

(क) कर्त्तृ (ख) कर्म

(ग) भाव (घ) इनमें से कोई नहीं

5. 'मैं चला था' कैसा वाक्य नहीं है–

(क) सरल वाक्य (ख) भूत पूर्ण

(ग) उद्देश्य युक्त (घ) भूत अपूर्ण

उत्तर–1. (क), 2. (ख), 3. (ग), 4. (ग), 5. (घ)

.....

प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

MAHI-114 (N)
हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास

खंड–3

देवनागरी लिपि

इकाई –10
देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्‌भव और विकास

इकाई –11
देवनागरी लिपि की विशेषताएँ–गुण–दोष

इकाई –12
हिन्दी भाषा का मानकीकरण और देवनागरी लिपि

इकाई –13
राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी

खण्ड–3 परिचय

परास्नातक हिंदी कार्यक्रम के अन्तर्गत **हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास** [MAHI-114(N)] पाठ्यक्रम का यह तीसरा खण्ड है, जिसका शीर्षक देवनागरी लिपि है। इस खण्ड के अंतर्गत कुल चार इकाइयाँ (इकाई 10 से इकाई 13 तक) हैं।

इकाई–10 में देवनागरी लिपि के नामकरण एवं उसके उद्‌भव और विकास का उल्लेख है।

इकाई–11 में देवनागरी लिपि की विशेषताओं के साथ उसके गुणों एवं दोषों का वर्णन है।

इकाई–12 के अंतर्गत हिंदी भाषा के मानकीकरण और देवनागरी लिपि की विस्तृत जानकारी है।

इकाई–13 में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिंदी से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु दिये गये हैं।

अतः इन समस्त इकाईयों के माध्यम से आप देवनागरी लिपि के स्वरूप, देवनागरी लिपि की विशेषताओं, उसके गुण–दोष के साथ ही राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिंदी के बारे में समझ सकेंगे।

इकाई– 25 देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्‌भव और विकास

इकाई की रूपरेखा

25.0 प्रस्तावना

25.1 उद्देश्य

25.2 लिपि का अर्थ और परिभाषा

25.3 लिपियों के विकास का क्रमिक इतिहास

25.4 देवनागरी लिपि का परिचय

25.5 देवनागरी लिपि का नामकरण

25.6 देवनागरी लिपि का उद्‌भव और विकास

25.7 सारांश

25.8 शब्दावली

25.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

25.10 प्रश्नावली–

25.10.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

25.10.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

25.10.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

25.0 प्रस्तावना

'देवनागरी लिपि का नामकरण, उद्‌भव और विकास' शीर्षक इस इकाई में लिपियों के बारे में बात करते हुए देवनागरी लिपि के नामकरण, उद्‌भव और विकास के बारे में बताया गया है । किसी भी भाषा का अस्तित्व लिपि के बिना संभव ही नहीं है । भाषा अपने आप में एक 'श्रव्य' रूप है वह लिपि के माध्यम से ही दृश्य रूप में हमारे सामने आ पाती है । अतः जो महत्त्व किसी भी देश के इतिहास और संस्कृति में भाषा का होता है वही महत्त्व लिपि का भी होता है । संवैधानिक स्तर पर हिंदी हमारी राजभाषा तो है ही साथ ही वह पूरे देश को एकता के सूत्र में पिरोने वाली राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा भी है । यही कारण है कि हिंदी पूरे देश में बोली सौर समझी जाती है चूँकि हिंदी की लिपि देवनागरी है अतः देवनागरी भी पूरे देश में प्रयुक्त होने वाली लिपि है । इस इकाई में लिपि और देवनागरी लिपि के उद्‌भव और विकास पर विस्तार से चर्चा की गयी है । लिपियों का बहुत लम्बा क्रमिक इतिहास रहा है । देवनागरी लिपि का मूल सम्बन्ध भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी से माना जाता है । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से आप लिपि और देवनागरी लिपि के बारे में भली भांति परिचित होने के साथ ही इस विषय पर अच्छी प्रकार से बात करने में सक्षम होंगें ।

25.1 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को लिपि से परिचित कराने के साथ ही लिपियों की विकास यात्रा के बारे में बताना है । लिपि के बिना भाषा का कोई अस्तित्व नहीं होता है इसलिए प्रत्येक छात्र को अपनी भाषा और लिपि के बारे में जानना चाहिए । इसी कारण इस इकाई में छात्रों को लिपि से परिचित कराने के साथ ही हिन्दी की लिपि देवनागरी लिपि से भली भांति परिचित कराया जायेगा । इसके साथ ही छात्रों को देवनागरी लिपि के नामकरण के विवाद के विषय में बताते हुए उसके उद्‌भव और विकास के बारे में भी जानकारी दी जायेगी। इस इकाई के सम्यक अध्ययन के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- लिपि क्या है

- लिपि का अर्थ और परिभाषा
- लिपियों के विकास का क्रमिक इतिहास
- देवनागरी लिपि का परिचय
- देवनागरी लिपि का नामकरण
- देवनागरी लिपि का उद्‌भव और विकास

25.2 लिपि का अर्थ और परिभाषा

लिपि किसी भी भाषा का लिखित पर्याय है । लिपि का अर्थ है लिखावट। प्रत्येक भाषा की अपनी एक लिपि होती है जिसमें उस भाषा को लिखा जाता है । इस प्रकार 'लिखित ध्वनि संकेतों को लिपि कहते हैं । लिपि का विकास भाषा के विकास के बाद होता है । लिपि के अभाव में भाषा का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा । भाषा मुख से उच्चारित की गई ध्वनियाँ हैं इस कारण यह 'श्रव्य' होती है लिपि में आने के बाद यह 'दृश्य' हो जाती है । वर्तमान समय में जो लिपियाँ प्रचलित हैं उनके विकास का क्रमिक इतिहास मिलता है ।

प्राख्यात भाषा वैज्ञानिक भोलानाथ तिवारी मानते है कि– 'भाषा अपने मूल रूप में ध्वनि पर आधारित है । ध्वनियाँ ही उच्चरित होती है और सुनी जाती है । इस प्रकार भाषा की काल और स्थान की दृष्टि से सीमा है । वह केवल तभी सुनी जा सकती है जब बोली जाती है तथा वहीं तक सुनी जा सकती है जहाँ तक आवाज़ जा सकती है। काल और स्थान की इस सीमा के बंधन से भाषा को निकालने के लिए लिपि का जन्म हुआ। निश्चय ही भाषा के विकसित हो जाने के बाद ही लिपि का विकास हुआ होगा । लिपि और भाषा का सम्बन्ध यह है कि भाषा अपने मूल रूप में ध्वनियों पर आधारित है, लिपि में उन ध्वनियों को रेखाओं द्वारा व्यक्त करते हैं ।' इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि– 'किसी भी भाषा की ध्वनियों के लिए निर्धारित प्रतीक चिह्नों को लिपि कहा जाता है ।'

25.3 लिपियों के विकास का क्रमिक इतिहास

किसी भी लिपि का विकास हमेशा भाषा के विकास के बाद ही होता है । प्राचीन भारत में भावों और विचारों को सुरक्षित रखने के लिए भोजपत्र पर कोई विशेष लेप लगाने के बाद उस पर किसी नुकीली चीज़ से खरोंच कर संकेत चिह्न अंकित किये जाते थे । यदि किसी विषय के लिए अधिक भोजपत्रों का प्रयोग करना पड़ता था, तो उन्हें एकत्र कर उनमें ग्रंथि लगा दी जाती थी । इस प्रक्रिया के प्रमाण स्वरूप चार शब्द वर्तमान लेखन में भी विद्यमान हैं–

- भोजपत्र **>** पत्र
- लेप **>** लिपि
- खरोंचना **>** लिखना
- ग्रन्थि **>** ग्रन्थ

इस प्राचीन प्रक्रिया के प्रारम्भ काल को लेकर विद्वान एक मत नहीं है। कतिपय यूरोपीय विद्वानों के अनुसार भारत में लिपि का प्रयोग बहुत बाद में प्रारंम्भ हुआ होगा, लेकिन भारतीय भाषाविदों का तर्क यह है कि जिस देश में भाषा के व्याकरणिक विश्लेषण की परम्परा प्राचीन काल से ही समृद्ध रही है, वहां लिपि का विकास बहुत पहले हो गया होगा ।

भोलानाथ तिवारी नें लिखा है कि– 'मानव ने भाषा द्वारा व्यक्त अपने विचारों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए लिपि को जन्म दिया । लिपि का जन्म भाषा के जन्म के बहुत बाद में हुआ । प्रारम्भिक लिपि चित्रलिपि थी । अर्थात अपने भावों को चित्र या रेखाचित्र के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता था । जैसे पेड़ को अभिव्यक करने के लिए पेड़ बना देना या बंदर मछली आदि को अभिव्यक्त करने के लिए उनका चित्र बना देना । चित्रलिपि से फिर भावलिपि का विकास हुआ । भावलिपि में चित्र न बना कर वस्तुओं के लिए प्रतीक चिह्न बनाए जाने की व्यवस्था थी । इन चित्रों का विकास मूलतः चित्रलिपि से ही हुआ था । भावलिपि से ध्वनि लिपि का विकास हुआ । ध्वनिलिपि में चिह्नों का सम्बन्ध भावों से न होकर ध्वनि से हो गया

और ये भावों या वस्तुओं को व्यक्त न करके उनके लिए प्रचलित और प्रयुक्त नामों को व्यक्त करने लगे । ध्वनि लिपि आक्षरिक और वर्णात्मक दो प्रकार की होती है ।

लिपियों के विकास का यह एक क्रमिक इतिहास है। वर्तमान समय तक उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह माना जाता है कि '4000 ई० पू० के मध्य तक लेखन की किसी भी व्यवस्थित पद्धति का कहीं भी विकास नहीं हुआ था और इस प्रकार के प्राचीनतम अव्यवस्थित प्रयास 10,000 ई०पू० से भी कुछ पूर्व किये गए थे। इस प्रकार इन्हीं दोनों के बीच, अर्थात 10,000 ई०पू० और 4000 ई०पू० के बीच लगभग 6,000 वर्षों में धीरे–धीरे लिपि का प्रारम्भिक विकास होता रहा' । इस विकास का क्रम इस प्रकार मिलता है–

- चित्र लिपि
- सूत्र लिपि
- प्रतीकात्मक लिपि
- अक्षरात्मक लिपि
- वर्णात्मक लिपि

प्राचीन भारतीय लिपियों में मुख्य रूप से सिन्धु घाटी लिपि, ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियाँ ही प्रचलित रही हैं । पुराने शिलालेखों और सिक्कों पर भी यही लिपियाँ मिलती हैं । ऐसा माना जाता है कि खरोष्ठी लिपि उर्दू की भांति पहले दायें से बाएं की ओर लिखी जाती थी पर ब्राह्मी के प्रभाव के कारण यह भी बायें से दायें की और लिखी जाने लगी । अवैज्ञानिक होने के कारण बहुत समय तक प्रचलित नहीं रह सकी। ब्राह्मी प्राचीनकाल से ही भारत की मुख्य लिपि रही है । ब्राह्मी के दो रूप प्रचलित थे– दक्षिणी ब्राह्मी और उत्तरी ब्राह्मी । दक्षिणी ब्राह्मी से द्रविड़ परिवार की लिपियों का विकास हुआ और उत्तरी ब्राह्मी से उत्तर भारतीय लिपियों का ।

उत्तर भारत की लिपियों में गुप्त लिपि, कुटिल लिपि शारदा लिपि और नागरी लिपि का विकास हुआ । गुप्त राजाओं के समय में प्रचार और प्रसार होने का कारण इसका नाम 'गुप्त लिपि' पड़ा । आगे चलकर जब गुप्त लिपि साधारण

प्रयोग में टेढ़े–मेढ़े (कुटिल) अक्षरों से युक्त हो गयी तो इसे कुटिल लिपि कहा जाने लगा । कुटिल लिपि को ही कालान्तर में कश्मीरी पंडितों नें 'शारदा लिपि कहा और कश्मीर के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों जैसे गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश आदि में कुटिल लिपि से विकसित होने वाली लिपि को 'प्राचीन नागरी' कहा गया । शारदा और नागरी लिपियाँ भी इसी से निकली और विकसित हुयी हैं । देवनागरी लिपि का मूल सम्बन्ध भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी से माना जाता है ।

25.4 देवनागरी लिपि का परिचय

किसी भी भाषा को लिखने के लिए एक लिपि का होना अत्यंत आवश्यक है। लिपि के अभाव में भाषा का कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाएगा । भाषा और लिपि में गहरा सम्बन्ध है । हमारे देश की राजभाषा हिंदी है । हिंदी ही वह भाषा है जो वर्तमान समय में पूरे देश में बहुसंख्यक वर्ग द्वारा बोली व समझी जाती है । इसके साथ ही हिंदी वह भाषा है जिसे देश भर के बहुसंख्यक वर्ग अपनी दैनिक दिनचर्या में प्रयुक्त करते हैं । हिंदी भाषा को लिखने के लिए जिस लिपि का प्रयोग किया जाता है वह देवनागरी लिपि है । भारतीय संविधान की धारा 343 में यह लिखा है कि– **'संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।'** इस प्रकार देवनागरी लिपि राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त और जन–जन द्वारा सर्वमान्य लिपि है ।

'ब्राह्मी लिपि के प्राचीनतम नमूने 5वीं सदी इ० पू० के मिले हैं । आगे चलकर उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत के रूपों में अंतर दिखाई देने लगा। उत्तरी भारत का रूप इसके मूल और पुराने रूप के ज्यादा करीब माना गया । मध्य एशिया में ब्राह्मी लिपि में ही पुरानी खोतानी तथा तोखारी आदि भाषाओं के लेख मिलते हैं । 5वीं सदी ई० पू० से लेकर 350 ई० तक भारत में प्राप्त ब्राह्मी लिपि थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ ब्राह्मी के नाम से पहचानी जाती है । आगे चल कर ब्राह्मी लिपि की दो शैलियाँ हो गयी उत्तरी और दक्षिणी । ब्राह्मी लिपि की उत्तरी शैली से क्रमबद्ध विकास से गुजरते हुए नागरी लिपि का विकास हुआ ।

25.5 देवनागरी लिपि का नामकरण

देवनागरी लिपि के नामकरण को लेकर प्रारम्भ से ही विद्वानों में विवाद रहा है । किसी भी एक मत को लेकर सभी सहमत नहीं हो सके । यही कारण रहा है कि कुछ विद्वान तो इसके नामकरण का आधार 'देव' से स्वीकारते हैं तो कुछ के मतानुसार 'नागरी' के आधार पर देवनागरी नाम पड़ा । कुछ 'देवनागरी' शब्द को ही प्रमुख मानते हैं ।

- जो वर्ग 'देव' शब्द से देवनागरी नामकरण की व्याख्या करता है उनके मतानुसार 'ब्राह्मी लिपि के बाद इसी लिपि में देव या धर्म सम्बन्धी साहित्य का प्रणयन हुआ, इसलिए इसे देवनागरी कहा गया ।' इसी वर्ग द्वारा यह भी स्वीकार किया गया कि देववाणी संस्कृत को व्यक्त करने के कारण यह लिपि देवनागरी कहलाई ।
- दूसरा वर्ग जो देवनागरी नामकरण की व्याख्या 'नागरी' शब्द से करता है उसकी मान्यता है कि 'यह लिपि नगरों में विकसित होने के कारण देवनागरी कहलाई । यही वर्ग गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने के कारण ही देवनागरी नामकरण होना स्वीकार करता है ।

देवनागरी लिपि के नामकरण को लेकर अन्य जो मत सामने आये उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

1. एक मत के अनुसार 'प्रमुख नगरों में प्रचलित होने के कारण ही नागरी नाम पड़ा' और कालान्तर में यही देवनागरी कहलाई ।

2. 'देवनगर' अर्थात काशी में प्रयुक्त होने के कारण देवनागरी नाम पड़ा

3. संस्कृत को देववाणी कहा जाता है । संस्कृत लिखने में प्रयुक्त होने की कारण और देवताओं की उपासना के लिए जो संकेत बनाए जाते थे उन्हें देवनागर कहते थे वहीं से देवनागरी नाम पड़ा।
4. कुछ विद्वान् गुजरात के 'नागर' ब्राह्मणों से और कुछ 'नगर' से उत्पन्न होने का कारण देवनागरी नाम स्वीकार करते हैं। गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने के कारण नागरी कहलाई ।

5. श्री आर श्याम शास्त्री का मानना है कि भारत में पहले देवताओं की मूर्तियों की पूजा नही की जाती थी बल्कि उनके सांकेतिक चिह्नों को पूजने का प्रचलन था। ये चिह्न त्रिकोण यंत्रों के बीच में अंकित किये जाते थे। ये यंत्र 'देवनगर' कहलाते थे और उनके अंदर अंकित चिह्नों को 'देवनागर' कहा जाता था। इसी देवनागर चिह्न से देवनागरी शब्द का विकास हुआ ।

6. कुछ विद्वान ऐसा भी मानते हैं कि पाटलिपुत्र को नगर और चन्द्रगुप्त द्वितीय को देव कहा जाता था । देवनगर द्वारा प्रयुक्त होने के कारण इसे देवनागरी कहा जाने लगा । जिस प्रकार दक्षिण में नंदिनगर से नन्दिनागरी नाम पड़ा ।

7. एक अन्य मत के अनुसार 'मध्ययुग में स्थापत्य की एक शैली 'नागर' थी, जिसमें चतुर्भुजी आकृतियाँ होती थीं। दो अन्य शैलियाँ द्रविड़ (अष्टभुजी या सप्तभुजी) तथा बसर (वृत्ताकार) थी। नागरी लिपि में चतुर्भुजी अक्षरों प, भ, म, ग, के कारण ही इसे नागर कहा गया'।

8. डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने यह माना कि 'मध्ययुग में स्थापत्यकला की अनेक शैलियाँ विकसित थी । उनमें से एक शैली का नाम 'नागर' शैली था । इस शैली के अंतर्गत चौकोर आकृतियाँ बनायी जाती थी । नागरी लिपि के अक्षरों की आकृति भी चौकोर होती थी। इसी समानता को देखते हुए इसका नाम 'नागरी' पड़ा ।

9. 'ललित विस्तार' बौद्ध ग्रन्थ है । इसमें एक नाग लिपि का भी नाम आता है इस कारण विद्वानों का मानना है कि इसी नाग लिपि से नागरी शब्द विकसित हुआ है । डॉ0 बार्नेट इस मत से सहमत नहीं है । उनका मानना है कि 'नाग और नागरी दो अलग–अलग लिपियाँ हैं ये एक नहीं हो सकती ।'

इसी प्रकार से अन्य मत भी सामने आते हैं । सत्य यह है कि ये सभी नामकरण अनुमान पर ही आधारित हैं । कोई भी तथ्य सत्यता को प्रमाणित नहीं करता है । यदि तर्क के साथ ही बहुमत की बात की जाए तो अधिकाँश विद्वान

देववाणी संस्कृत और पाटलिपुत्र वाले तथ्य को इस नामकरण के सबसे अधिक सहमत दिखाई देते हैं ।

25.6 देवनागरी लिपि का उद्‌भव और विकास

जैसा कि हमने जाना कि भारत की प्राचीन लिपियों में सिन्धु घाटी की लिपि, खरोष्ठी लिपि और ब्राह्मी लिपि प्रसिद्ध है । डॉ0 हरदेव बाहरी मानते है कि– 'सिन्धुघाटी की लिपि कुछ चित्राक्षर थी और कुछ ध्वन्याक्षर । सन 400 ई०पू० से पहले इसका व्यवहार भारत के उत्तर–पश्चिम प्रदेश में होता था। खरोष्ठी का प्रचलन उत्तर–पश्चिम में एक हज़ार वर्ष तक रहा । यह दाहिने से बाएं की ओर चलती हुयी लिखी जाती थी । इन दोनों लिपियों से देवनागरी का कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है । प्रमाणों से जान पड़ता है कि ब्राह्मी लिपि अधिक व्यापक है और यह प्राचीन काल से कार्य व्यवहार में प्रयुक्त होती रही है । लिपि विज्ञान के आचार्य डॉ0 राजबली पाण्डेय का मत है कि ब्राह्मी का आविष्कार ब्रह्म या वेद की रक्षा के लिए हुआ था । विशेष बात यह है कि ब्राह्मी की लिपिमाला में वैदिक ध्वनियों के पूरे प्रतीक विद्यमान हैं । यही कारण है कि कुछ विद्वान ब्रह्मा से, कुछ ब्रह्मा के नाम से तो कुछ ब्राह्मण वर्ग से इसकी उत्पत्ति स्वीकार करते हैं। डॉ0 हरदेव बाहरी ने ब्राह्मी लिपि के उद्‌भव और विकास यात्रा की बात करते हुए इसे तीन कालों में विभक्त किया है–

1. प्रागैतिहासिक काल (वैदिक युग से ई० पू० की छठी शती तक)
2. बौद्धकाल (जब ब्राह्मी के अक्षर गोल आकार लेने लगे थे)
3. गुप्तकाल (जिसके बाद ब्राह्मी लिपि आधुनिक लिपियों के रूप में विकसित हुयी)

जैसा कि अभी बताया गया कि कालान्तर में थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ ही गुप्त लिपि से ही कुटिल लिपि और फिर कुटिल लिपि से ही उत्तर भारत की अन्य बहुत सी लिपियों का विकास हुआ जिनमें देवनागरी प्रमुख है ।

देवनागरी लिपि का प्रयोग सबसे पहले सातवीं आठवीं शती ई. में गुजरात के राजा जयभट्ट के एक शिलालेख में हुआ है । ऐसा माना जाता है कि आठवीं शती में राष्ट्रकूट नरेशों ने और नवीं शती में बड़ौदा के राजा ध्रुवराज नें अपनी राजाज्ञाओं

में देवनागरी का प्रयोग किया है। विजयनगर राज्य के साथ ही कोंकण में भी देवनागरी का व्यवहार होता रहा है जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि देवनागरी का विकास सर्वप्रथम दक्षिण में हुआ । उसके बाद यह उत्तरी भारत में प्रचलित हुयी । हमारा सम्पूर्ण वैदिक और संस्कृत वांग्मय देवनागरी लिपि में ही लिखा गया है ।

वर्तमान समय में देवनागरी भारत के सबसे प्रमुख और प्रचलित लिपि है क्योंकि यह हिंदी, संस्कृत, नेपाली, मराठी आदि भाषाओं और बोलियों में लिखी जाती है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार और महाराष्ट्र में पाए गए ताम्रपत्रों और शिलालेखों के साथ ही हस्तलेख भी नागरी लिपि में लिखे पाए गए हैं।

दसवीं से लेकर बीसवीं शताब्दी तक यह लिपि हिंदी भाषा के रूप में देश की मुख्य लिपि बनी रही। तदुपरांत मानकीकरण के प्रयासों द्वारा सम्पूर्ण भारत की राष्ट्रीय लिपि के रूप में इसका विकास होने लगा। संविधान ने भी राजलिपि कहकर मान्यता प्रदान की। वर्तमान समय में यह ऐसी 'एकमात्र लिपि है जो देश की सभी भाषाओं की भाषिक विशेषताओं को धारण करके राष्ट्रीय एकीकरण का सशक्त माध्यम बन सकती है।

25.7— सारांश

इस इकाई में छात्रों को लिपि से परिचित कराते हुए उसके अर्थ, परिभाषा और विकास के क्रमिक इतिहास के बारे में विस्तार से बताया गया । इसके साथ ही देवनागरी लिपि का परिचय देते हुए उसके नामकरण पर प्रकाश डाला गया। देवनागरी के नामकरण को लेकर विद्वानों में हमेशा से बहुत विवाद की स्थिति रही है। इस इकाई में छात्रों को देवनागरी के नामकरण की समस्या समझनें में सहायता मिलेगी । इसके अतिरिक्त इस इकाई में देवनागरी लिपि के उद्‌भव और विकास के बारे में विस्तार से जानकारी दी गयी । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से छात्र लिपि के बारे में भली प्रकार वार्ता करने में सक्षम होंगे और साथ ही लिपियों के

विकास के बारे में उनके ज्ञान में वृद्धि हुयी होगी । साथ ही छात्र देवनागरी के विकास के बारे में अच्छी तरह से जान गए होंगें।

25.8– शब्दावली

श्रव्य	–सुनना
दृश्य	–देखना
भाषाविद	–भाषा का विद्वान
चतुर्भुज	–चार भुजाओं वाला

25.9– संदर्भ ग्रन्थ

1. भोलानाथ तिवारी– भाषा विज्ञान
2. हरदेव बाहरी– हिंदी भाषा
3. भोलानाथ तिवारी– हिंदी भाषा

25.10– अभ्यास प्रश्न

25.10.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

1. ब्राह्मी लिपि के दो रूप कौन से हैं–

1. पूर्वी–पश्चिमी
2. उत्तरी–दक्षिणी
3. पूर्वी–उत्तरी
4. दक्षिणी– पश्चिमी

सही उत्तर– 2. उत्तरी–दक्षिणी

2. देवनागरी किस भाषा की लिपि नहीं है–

1. हिंदी
2. संस्कृत,
3. गुजराती
4. मराठी

सही उत्तर– 3. गुजराती

3. डॉ0 हरदेव बाहरी ने ब्राह्मी लिपि के उद्‌भव और विकास यात्रा को किस काल में विभक्त नहीं किया है–

1. प्रागैतिहासिक काल
2. बौद्धकाल
3. गुप्तकाल
4. आधुनिक काल

सही उत्तर– 4. आधुनिक काल

4. भाषा लिपि में आने के बाद किस रूप में आ जाती है ?

1. श्रव्य रूप में
2. दृश्य रूप में
3. अदृश्य रूप में
4. अलौकिक रूप में

सही उत्तर– 2. दृश्य रूप में

5. प्राचीन भारतीय लिपियों में मुख्य रूप कौन सी लिपि प्रचलित नहीं थी–

1. सिन्धु घाटी लिपि
2. ब्राह्मी
3. खरोष्ठी
4. रोमन

सही उत्तर– 4. रोमन

25.10.2– लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लिपि से आप क्या समझते हैं ?

2. लिपि की सर्वोत्तम परिभाषा क्या है ?

3. लिपि का विकास किस क्रम में हुआ ?

4. भारत में प्रयुक्त होने वाली लिपियाँ कौन सी हैं ?

5. गुप्त लिपि का नाम 'गुप्त लिपि' क्यों पड़ा ?

6. देवनागरी की उत्पत्ति किस से हुयी ?

25.10.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. लिपि से क्या तात्पर्य है ? लिपियों के विकास के क्रमिक इतिहास को स्पष्ट कीजिये।
2. देवनागरी लिपि का परिचय देते हुए इसके उद्‌भव और विकास पर प्रकाश डालिए।
3. देवनागरी लिपि के नामकरण की समस्या पर विस्तार से बताते हुए सर्वथा उपयुक्त मत के बारे में लिखिए ।
4. देवनागरी लिपि की उत्पत्ति पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए वर्तमान समय में इसकी उपयोगिता के बारे में लिखिए ।

इकाई–26 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ–गुण–दोष

इकाई की रूपरेखा

26.0 प्रस्तावना

26.1 उद्देश्य

26.2 देवनागरी लिपि की विशेषताएं

26.3 देवनागरी लिपि के गुण

26.3.1– वर्णमाला के क्रम में वैज्ञानिकता

26.3.2– एक वर्ण के लिए एक ध्वनि चिह्न की व्यवस्था

26.3.3– एक ध्वनि के लिए एक वर्ण की व्यवस्था

26.3.4– प्रत्येक अक्षर का उच्चारण होना

26.3.5– शिरोरेखा की व्यवस्था

26.3.6– कम स्थान घेरने वाली

26.3.7– उच्चारण में सरल व सुगम

26.3.8– लेखन व उच्चारण में एकरूपता

26.3.9– बनावट में आकर्षक, सुंदर व कलात्मक

26.3.10– व्यापकता

26.3.11– स्वदेशी होना

26.4 देवनागरी लिपि के के दोष/ सीमाएं

26.4.1– वर्णमाला की समस्या

26.4.2– टंकण और मुद्रण में कठिनाई

26.4.3– मात्राओं की समस्या

26.4.4– शिरोरेखा की समस्या

26.4.5– संयुक्ताक्षर की समस्या

26.4.6– एकरूपता का अभाव

26.4.7– वर्णों के बनावट की समस्या

26.5 सारांश

26.6 शब्दावली

26.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

26.8 प्रश्नावली–

26.8.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

26.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

26.8.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

26.0 – प्रस्तावना

इस इकाई में देवनागरी लिपि की विशेषताओं पर बात करते हुए उसके गुणों और दोषों को विस्तार से रेखांकित किया गया है । देवनागरी लिपि की वर्णमाला का क्रम पूर्णतया वैज्ञानिक है । इसके उच्चारण स्थान को ध्यान में रखते हुए इसकी वर्णमाला तैयार की गयी है । हिंदी के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश के साथ ही मराठी, नेपाली आदि भाषाएँ भी देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं । एक आदर्श लिपि में जो गुण पाए जाने चाहिए वह सब देवनागरी लिपि में पाए जाते हैं । यह भी सत्य है कि कोई भी लिपि पूर्ण रूप से निर्दोष नही है । सब में कुछ न कुछ कमियाँ पायी जाती हैं। देवनागरी के साथ एक विशेष तथ्य यह है कि जो उसके गुण हैं, विद्वानों की दृष्टि में वही उसकी सीमाएं भी हैं। जिस वैज्ञानिकता

के कारण वह विश्व भर में जानी पहचानी जाती है वही कहीं न कहीं उसे दोषयुक्त भी बनाती है। इस इकाई में देवनागरी लिपि के सतत मूल्यांकन के लिए और उसकी विशिष्टताओं से परिचित होने के लिए उसके गुणों और दोषों की विस्तार से व्याख्या की गयी है । इस इकाई के सम्यक अध्ययन के बाद छात्र देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को समझ पायेंगे । इसके साथ ही उन्हें इस बात का भी ज्ञान होगा कि देवनागरी लिपि को विश्व भर की लिपियों में श्रेष्ठ क्यों कहा जाता है।

26.1 – उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों का देवनागरी लिपि के बारे में ज्ञानवर्धन करना है । छात्र अपनी भाषा और उसकी लिपि के बारे में पर्याप्त समझ रखते हैं और वह लिपि के क्रमिक विकास के साथ ही देवनागरी लिपि की उत्पत्ति और विकास के बारे में भी जानते हैं । उन्हें अपनी लिपि का उचित ज्ञान होने के साथ ही उसकी विशेषताओं और सीमाओं के बारे में परिचित होना चाहिए । इसलिए इस इकाई में देवनागरी लिपि की विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा की जाएगी। इसके साथ ही देवनागरी के गुणों पर भी विस्तार से बात करते हुए उसके उसके दोषों के बारे में बताया जाएगा । गुणों और दोषों के सम्यक अध्ययन से छात्रों में मूल्यांकन की क्षमता का विकास होगा । इस इकाई के अध्ययन के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- देवनागरी लिपि की विशेषताएं
- देवनागरी लिपि के गुण
- देवनागरी लिपि की दोष
- देवनागरी लिपि का समुचित मूल्यांकन करना

26.2 – देवनागरी लिपि की विशेषताएं

वर्तमान समय में देवनागरी लिपि की अपनी अलग पहचान है । विश्व भर की लिपियों में यह अपनी वैज्ञानिकता एवं प्रमाणिकता के कारण जानी जाती है । किसी भी वैज्ञानिक अथवा आदर्श लिपि में जो विशिष्टताएं होती हैं वह देवनागरी

लिपि में पाई जाती है । किसी भी आदर्श लिपि के लिए जो विशेषताएं होनी चाहिए वह सभी देवनागरी में पायी जाती हैं । एक ध्वनि के लिए एक चिह्न की व्यवस्था और एक चिह्नके लिए केवल एक ही ध्वनि का होना बहुत दुर्लभ होता है। विश्व की कई लिपिया इस कसौटी पर खरी नहीं उतरती हैं किन्तु देवनागरी में यह दोनों ही विशेषताएं विद्यमान हैं । भारत जैसे बहुभाषाभाषी देश को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए जिस प्रकार एक भाषा का होना अनिवार्य माना गया था उसी प्रकार एक लिपि का होना भी बहुत जरूरी था देवनागरी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण लिपि मानी गयी । यही कारण है कि यद्यपि अपने देश में अनेक प्रादेशिक भाषायें और लिपियां प्रचलित हैं लेकिन सभी लिपियों में देवनागरी सबसे अधिक व्यवहार में लाई जाती है । देवनागरी लिपि की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. हमारे देश की **आधिकारिक लिपि** देवनागरी ही है क्योंकि यह संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त लिपि है ।
2. देवनागरी एक **व्यवस्थित लिपि** है । इसकी वर्णमाला क्रमिक रूप से वैज्ञानिकता को को ध्यान में रखते हुए व्यवस्थित की गयी है ।
3. देवनागरी **ध्वन्यात्मक लिपि** है । इसके प्रत्येक चिह्न का एक ध्वन्यात्मक मूल्य है । इसमें उच्चारित ध्वनियों को व्यक्त करना बहुत ही आसान है । ध्वन्यात्मक होने के ही कारण इसमें जो कुछ बोला जाता है वही लिखा भी जाता है और जैसा लिखा जाता है वही उच्चारण भी किया जाता है ।
4. देवनागरी में **स्वरों के लिए अलग से व्यवस्था** की गयी है । ये स्वर ह्रस्व और दीर्घ के रूप में व्यवस्थित हैं ।
5. इसी प्रकार देवनागरी लिपि में ध्वनियाँ दो रूपों– स्वर और व्यंजन के रूप में विभक्त हैं । जबकि रोमन, अरबी, फ़ारसी आदि लिपियों में स्वरों के लिए अलग से कोई अन्य व्यवस्था नहीं है ।
6. देवनागरी लिपि में **व्यंजनों के लिए वर्ग निर्धारण** किया गया हैं वह उच्चारण स्थान को ध्यान में रखते हुए किया गया है । जैसे कण्ठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य और ओष्ठ्य उच्चारण स्थान के अनुसार ही कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग आधी की व्यवस्था की गयी है ।

7. चूंकि देवनागरी लिपि में **अल्पप्राण और महाप्राण वर्णों के लिए अलग–अलग चिह्न है** अतः जो उच्चारण किया जाता है वही लिखा भी जाता है । जबकि अंग्रेजी और उर्दू में ऐसा नहीं है ।
8. देवनागरी लिपि **एक ध्वनि के लिए कई वर्ण नहीं** है । उर्दू में 'स' को तीन प्रकार से लिखा जाता है 'सीन', 'से', 'स्वाद' और 'त' भी तीन प्रकार से लिखा जाता है– 'ते' और 'तोय' । देवनागरी इस दोष से मुक्त है ।
9. यह **बायें से दायें की ओर** लिखी जाती है।
10. जो ध्वनि का नाम है वही वर्ण का भी नाम है।

इन विशेषताओं से यह स्पष्ट होता है कि देवनागरी एक सुव्यवस्थित लिपि है। इन्हीं विशिष्टताओं के कारण ही इसे संविधान द्वारा मान्यता प्रदान की गयी। देवनागरी की इन्हीं सब विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए डॉ0 राम मनोहर लोहिया नें कहा था कि– 'क्यों न भारत की सभी भाषाएँ एक ही लिपि (देवनागरी) अपनाएँ।'

26.3–देवनागरी लिपि की गुण–

देवनागरी लिपि में कुछ विशेष गुण हैं जिनके कारण वह देश भर में लोकप्रिय है । उसकी वैज्ञानिकता, ध्वनि व्यवस्था, उच्चारण व्यवस्था, व्यापकता आदि उसे विशिष्ट बनाते हैं। देवनागरी लिपि के प्रमुख गुण इस प्रकार हैं–

26.3.1– वर्णमाला के क्रम में वैज्ञानिकता

देवनागरी लिपि की वर्णमाला पूरी तरह से वैज्ञानिक है । सबसे पहले स्वरों की व्यवस्था है उसके बाद व्यंजनों का क्रम आता है । स्वर में भी पहले ह्रस्व फिर क्रमानुसार दीर्घ की व्यवस्था है । रोमन में स्वरों का कोई निश्चित क्रम या व्यवस्था नहीं है इस कारण सबसे पहले A आता है, E पांचवें स्थान पर, I नवें स्थान पर O पन्द्रहवें स्थान पर आता है । देवनागरी में स्वर के उपरान्त व्यंजन हैं । व्यंजन में भी उच्चारण स्थान को ध्यान में रखते हुए वर्ण व्यवस्था है । यह क्रम इस प्रकार है–

कंठ > तालव्य > मूर्धा > दन्त्य > ओष्ठ्य > नासिका

इनके अंतर्गत भी पहले दो वर्ण घोष हैं फिर सघोष, फिर पांचवां वर्ण अनुनासिक है । पहला और तीसरा वर्ण महाप्राण है और दूसरा और चौथा महाप्राण है । देवनागरी लिपि की वर्णमाला इस प्रकार है–

स्वर– अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

अनुस्वार– अं

अनुनासिक– चंद बिंदी (ँ)

विसर्ग– : (अ)

व्यंजन

कवर्ग – क ख ग घ ङ (कंठ)
चवर्ग – च छ ज झ ञ (तालव्य)
टवर्ग – ट ठ ड ढ ण (मूर्धन्य)
तवर्ग – त थ द ध न (दन्त्य)
पवर्ग – प फ ब भ म (ओष्ठ्य)
अन्तस्थ – श ष स ह
संयुक्त व्यंजन – क्ष त्र ज्ञ श्र

26.3.2– एक वर्ण के लिए एक ध्वनि चिह्न की व्यवस्था–

देवनागरी लिपि की सबसे प्रमुख विशेषता एक वर्ण से एक ही ध्वनि का उच्चारण होना है । जबकि उर्दू और अंग्रेजी में ऐसा नहीं है । जैसे देवनागरी में 'म' का उच्चारण 'म', 'फ' का उच्चारण 'फ', 'ल' का 'ल' होता है लेकिन अंग्रेजी में 'M' के लिए 'एम' 'F' के लिए 'एफ', 'L' के लिए 'एल' उच्चारण किया जाता है।

26.3.3– एक ध्वनि के लिए एक वर्ण की व्यवस्था

देवनागरी लिपि में किसी भी वर्ण के लिए एक ही ध्वनि चिह्न का प्रयोग होता है । जैसे यदि हमें 'क' कहना है तो हम 'क' का और 'स' कहना है तो 'स' का ही

प्रयोग करेंगे लेकिन अंग्रेजी में ऐसा नहीं है द्य यहाँ 'क' के लिए K के साथ ही 'C' और 'Q' का प्रयोग भी होता है । इसी तरह 'स' के लिए 'S' के साथ ही 'C' भी प्रयुक्त होता है ।

26.3.4– प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होना

देवनागरी लिपि पठन–पाठन की दृष्टि से भी सरल और ग्राह्य है क्योंकि इस्मने जो लिखा है वही उच्चारण भी किया जाता है । अंग्रेजी में बहुत बार ऐसा देखने में आता है कि लिखा कुछ और होता है और उसका उच्चारण कुछ कुछ और किया जाता है । वहां कई शब्द मूक हो जाते हैं, जबकि देवनागरी में मूक होने की कोई व्यवस्था नहीं है । हिंदी में 'हाफ' को 'हाफ', 'नॉलेज' को 'नॉलेज', 'साइकोलोजी' को 'साइकोलोजी', और 'नाइफ' को 'नाइफ' ही लिखा और पढ़ा जाता है । लेकिन अंग्रेजी में ऐसा नहीं है वहां 'Half' को 'हाफ' पढ़ा जाता है, जिसमें 'L' मूक रहता है । 'Knowledge' को 'नॉलेज' पढ़ा जाता है जिसमें 'K' और 'D' मूक रहते हैं । 'Psychology' को 'साइकोलोजी' पढ़ा जाता है जिसमें 'P' मूक रहता है । इसी तरह 'Knife' को नाइफ उच्चारण किया जाता है जिसमें 'K' मूक रहता है ।

26.3.5– शिरोरेखा की व्यवस्था

देवनागरी लिपि में ऊपर की ओर शिरोरेखा लगाने की व्यवस्था है । शिरोरेखा की व्यवस्था के कारण इसका प्रत्येक एकल शब्द भी सार्थक और शुद्ध माना जाता है । एकल शब्द भी प्रयोग के उपरान्त अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति देता है । शिरोरेखा के अभाव में एकल शब्द अर्थहीन हो जाएगा । अशोक कालीन ब्राह्मी लिपि में शिरोरेखा का प्रयोग नहीं होता था । देवनागरी में हर अक्षर शिरोरेखा से युक्त है जो उसे अपनी एक अलग पहचान दिलाता है ।

26.3.6– कम स्थान घेरने वाली

देवनागरी लिपि में व्यंजन संयोग की व्यवस्था के कारण लेखन में बहुत कम स्थान घेरती है । ऐसा होने से लेखन में स्थान बचता है । जबकि अन्य लिपियों में ऐसा नहीं है । अंग्रेजी के शब्दों में यह व्यवस्था न होने से वह अधिक स्थान घेरते हैं । जैसे–

धर्म– Dharma,

कर्म– Karma

क्षत्रिय– Kshaktriya

26.3.7– उच्चारण में सरल और सुगम

देवनागरी के वर्ण उच्चारण में सरल, सुगम और बोधगम्य हैं द्य उर्दू में 'क' को 'काफ', 'च' को 'चे', 'ल' को 'लाम' पढ़ा और कहा जाता है उसी तरह अंग्रेजी में भी 'H' को 'एच', 'I' को 'आई' 'S' को 'एस' कहते हैं । इस प्रकार के उच्चारण सीखने वाले को भ्रमित करते हैं । देवनागरी लिपि के वर्ण और उनका उच्चारण इस दृष्टि से भ्रमित नहीं करते हैं ।

26.3.8– लेखन और उच्चारण में एकरूपता

देवनागरी लिपि के अक्षरों को लिखने और उच्चारण करने में भिन्नता नहीं है जैसा कि अन्य लिपियों में है । रोमन में 'उ' के लिए 'U' भी प्रयुक्त होता है और द्वित्त 'ओ' ('OO') भी । जैसे 'पुट' के लिए 'PUT' और 'फुट' के लिए 'FOOT' प्रयुक्त होता है जो बहुत भ्रम उत्पन्न करता है । इसी प्रकार एक ही अक्षर कई ध्वनियों को व्यक्त करता है । जैसे 'U' का उच्चारण कहीं–कहीं 'अ' होता है तो कहीं पर 'उ' भी होता है जैसे 'PUT, 'BUT। जबकि देवनागरी में ऐसी भ्रामकता नहीं है । इसमें लेखन और उच्चारण की एकरूपता है ।

26.3.9– बनावट में आकर्षक, सुन्दर और कलात्मक

देवनागरी के अक्षर अपनी बनावट में सुन्दर और आकर्षक हैं। चूँकि लिखावट में इसके अक्षर वक्र हैं इसलिए दिखने में भी सुन्दर और कलात्मक लगती है ।

कलाविदो का मानना है कि सीधी रेखा की अपेक्षा वक्र रेखा अधिक सुंदर और आकर्षक होती है ।

26.3.10– व्यापकता

देवनागरी लिपि का प्रयोग हिंदी के साथ ही संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, मराठी, नेपाली आदि को लिखने में भी होता है ।

26.3.11– स्वदेशी लिपि

देवनागरी एक स्वदेशी लिपि है जबकि उर्दू और रोमन विदेशी लिपियाँ हैं ।

26.4–देवनागरी लिपि के दोष–

कोई भी लिपि दोष रहित नहीं होती है । समय परिवर्तन के साथ उसके स्वरूप में विकार आ जाना स्वाभाविक है । यद्यपि देवनागरी लिपि पूर्णतः वैज्ञानिक एवं मानकीकृत लिपि है किन्तु उसकी अपनी कुछ सीमाएं हैं–

26.4.1– वर्णमाला की समस्या–

देवनागरी लिपि में स्वर और व्यंजन सब मिला कर अक्षरों की संख्या बहुत अधिक है। भाषा वैज्ञानिकों की द्रष्टि में इसकी लम्बी वर्णमाला को इसके दोष के रूप में देखा जाता है। देवनागरी लिपि की वर्णमाला समझने और याद रखने में जटिल है। इसकी अपेक्षा रोमन लिपि अत्यंत संक्षिप्त है और इस कारण लिखने, याद करने और सीखने में अधिक सुविधाजनक मानी जाती है ।

26.4.2– टंकण और मुद्रण में कठिनाई–

मुद्रण जटिल है क्योंकि वर्णों, मात्राओं और संयुक्ताक्षरों को मिला कर लगभग 403 टाइप रखने पड़ते हैं । देवनागरी लिपि में संयुक्ताक्षर और द्वित्वीकरण की व्यवस्था है । यह व्यवस्था सीखने और समझने में तो कठिनाई उत्पन्न करती है साथ ही टंकण और मुद्रण में भी जटिलता होती है। रोमन की अपेक्षा यह टंकण में अधिक कठिन है ।

26.4.3– मात्राओं की समस्या–

देवनागरी का सबसे बड़ा दोष इसकी मात्रा व्यवस्था को माना जाता है क्योंकि इसकी मात्राएँ आगे, पीछे, ऊपर नीचे सब तरफ से लगानी पड़ती है । इसकी कोई निश्चित व्यवस्था या पद्धति न होने से टंकण और मुद्रण में तो असुविधा होती ही है साथ ही देवनागरी लिपि सीखने वालों के लिए यह जटिल है।

26.4.4– शिरोरेखा की समस्या–

शिरोरेखा के कारण शब्द लिखते समय बार–बार कलम को ऊपर–नीचे और आगे–पीछे करना पड़ता है जिससे लिखने में बाधा उत्पन्न होती है । इससे समय की भी बर्बादी होती है । अतः शिरोरेखा को देवनागरी के दोष के रूप में देखा जाता है ।

26.4.5– संयुक्ताक्षर की समस्या–

देवनागरी की संयुक्ताक्षर व्यवस्था को भ्रामक माना जाता है क्योंकि ये वर्ण लिखने में भ्रम उत्पन्न करते हैं । जब द्वित्तीकरण द्वारा शब्दों को लिखा जा सकता है तब संयुक्ताक्षर की बहुत आवश्यकता नहीं रह जाती है ।

26.4.6– एकरूपता की समस्या

किसी भी लिपि की एक बड़ी विशेषता उसकी एकरूपता होती है। देवनागरी में एकरूपता की समस्या है । अनुस्वार और अनुनासिक के प्रयोग को लेकर बराबर भ्रम की स्थिति बनी रहती है । अनुस्वार कई प्रकार से प्रयुक्त होते हैं– पम्प–पंप, गंदा–गन्दा, संबंध–सम्बन्ध, कंचन–कन्चन, गंभीर–गम्भीर आदि अनेक ऐसे शब्द हैं जो बहुत भ्रमित करते हैं कि इनमें कौन सा शुद्ध है और कौन सा अशुद्ध है । इसी प्रकार हलन्त के प्रयोग को लेकर भी भ्रम बना रहता है । जगत, महत आदि जैसे अनेक शब्द ऐसे हैं जिनमें कुछ तो हलन्त का प्रयोग करते हैं और कुछ हलन्त नहीं लगाते हैं ।

26.4.7– वर्णों के बनावट की समस्या–

देवनागरी लिपि के वर्णों की बनावट को जटिल माना जाता है इस कारण इसके अक्षरों को लिखना, सीखना और सिखाना बहुत ही कठिन और परिश्रम वाला कहा जाता है । इसके कुछ वर्णों की बनावट एक जैसी है म–भ, व–ब, र–श–ख, ध–घ आदि बहुत ही भ्रम उत्पन्न करते हैं ।

इसके अतिरिक्त ऐसा भी माना जाता है कि देवनागरी में कुछ वर्ण अनावश्यक रूप से वर्णमाला में स्थान घेरे हुए हैं । ये वह वर्ण हैं जो अब बहुत कम प्रयोग में लाये जाते हैं । जैसे ऋ, ष, लृ आदि । अब बहुत स्थानों पर ऋ के स्थान पर रि, ष के स्थान पर श का प्रयोग किया जाता है । अतः ये वर्ण वर्णमाला में अतिरिक्त हैं । देवनागरी के कुछ अंकों को लेकर भी भ्रम बना रहता है । ९ 9 के लिए दो अलग अलग संकेत मिलते हैं 3, 6, 8, 9 (३ ६ ८ ९) की पहचान में समानता है जो भ्रम उत्पन्न करती है। देवनागरी में ई की मात्र तो वर्ण से पहले लग जाती है लेकिन इसका उच्चारण बाद में होता है ।

26.5–सारांश

इस इकाई में आपको देवनागरी लिपि की विशेषताओं के बारे में विस्तार बताया गया । देवनागरी लिपि को एक वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है इसका कारण यह है कि उसकी वर्णमाला में वर्णों के क्रमों की व्यवस्था, मात्रा की व्यवस्था, उच्चारण आदि दृष्टियों से इसे बहुत व्यवस्थित लिपि माना जाता है । देवनागरी अपनी कुछ विशिष्टताओं के कारण ही देश की संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त लिपि बनी है। यह एक स्वदेशी लिपि है जो अपने देश की जातीय जीवन और संस्कृति से बहुत करीबी सम्बन्ध रखती है । वह पूरे देश में प्रचलित है और अपने देश की जनता के साथ उसका भावात्मक रूप से जुड़ाव भी है । इसकी कुछ विशेषताएं इसे अन्य सभी लिपियों से श्रेष्ठ सिद्ध करती हैं लेकिन साथ ही इसकी अपनी कुछ सीमाएं भी हैं । इस इकाई में आपको देवनागरी लिपि के गुणों के साथ ही उसके दोषों से भी परिचित कराया गया । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से आप देवनागरी लिपि के गुणों और दोषों से परिचित होने के साथ ही उसका सतत मूल्यांकन कर सकेंगें ।

26.6–शब्दावली

निर्दोष– दोष रहित

ग्राह्य– ग्रहण करने योग्य

वक्र– टेढ़ा / तिरछा

पद्दति– प्रणाली / रिवाज / परिपाटी / ढंग

कलाविद– कला का ज्ञाता

सम्यक– पूरी तरह से, उचित प्रकार से, भली–भांति

26.7–सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भोलानाथ तिवारी– हिंदी भाषा
2. हरदेव बाहरी– हिंदी भाषा

26.8–अभ्यास प्रश्न

26.8.1– बहुविकल्पीय प्रश्न

1– देवनागरी लिपि की लिखवाट है–

1. बायें से दायें की ओर
2. दायें से बायें की ओर
3. ऊपर से नीचे की ओर
4. नीचे से ऊपर की ओर

सही उत्तर– बायें से दायें की ओर

2– निम्न में से 'अन्तस्थ' किसे कहते हैं–

1. त थ द ध न (दन्त्य)
2. प फ ब भ म (ओष्ठ्य)
3. श ष स ह

4. क्ष त्र ज्ञ श्र

सही उत्तर– क्ष त्र ज्ञ श्र

3– देवनागरी लिपि की विशेषता नहीं है–

1. शिरोरेखा की व्यवस्था
2. एक ध्वनि के लिए एक वर्ण की व्यवस्था
3. वर्णमाला के क्रम में वैज्ञानिकता
4. एक ध्वनि के लिए एक वर्ण की व्यवस्था

सही उत्तर– एक ध्वनि के लिए एक वर्ण की व्यवस्था

4– खण्ड क और खण्ड ख को सुमेलित कीजिए व सही उत्तर का चयन कीजिए–

खण्ड क	खण्ड ख
1. क ख ग घ ङ	क. दन्त्य
2. च छ ज झ ञ	ख. मूर्धन्य
3. ट ठ ड ढ ण	ग. तालव्य
4. त थ द ध न	घ. कंठ

1. 1–घ, 2–ग, 3–ख 4–क
2. 1–क, 2–ख, 3–ग, 4–घ
3. 1–ख, 2–क, 3–घ, 4–ग
4. 1–ग, 2–घ, 3–क, 4–ख

सही उत्तर– 1–घ, 2–ग, 3–ख 4–क

26.8.2– लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. देवनागरी लिपि की वर्णमाला के बारे में बताइये ।
2. देवनागरी लिपि में मात्रा व्यवस्था की क्या समस्याएं हैं ?

3. संयुक्ताक्षर किसे कहते हैं ?
4. अनुस्वार और अनुनासिक से आप क्या समझते हैं ?
5. 'लेखन व उच्चारण में एकरूपता' से आप क्या समझते हैं ?
6. देवनागरी लिपि को टंकण आर मुद्रण में कठिन क्यों कहा जाता है ?

26.8.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. देवनागरी लिपि से आप क्या समझते हैं ? इसकी विशेषताओं का विस्तार से उल्लेख कीजिये ।
2. देवनागरी लिपि के गुणों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये ।
3. देवनागरी लिपि के दोषों पर प्रकाश डालिए ।
4. देवनागरी लिपि का गुणों और दोषों के आधार पर मूल्यांकन कीजिये ।

इकाई–27 हिंदी भाषा का मानकीकरण और देवनागरी लिपि

इकाई की रूपरेखा

27.0 प्रस्तावना

27.1 उद्देश्य

27.2 मानक भाषा से तात्पर्य

27.3 भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता

27.4 मानकीकरण की प्रक्रिया

27.5 मानक लिपि की विशेषताएं

27.6 देवनागरी लिपि की मानकीकरण के प्रयास

27.7 देवनागरी लिपि के मानकीकरण के सुझाव

27.7.1– ध्वनि और उनके संकेतों के लिए सुझाव

27.7.2– अनुस्वार और अनुनासिक के लिए सुझाव

27.7.3– संयुक्त व्यंजन के लिए सुझाव

27.8 सारांश

27.9 शब्दावली

27.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

27.11

27.0– प्रस्तावना–

किसी भी समाज में प्रारम्भिक स्तर पर भाषा का कोई निश्चित आकार या स्वरूप नहीं होता है । हर भाषा अपने प्रारम्भिक रूप में एक बोली मात्र होती है और साधारण आम जन द्वारा प्रयुक्त होती है । साधारण बोलचाल की भाषा बहुत ही सहज, सरल और स्वच्छन्द होती है जबकि लिखत–पढ़त की भाषा में व्याकरण सम्मत नियम लागू हो जाते हैं । भाषा श्रव्य होती है, वह लिपि के माध्यम से द्रश्य

रूप में आती है । यदि लिपि की व्यवस्था न होती तो भाषा का स्वरुप स्थिर होना संभव नहीं था । साधारण बोलचाल की भाषा का स्वरूप अलग होता है उसमें उच्चारण, व्याकरण और वाक्य विन्यास में शिथिलता और विविधता रहती है । वह अन्य स्वरूपों से अधिक स्वतन्त्र रूप है । ऐसा माना जाता है कि जैसे–जैसे भाषा लिखित रूप में आती है वैसे–वैसे उसका स्वरूप परिवर्तित होने लगता है । किसी भी भाषा के लिए उसका एक निश्चित और नियमबद्ध स्वरूप होना अत्यंत आवश्यक है । जिसके द्वारा लिखने–पढ़ने का कार्य व्यवहार सहज और सुचारू रूप से आगे बढ़ सके । इसलिए भाषा का मानकीकरण होना आवश्यक है । मानक भाषा को वृहत स्तर पर सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है । मानकीकरण के द्वारा प्रत्येक क्षेत्र की भाषा का अपना अलग स्वरूप निश्चित हो जाता है, जैसे व्यापार और वाणिज्य की भाषा, चिकित्सा क्षेत्र की भाषा, क़ानून की भाषा, धर्म की भाषा, साहित्य की भाषा आदि । आज हिंदी का जो मानक रूप दिखाई देता है वह एक लम्बी विकास–प्रक्रिया का परिणाम है ।

27.1– उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को मानकीकरण के बारे में विस्तृत जाकारी देते हुए देवनागरी लिपि के मानकीकरण के बारे में बताना है । छात्र अपनी भाषा और लिपि के बारे में परिचित हैं और उसका उचित मूल्यांकन करने में सक्षम हैं । इसलिए उन्हें भाषा और लिपि के 'मानक' रूप से परिचित कराना आवश्यक है । इस इकाई में मानकीकरण की प्रक्रिया पर चर्चा करने के साथ ही उसकी आवश्यकताओं और समस्याओं के बारे में भी बताया जाएगा । इसके अतिरिक्त देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए अब तक क्या प्रयास किये गए हैं और देवनागरी लिपि का मानकीकरण करने के लिए दिए गये सुझावों की चर्चा भी इस इकाई में विस्तार से की गयी है । इस इकाई के अध्ययन से छात्र निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- मानकीकरण से तात्पर्य
- भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता

- भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया
- मानक लिपि की विशेषताएं
- देवनागरी लिपि के मानकीकरण के प्रयास
- देवनागरी लिपि के मानकीकरण के सुझाव

27.2– मानक भाषा से तात्पर्य

मानक से तात्पर्य है– परिनिष्ठित । डॉ0 हरदेव बाहरी मानते हैं कि 'शिक्षित वर्ग द्वारा और शिक्षित वर्ग के लिए भाषा का जो सामान्यीकृत आदर्श होता है उसे भाषा का मानक रूप कहते हैं, जिसका स्वरूप शिक्षा, संचार माध्यमों और सरकारी कामकाज में प्रतिष्ठित होता है । मानक भाषा को व्यापक रूप से सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है ।' इसके साथ ही वह यह भी मानते हैं कि 'भाषा का लिखित रूप व्याकरण के नियमों में बंधकर स्थिर होता जाता है । उसके मानकीकरण या परिनिष्ठित करने का अर्थ है एकरूपता लाना । इससे भाषा को आदर्श रूप प्राप्त होता है । वास्तव में व्यापकता के साथ परिनिष्ठतता आती ही है और परिनिष्ठतता से भाषा के व्यापक होने में सहायता मिलती है । विभिन्नता में अराजकता और संदिग्धता होती है– भाषा की संप्रेषणीयता में बाधा पड़ती है ।' किसी भी भाषा के मानकीकरण का अर्थ है उसकी बोली का विकसित होकर एक 'परिनिष्ठित' और 'परिमार्जित' स्वरूप ले लेना । इस प्रकार जब किसी भाषा में आवश्यक संशोधन और परिवर्तन के द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में कार्य–व्यवहार के उपयुक्त बनाने का प्रयास किया जाता है तो उसे ही भाषा का मानकीकरण कहते हैं । इस प्रकार **'भाषा का बोलचाल के स्तर से ऊपर उठकर, मानक रूप ग्रहण कर लेना ही उसका मानकीकरण है ।'**

27.3– भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता–

किसी लिपि का मानकीकरण तत्काल नहीं होता क्योंकि यह एक लम्बी चलने वाली प्रक्रिया है । मानकीकरण में लिपि की वर्तनी, शब्दावली, व्याकरण, वाक्य योजना, उच्चारण, वर्णाकृति के साथ ही उसकी कलात्मकता, सुन्दरता और व्यापकता को भी ध्यान में रखा जाता है । यदि किस भाषा में एकरूपता नहीं है

और उसकी ध्वनियों और उच्चारण में परस्पर विरोधाभास हो तो इसे अशुद्ध माना जाता है क्योंकि उस स्थिति में वह सीखने और सिखाने वाले को भ्रमित करती है। किसी भाषा का मानकीकरण हो जाने पर उस भाषा में यह दोष नहीं मिलता है और भाषा का निश्चित स्वरूप स्थिर हो जाता है।

हिंदी का प्रयोग क्षेत्र व्यापक है । उसमें शब्द और उसके अर्थों में भिन्नता पाई जाती है । एक शब्द के स्थान पर अनेक शब्दों का या एक शब्द के अनेक अर्थ होना कभी कभी भ्रम उत्पन्न करता है इससे मुख्य अर्थ तक पहुँचने में बाधा उत्पन्न होती है । बैंक की भाषा, कचहरी की भाषा, पुलिस, न्याय, कानून आदि ऐसे क्षेत्र हैं जहां यह भिन्नता बहुत बड़े दोष के रूप में देखी जाती है । इस कारण भाषा का मानकीकरण अत्यंत आवश्यक है । डॉ0 हरदेव बाहरी नें अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा' में लिखा है– 'जिसे हम शुद्ध हिंदी कहते हैं वह वास्तव में मानक हिंदी ही है । शुद्ध हिंदी बोलना व्यक्ति को प्रतिष्ठा दिलाता है । ऐसे व्यक्ति को लोग सुसंस्कृत कहते हैं । शिक्षित और अशिक्षित मनुष्य में यही अंतर होता है कि शिक्षित व्यक्ति की भाषा में बोलीपन छंटकर एक सुष्ठु संस्कार पाया जाता है । अमानक भाषा स्तर भेद और जाति भेद पैदा करती है। मानक भाषा राष्ट्र निर्माण में सहायक होती है क्योंकि भाषा की एकता विचारों और भावों की एकता में सहायक होती है द्य मानक भाषा का प्रचार आसानी से हो सकता है क्योंकि ऐसी भाषा सहज और सरल हो जाती है'।

27.4– भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया–

भाषा का प्रारम्भिक रूप बोली है । यही बोली उत्तरोत्तर विकास करती हई भाषा का रूप धारण कर लेती है । यही भाषा प्रयोग क्षेत्र के आधार पर मानकीकृत हो जाती है । विद्वानों द्वारा ऐसा मना गया है कि– 'भाषा के मानकीकरण का अभिप्राय है उसका बोली रूप से क्रमशः विकसित होकर ऐसी परिनिष्ठित भाषा का रूप धारण के लेना जो धर्म, शिक्षा, साहित्य एवं प्रशासनिक कार्य–कलाप में सर्वमान्य माध्यम बन सके । भाषा का बोलचाल के स्तर से ऊपर उठकर, मानक रूप ग्रहण कर लेना ही उसका मानकीकरण है । इस प्रक्रिया के तीन सोपान हैं–

- पहले स्तर पर भाषा का मूल रूप एक सीमित क्षेत्र में आपसी बोलचाल के रूप में प्रयुक्त होने वाली 'बोली' का होता है जिसे स्थानीय, आंचलिक अथवा क्षेत्रीय बोली कहा जा सकता है । इसका शब्द–भंडार सीमित होता है । इसका अपना नियमित व्याकरण या भाषा शास्त्र नहीं होता । इसे शिक्षा, आधिकारिक कार्य–व्यवहार अथवा साहित्य का माध्यम नहीं बनाया जा सकता ।
- किसी भाषा के मानकीकरण का दूसरा सोपान बोली के भाषा बनने की प्रक्रिया के बीच आता है । जब स्थानीय, आंचलिक अथवा क्षेत्रीय बोली कुछ विशेष भौगोलिक, सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनीतिक और प्रशासनिक कारणों से अपना क्षेत्र विस्तार कर लेती है तब उसका लिखित रूप विकसित होने लगता है और वह व्याकरणिक साँचे में ढलने लगती है । उसके प्रयोक्ता उसे पत्राचार का माध्यम बना लेते हैं । शिक्षा, व्यवसाय और प्रशासन में उसका प्रयोग होने लगता है, उसका अपना साहित्य रचा जाता है । इस प्रकार वह बोली एक भाषा का रूप धारण कर लेती है ।
- तीसरे चरण भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है । जब भाषा का प्रयोग क्षेत्र बहुत अधिक विस्तृत हो जाता है तब वह एक आदर्श रूप धारण कर लेती है । यह रूप बोली से बहुत अलग होता है । इस स्तर पर आकर बोली एक परिनिष्ठित रूप में आ जाती है और क्षेत्र के अनुसार उसकी अपनी व्यापारिक, साहित्यिक, तकनीकी, कानूनी, शैक्षणिक, व्यावहारिक अपनी शब्दावली होती है । विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और प्रशासनिक क्षेत्रों के साथ ही व्याकरण, भूगोल, इतिहास, गणित, कला आदि की पुस्तकों साहिय, कला, संगीत और संचार साधनों के स्तर पर उसका एक सर्वमान्य सा रूप स्थिर हो जाता है । इस स्थिति में पहुँचकर भाषा मानक भाषा बन जाती है ।

बोली से मानक भाषा तक पहुँचने की इस विकास यात्रा को ही भाषा का मानकीकरण कहते हैं । इस स्तर तक पहुंचकर भाषा अपना एक निश्चित स्वरूप और आकार ले लेती है । इसे ही 'परिनिष्ठित', 'परिमार्जित', 'परिष्कृत', 'शुद्ध', 'उच्चस्तरीय' आदि नामों से भी जाना जाता है ।

27.5– मानक लिपि की विशेषताएं

सभी जगह एक ही लिपि प्रचलित हो ऐसा होना कठिन हैं । जिस देश में एक से अधिक लिपियाँ प्रचलित हों वहां किसी एक विशेष लिपि को मानकीकृत किये जाने के लिए उसमें कुछ विशिष्टताओं का होना आवश्यक है। विख्यात भाषावैज्ञानिक डॉ0 उदय नारायण तिवारी ने अपनी पुस्तक 'पाणिनि के उत्तराधिकारी' नामक पुस्तक और विद्वान चितले ने अपनी पुस्तक 'देवनागरी लिपि : स्वरूप–विकास और समस्याएँ' में किसी भी आदर्श अथवा मानक लिपि का मानकीकरण करने के लिए ये आधार बताये हैं–

1. एक ध्वनि को व्यक्त करने के लिए एक ही चिह्न हो ।
2. एक चिह्न केवल एक ध्वनि का बोध कराता हो ।
3. लिपि के मात्रा बोधक और वर्ण बोधक चिह्न इतने भिन्न होने चाहिए कि उन दोनों में किसी प्रकार का कोई भ्रम होने की संभावना न हो ।
4. लिपि के सभी चिह्न सुंदर और कलात्मक होने चाहिए ।
5. उनमें लेखन, टंकण और मुद्रण आदि द्वारा सरलता से प्रयुक्त किये जाने में सरलता हो ।
6. लिपि अपने देश के जनसमुदाय द्वारा जानी पहचानी हो ।
7. देश में प्रयुक्त हो रहीं अन्य लिपियों से भी उसका गहरा सम्बन्ध हो ।
8. देश में प्रतिष्ठित व सर्वमान्य होने के साथ ही जन समुदाय द्वारा भावत्मक रूप से जुड़ाव भी हो ।

उपरोक्त विशेषताओं की कसौटी पर देवनागरी एकदम खरी उतरती है । वह देश की सबसे प्रचलित और सर्वमान्य लिपि होने के साथ ही देश के जनमानस से भावात्मक सम्बन्ध भी रखती है । देवनागरी लिपि में एक ध्वनि को वयक्त करने के

लिए एक ही चिह्न है और उसके एक चिह्न एक ही ध्वनि का बोध कराता है । उसकी वर्णमाला में मात्राओं और वर्णों की व्यवस्था इस प्रकार है कि भ्रम उत्पन्न नही होता है । अपनी वक्र आकृति के कारण वह सुन्दर, कलात्मक और आकर्षक भी दिखाई देती है । भले ही उसे टंकण और मुद्रण में की द्रष्टि से जटिल माना जाता है लेकिन वर्तमान समय में प्रद्यौगिकी और नई तकनीकी के आ जाने से यह समस्या भी हल हो गयी है ।

27.6– देवनागरी लिपि के मानकीकरण के प्रयास–

'भाषा के मानकीकरण का प्रश्न सबसे पहले सन 1950 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग ने उठाया । डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा की अध्यक्षता में एक समीति गठित की गयी जिसमें डॉ0 व्रजेश्वर वर्मा– 'हिंदी व्याकरण', डॉ0 हरदेव बाहरी– 'वर्ण विन्यास की समस्या', डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा– 'देवनागरी लिपि–चिह्नों में एकरूपता', डॉ0 माता प्रसाद गुप्त– 'हिंदी शब्द भंडार का स्थिरीकरण' विषय पर तैयार किये गए प्रतिवेदनों पर विचार विमर्श हुआ ।' इस विस्तृत रिपोर्ट में विस्तार से देवनागरी की समस्याओं पर चर्चा की गयी ।

देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए व्यक्तिगत और संस्थागत दोनों ही स्तर से प्रयास किये गए, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

- ऐसा माना जाता ही कि इस दिशा में सबसे पहला प्रयास बाल गंगाधर तिलक ने किया । वह एक पत्र निकालते थे केसरी । केसरी के लिए उन्होंने एक फॉन्ट तैयार किया जो 'तिलक फॉन्ट' के रूप में विख्यात हुआ। इस फॉण्ट में गैरज़रूरी संकेतों को काट–छाँट कर हटा दिया गया तह और पूरी देवनागरी के लिए 190 टाइप के फॉन्ट की व्यवस्था की थी ।

- इसी के साथ जस्टिस शारदाचरण मित्र का नाम आता है । उन्होंने 'लिपि विस्तार परिषद' का निर्माण किया जिसका उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं के लिए एक लिपि का निर्माण करना था । देवनागरी में वह ऐसे

सुधार करना चाहते थे जिससे अन्य भारतीय भाषाओं के सार संकेत भी इसी लिपि में समाहित हो जाए ।

- सावरकर बंधुओं नें भी इस दिशा में विशेष भूमिका निभायी । उन्होंने स्वरों के लिए 'अ' की बारहखड़ी तैयार की । इसमें सारे स्वरों को 'अ' से ही मात्रा जोड़कर लिखा जाता था, जैसे– अि, अी, अे, अै, अु, अू आदि । उनके द्वारा किया गया यह प्रयोग महाराष्ट्र में बहुत प्रचलित हुआ । इससे प्रभावित होकर महात्मा गांधी ने भी अपने पत्र 'हरिजन सेवक' में इस शैली का प्रयोग किया ।

- डॉ0 गोरखनाथ ने सुझाव दिया कि मात्राओं के वर्णों के ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ होने से समस्या पैदा होती है । इसके निराकरण के लिए मात्राओं को वर्णों के बाद अलग से दाहिनी ओर लिख देना चाहिए । जैसे 'रीता' के लिए र ी त ा, 'राजा' के लिए र ा ज ा ।

- श्रीनिवास नें सुझाव दिया कि सारे महाप्राण व्यंजनों को हटा दिया जाए तथा अल्पप्राण व्यंजनों के नीचे 'S' का संकेत करके ही महाप्राण व्यंजनों को व्यक्त कर दिया जाए ।

- डॉ0 श्याम सुंदर दास ने अनुस्वार के प्रयोग में सुझाव देते हुए कहा कि 'ङ' और 'ञ' के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाना चाहिए। ऐसा प्रयोग करने से उच्चारण पर प्रभाव भी नहीं पड़ेगा और लिपि भी सरल हो जायेगी । जैसे– गङ्गा के स्थान पर गंगा आदि ।

इस क्षेत्र में संस्थागत स्तर पर सबसे पहले 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' द्वारा 1935 में किया गया । इस समय सम्मेलन के सभापति महात्मा गांधी थे । काका कालेलकर के सभापतित्व में 'नागरी लिपि सुधार समिति' बनायी गयी । इस समिति ने देवनागरी लिपि के सुधार के लिए कुछ सिफारिशें की । जैसे– सावरकर बंधुओं दवारा बतायी गयी बारहखड़ी को स्वीकार कर लिया जाए, व्यंजन के संयोग को

ऊपर और नीचे न दर्शा कर साथ में लिखा जाए, शिरोरेखा मुद्रण में प्रयुक्त होती रहे लिन्तु लेखन में इसका प्रयोग न किया जाए । 1945 में काशी नागरी प्रचारिणी द्वारा 'नागरी लिपि सुधार उपसमिति' का गठन किया गया ।

1947 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी । इसमें धीरेन्द्र वर्मा, मंगलदेव शास्त्री आदि सदस्य थे । इस समिति ने इस दिशा में हुए अब तक के सभी सुझावों का विश्लेषण करने के बाद अपनी संस्तुतियां दीं । उन्होंने कहा कि–

- 'अ' की बारहखड़ी का प्रयोग सही नहीं है ।
- शिरोरेखा का प्रयोग किया जाए ।
- पंचम अक्षर (ड, ञ, ण, न, म) के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाए ।
- मात्राएँ यथास्थान ऊपर ही लगाई जाए लेकिन उन्हें व्यंजन से अलग हटाकर लिखा जाए ।

1949 में काका कालेलकर की अध्यक्षता में बम्बई सरकार ने मराठी तथा गुजराती लिपियों में सुधार के लिए एक लिपि सुधार समीति बनाई थी ।

1953 में हिंदी भाषा–भाषी प्रदेशों के शिक्षामित्रों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया । इस सम्मेलन में पूर्व समितियों की शिफारिशों पर विचार करने के साथ ही अपनी ओर से दो और नए सुझाव दिए कि 'इ' की मात्रा छोटी पाई के रूप में दाहिनी ओर लिखी जाए और 'रव' को 'ख' के रूप में लिखा जाए जिससे भ्रम न उत्पन्न हो ।1955 में भारत सरकार द्वारा इन सुझावों को मान्यता प्रदान कर दी गयी । राजकीय काम–काज में लिपि के इन्हीं नियमों को स्वीकार किया जाता है ।

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अंतर्गत हिदी के प्रचार–प्रसार के लिए स्थापित 'केन्द्रीय हिंदी निदेशालय' ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रयास किये । 1966 में 'मानक देवनागरी वर्णमाला' प्रकाशित की गयी । 1967 में परिवर्धित देवनागरी

नामक प्रकाशन में हिंदी वर्णमाला और वर्तनी को अंतिम रूप प्रदान किया गया । इसी मंत्रालय की ओर से 1967 में 'हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' का प्रकाशन किया गया । '1980 में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय ने संख्यावाचक शब्दों के स्तरीकरण की ओर भी ध्यान किया । निदेशालय ने एक सूची प्रकाशित की जिसमें एक से सौ तक संख्यावाचक शब्दों को मानक रूप दिया गया था ।

27.7– देवनागरी लिपि के मानकीकरण के सुझाव–

देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए व्यक्तिगत और संस्थागत, दोनों ही स्तर पर प्रयास किये गए । 1966 में 'मानक देवनागरी वर्णमाला' का प्रकाशन हुआ । इसमें इस बात को प्रमुखता से उठाया गया कि देवनागरी के वर्ण एक से अधिक रूपों में लिखे जाने की प्रक्रिया में सुधार करते हुए उसके स्थान पर प्रत्येक वर्ण का एक ही मानक रूप निर्धारित कर दिया जाए । शिक्षा मंत्रालय द्वारा भाषाविदों की सहायता से वर्तनी की समस्या पर विचार किया गया । उसके उपरान्त 1967 में 'हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया गया। इसमें दिए गए सुधारों पर विस्तृत चर्चा हुयी । इसके बाद 1983 में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा 'देवनागरी लिपि तथा हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' का प्रकाशन किया गया। इसमें देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए गए–

27.7.1– ध्वनि और उनके संकेतों के लिए सुझाव–

- देवनागरी में बहुत सी ऐसी ध्वनियाँ हैं जिनका प्रयोग अब नहीं होता है । उन्हें हटा देना चाहिए द्य ऋ ऌ आदि,
- अर्धचन्द्र लगाना ठीक है अथवा कुछ शब्दों के उच्चारण में 'आ' और 'ओ' का भ्रम हो जाता था जैसे डॉक्टर, फॉर्म, ।
- कुछ ध्वनियाँ जो अंग्रेजी और फ़ारसी में प्रयुक्त होती हैं उन्हें हिंदी में भी स्वीकृत कर लेना चाहिए जैसे– ज़ फ़ द्य क्योंकि गज़ल, फ़ेल, ज़ीरो आदि का हिंदी में खुल के प्रयोग होता है ।

27.7.2– अनुस्वार और अनुनासिक के लिए सुझाव–

'जिस प्रकार अनुस्वार व्यंजन का गुण है उसी प्रकार अनुनासिक स्वर का गुण है ।' इनके प्रयोग के बिना भ्रम की सम्भावना बनी रहती है । 'अनुस्वार के प्रयोग के सम्बन्ध में ध्यान रखना चाहिए कि जहां व्यंजन संयोग अपने ही वर्ग के किसी व्यंजन के साथ हो रहा हो, वहां अनुस्वार का प्रयोग होना चाहिए जैसे– सम्बन्ध–संबंध । लेकिन जहां पंचमाक्षर का प्रयोग अपने वर्ग से अलग किसी और वर्ण के साथ हो रहा हो, वहाँ पंचमाक्षर ही होगा अनुस्वार नहीं जैसे अन्याय । इसी प्रकार जहां शिरोरेखा के ऊपर मात्रा आती हो वहां अनुस्वार लगाना चाहिए क्योंकि मात्रा के साथ चन्द्रबिंदु लगाने में कठिनाई होती है ।

27.7.3– संयुक्त व्यंजन के लिए सुझाव–

- व्यंजन संयोग की स्थिति में यदि खड़ी पाई वाला व्यंजन आधा हो तो पाई को हटा देना चाहिए । जैसे–

ख य	ख्य (व्याख्या)
ग ध	ग्ध (मुग्ध)
च छ	च्छ (अच्छा)

- देवनागरी के सभी संयुक्ताक्षरों को उसी रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए द्य क्ष, त्र, ज्ञ प्रचलन में हैं अतः इन्हें इसी प्रकार प्रयोग करना चाहिए ।
- यदि ट वर्ग के ट, ठ, ड ढ पहले व्यंजन के रूप में हो तो उन्हें हल चिह्न के साथ ही लिखा जाना चाहिए जैसे–

  मुट्ठी, गड्डी, लट्ठ, शिद्दत

- 'र' के लिए कुछ विशेष नियमों के सुझाव दिये गये जैसे–
  - यदि 'र' पहला व्यंजन हो तो उसके लिए रेफ का प्रयोग हो जैसे– अर्थ, धर्म, कर्म, शर्मा, आदि ।
  - यदि 'र' दूसरा व्यंजन हो तो इसके नियम बदल जाते हैं । यदि 'र' से पहले 'द' हो तो 'द्र' हो जाएगा जैसे 'भद्र' ।
  - यदि 'र' से पहले 'ट', 'ड', 'छ' तो 'र' उनके नीचे की ओर प्रयुक्त 'राष्ट्र, ड्रीम, ट्रक', 'ड्रम' ट्रेन।

- यदि प्रयोग होने वाला पहला व्यंजन खड़ी पाई वाला हो तो 'र' उस खड़ी पाई में ही लग जाएगा जैसे, अग्रज, भ्राता, प्रेम आदि ।

इसके साथ ही द्वित्तीकरण, विराम चिह्न, शिरोरेखा के साथ ही वर्तनी से सम्बन्धित अन्य और भी महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए ।

27.8– सारांश

इस इकाई में भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया पर विस्तार से बात की गयी है । किसी भी भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया क्या है ? किसी भी मानक लिपि की क्या विशेषताएं होती है ? देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए अब तक क्या प्रयास किये गए ? देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए क्या बेहतर सुझाव दिए जा सकते हैं ? छात्रों को इन सभी प्रश्नों का सहज और सरल उत्तर इस इकाई के अध्ययन से प्राप्त हो सकता है । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से छात्र मानकीकरण का अर्थ समझने के साथ ही भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे । साथ ही वह मानकीकरण की प्रक्रिया को समझ कर आदर्श और मानक लिपि की विशेषताओं के बारे में भली प्रकार से समझ विकसित कर सकेंगे । मानकीकरण की प्रक्रिया जानने के बाद, देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए अब तक किये गए प्रयासों की और सुझावों की जानकारी भी उन्हें इस इकाई के द्वारा प्राप्त हो सकेगी।

27.9– शब्दावली

स्वच्छन्द– अपनी इच्छानुकूल आचरण करने वाला

सोपान– सीढ़ी / जीना

आंचलिक– किसी क्षेत्र या प्रांत से सम्बन्धित / अंचल का

टंकण– टाइप करना

मुद्रण– छपाई / छापना

प्रौद्यौगिकी– प्राविधिकी

विश्लेषण– जाँच करना / छानबीन करना / अलग करना

संस्तुति– सिफारिश

27.8– सन्दर्भ ग्रन्थ–

हिंदी भाषा– हरदेव बाहरी

हिंदी भाषा– भोलानाथ तिवारी

भाषा विज्ञान– भोलानाथ तिवारी

27.9– प्रश्नावली–

27.9.1– बहुविकल्पीय प्रश्न–

1. मानक शब्द से क्या तात्पर्य है ?
    1. उत्कृष्ट
    2. निकृष्ट
    3. क्लिष्ट
    4. परिनिष्ठ

    सही उत्तर– 4. परिनिष्ठ
2. बालगंगाधर तिलक ने कौन सा पत्र निकाला ?
    1. स्वदेशी
    2. केसरी
    3. यंग इण्डिया
    4. प्रताप

    सही उत्तर– 2. केसरी
3. मानक लिपि की विशेषता नहीं है–
    1. देश के विशाल जन समुदाय द्वारा पहचान
    2. किसी भी अन्य लिपि से कोई सम्बन्ध न होना
    3. चिन्हों का कलात्मक और सुंदर होना
    4. एक ध्वनि के लिए एक ही चिह्न होना

सही उत्तर– 4. किसी भी अन्य लिपि से कोई सम्बन्ध न होना

4. काशी नागरी प्रचारिणी द्वारा 'नागरी लिपि सुधार उपसमिति' का गठन किस वर्ष किया गया ?

    1. 1945
    2. 1955
    3. 1965
    4. 1966

सही उत्तर– 1. 1945

5. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1947 में किसकी अध्यक्षता में समिति का गठन किया गया ।

    1. महात्मा गांधी
    2. बाल गंगाधर तिलक
    3. आचार्य नरेन्द्र देव
    4. गोखले

सही उत्तर– 3.आचार्य नरेन्द्र देव

6. 'देवनागरी लिपि तथा हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' का प्रकाशन किसके द्वारा किया गया ?

    1. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा
    2. केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा
    3. काशी नागरी प्रचारिणी द्वारा
    4. भारत सरकार द्वारा

सही उत्तर– 2. केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. मानकीकरण से क्या तात्पर्य है ?

2. मानक लिपि की विशेषताएं कौन सी हैं ?
3. भाषा के मानकीकरण की क्या आवश्यकता है ?
4. देवनागरी लिपि के मानकीकरण में वैयक्तिक प्रयास करने वाले विद्वान कौन–कौन थे ?
5. देवनागरी लिपि के मानकीकरण में किन संस्थाओं नें अपना योगदान दिया ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. मानकीकरण का क्या अर्थ है ? भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया के बारे में बताइये ।
2. भाषा के मानकीकरण की क्या आवश्यकता है ? मानक लिपि की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ।
3. देवनागरी लिपि के मानकीकरण की दिशा में किस तरह के प्रयासों किये गए हैं ?
4. मानकीकरण से आप क्या समझते हैं ? देवनागरी लिपि के मानकीकरण के लिए विस्तार से सुझाव दीजिये ।

इकाई– 28 राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में हिंदी

इकाई की रूपरेखा

28.0 प्रस्तावना

28.1 उद्देश्य

28.2 हिंदी के विविध रूप

28.3 राष्ट्रभाषा–

28.3.1– राष्ट्रभाषा से तात्पर्य

28.3.2– राष्ट्रभाषा की विशेषताएं–

28.3.2.1– बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयुक्त

28.3.2.2– व्यापकता

28.3.2.3– जन सामान्य द्वारा आपसी बोलचाल में प्रयुक्त

28.3.2.4– राष्ट्र की सांस्कृतिक और भाषिक विरासत की उत्तराधिकारी

28.3.2.5– साहित्य से सम्बद्धता

28.3.2.6– स्वभाव से लचीलापन

28.3.2.7– व्याकरण की दृष्टि से सरल,ग्राह और वैज्ञानिक

28.3.2.8– लिपि में वैज्ञानिकता

28.3.2.9– स्वदेशी भाषा

28.3.2.10– असीमित शब्द भंडार

28.3.3 राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी–

28.4 राजभाषा

28.4.1 राजभाषा से तात्पर्य

28.4.2 संवैधानिक स्थिति

28.4.3– राजभाषा हिंदी के प्रयोग की प्रगति और सम्बन्धित आयोग व समितियां–

28.4.3.1 राष्ट्रपति का आदेश–1955

28.4.3.2 राजभाषा आयोग

28.4.3.3 राजभाषा समिति–1959

28.4.3.4 राष्ट्रपति का आदेश–1960

28.4.3.5 राजभाषा अधिनियम– 1963

28.4.3.6 संकल्प–1968

28.4.3.7 राजभाषा अधिनियम–1976

28.5 संपर्क भाषा–

28.5.1 सम्पर्क भाषा से तात्पर्य

28.5.2 सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी

28.6 सारांश

28.7 शब्दावली

28.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

28.9 प्रश्नावली–

28.9.1 बहुविकल्पीय प्रश्न

28.9.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

28.9.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

28.0 प्रस्तावना–

हमारे देश में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा हिंदी ही है । यद्यपि हमारे देश में भाषा को लेकर हमेशा कुछ विवाद की स्थिति रही है । चूँकि हिंदी का प्रश्न देश की अस्मिता, एकता और अखंडता से जुड़ा हुआ है। केशव चन्द्र सेन ने 'भारतीय एकता कैसे हो' विषय पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि– 'उपाय यह है कि भारत में एक ही भाषा का व्यवहार हो । इस समय जितनी भाषाएं भारत में प्रचलित हैं उनमें हिंदी ही वह भाषा है जो सभी जगह प्रचलित है । इस हिंदी भाषा को अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बनाया जाए तो यह काम सहज ही और शीघ्र सम्पन्न हो सकता है।' किन्तु यह बहुत आसान नहीं रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से लेकर अब तक इस दिशा में कोई ठोस और निर्णयात्मक कार्यवाही होना संभव नहीं हो सका है । वर्तमान समय में हिन्दी प्रयोजनमूलक भाषा बन चुकी है। उसने बोलचाल से आगे बढ़कर साहित्य, सिनेमा, पत्रकारिता, मनोरंजन के साधन आदि माध्यम से देश विदेश में प्रचलित है। हिंदी पूरे देश में बहुसंख्यक वर्ग द्वारा जानी समझी और बोली जाने वाले भाषा है । वर्तमान समय में हिंदी न केवल राजभाषा है बल्कि राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा भी है। वर्तमान समय में हिंदी ज्ञान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय सत्र पर अपनी पहचान बना रही है।

28.1 उद्देश्य–

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को हिंदी के विविध रूपों से परिचित करना है । छात्र अपनी भाषा और लिपि से भली भांति परिचित हैं । इस इकाई के द्वारा उन्हें देश की राष्ट्रभाषा और उसकी विशेषताओं को जानने और समझने में सहायता मिलेगी साथ ही वह राजभाषा और सम्पर्क भाषा से भी परिचित हो सकेंगे । छात्रों के लिए अपनी भाषा के बारे में अधिक से अधिक जानना और समझना आवश्यक है । इस इकाई में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा पर विस्तार से चर्चा की गयी है । इस इकाई के अध्ययन से छात्र निम्नलिखित के बारे में जान सकेंगे–

- हिंदी के विविध रूप
- राष्ट्रभाषा से तात्पर्य

- राष्ट्रभाषा की विशेषताएं
- राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी
- राजभाषा का अर्थ
- हिंदी की संवैधानिक स्थिति
- सम्पर्क भाषा से तात्पर्य
- सम्पर्क भाषा की विशेषताएं

28.2 हिंदी के विविध रूप

हिंदी एक विशाल भू भाग पर बोली जाने वाली भाषा है । हिंदी मात्र एक भाषा नहीं है बल्कि वह कई बोलियों के समुच्चय से इस रूप में विकसित हुयी है। वर्तमान समय में जो हिंदी प्रयुक्त हो रही है वह संशोधित और मानकीकृत हिंदी है । यह राज्य के बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयुक्त होने वाली भाषा तो है ही साथ ही पूरे देश में सम्पर्क स्थापित करने वाली भाषा भी है । हिंदी ही सामान्य सम्प्रेषण की भाषा होने के साथ–साथ मुख्यधारा के साहित्य की भाषा है । जिस प्रकार हमारे अन्य राष्ट्रीय प्रतीक हैं उसी प्रकार हमारी एक राष्ट्रभाषा भी है, वह भी हिंदी ही है । देश की सांस्कृतिक और भाषिक विरासत को संजोने और सुरक्षित रखने में हिंदी की मुख्य भूमिका है । स्वतंत्रता संग्राम के लिए संघर्ष के समय हिंदी ने सभी को एकीकृत करने का सफल प्रयास किया । उस समय जी राष्ट्रीय गीत और राष्ट्रीयता से ओत प्रोत रचनाएं लिखी गयी उनमें हिंदी मुख्य थी । राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा, व्यापार, वाणिज्य आदि में स्वीकृत होने के कारण संविधान में हिंदी को ही राजभाषा कहा गया है । मुख्य तथ्य यह है कि हिंदी ही हमारे देश की एकमात्र स्वदेशी प्रयोजनमूलक भाषा है।

28.3 राष्ट्रभाषा–

हमारे देश के बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयोग किये जाने के कारण हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा कहलाती है।

28.3.1 राष्ट्रभाषा से तात्पर्य

किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उसे कहते हैं जिसमें उस देश के नागरिक आपसी कार्य–व्यवहार करते हैं, बोलते हैं, समझते हैं और आपसी पत्र–व्यवहार करते हैं । यह वह भाषा है जो पूरे राष्ट्र में बोली और समझी जा सकती है । इस भाषा से जन सामान्य का भावात्मक लगाव होता है क्योंकि यह भाषा उनके अधिक करीब होती है ।

28.3.2 राष्ट्रभाषा की विशेषताएं–

28.3.2.1– बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयुक्त–

राष्ट्रभाषा की सबसे बड़ी विशेषता उसका देश के बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयोग किया जाना है। बहुसंख्यक वर्ग से तात्पर्य विशाल जन–समुदाय से है । यह वर्ग किसी भी जाति, धर्म, समुदाय से परे सामान्य नागरिक है, जिससे देश की पहचान है । यह वह वर्ग है जो देश के विस्तृत भू–भाग में फैला हुआ है ।

28.3.2.2– व्यापकता–

राष्ट्रभाषा पूरे देश के सभी हिस्सों में बोली और समझी जाने की क्षमता रखती है । इसकी सीमा किसी एक राज्य की सीमाओं तक सीमित या किसी क्षेत्र विशेष में सीमित नहीं रहती है बल्कि यह पूरे देश में जानी समझी और बोली जाती है।

28.3.2.3– जन सामान्य द्वारा आपसी बोलचाल में प्रयुक्त–

किसी भी देश में सामान्य जन द्वारा आपसी बोल–चाल में प्रयुक्त होना भी राष्ट्र भाषा की प्रमुख विशेषता है । दैनिक दिनचर्या में कभी औपचारिक बातें नहीं की जा सकती है । इसके लिए वही भाषा प्रयोग में लायी जाती है जिसे बोलने में सामान्य जन सुविधा महसूस कर सके । राष्ट्रभाषा इस दृष्टि से उपयुक्त होती है ।

28.3.2.4– राष्ट्र की सांस्कृतिक और भाषिक विरासत की उत्तराधिकारी–

एक विशेष तथ्य यह भी है कि राष्ट्रभाषा किसी भी देश के धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन को अभिव्यक्त करती है। तीज, त्योहार, धार्मिक अनुष्ठान आदि

में प्रयुक्त होने वाली भाषा हमेशा राष्ट्रभाषा ही होती है । साथ ही उसमें अपनी सांस्कृतिक विरासत को संजोने, सुरक्षित रखने और हस्तांतरित रखने की भी क्षमता है ।

28.3.2.5– साहित्य से सम्बद्धता–

मुख्यधारा के साहित्य में प्रयुक्त होने वाली भाषा मुख्यतः राष्ट्रभाषा होती है । चूँकि साहित्य हमेशा जन से जुड़ा होता है । साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है । समाज जिस भाषा में स्वयं को सुविधाजनक महसूस करता है उसी भाषा के साहित्य से जुड़ पाता है । यही कारण है कि साहित्य और राष्ट्रभाषा का आपस में गहरा सम्बन्ध होता है ।

28.3.2.6– स्वभाव से लचीलापन–

किसी भी देश की राष्ट्रभाषा की एक प्रमुख विशेषता उसका लचीलापन है। वह समय और स्थान के अनुरूप स्वाभाविक रूप से परिवर्तित हो जाती है । जबकि राजभाषा में कोई भी परिवर्तन सामान्य रूप से नहीं होता है । उसमें परिवर्तन के लिए सरकारी आदेश की आवश्यकता होती है, जो किसी विशेष प्रक्रिया द्वारा ही संभव होता है । राष्ट्रभाषा इतनी उदार और लचीली होती है जो स्थान के अनुसार कभी भी कहीं भी परिवर्तित हो जाती है ।

28.3.2.7– व्याकरण की दृष्टि से सरल, ग्राह और वैज्ञानिक–

राष्ट्रभाषा व्याकरण की दृष्टि से बहुत जटिल नहीं होती है । उसमें सरलता, सहजता और प्रवाहशीलता का गुण होता है जिससे वह शीघ्र ही ग्राह्य हो जाती है । उसकी संरचना वैज्ञानिक होती है इस कारण प्रयोग में भी सरलता होती है ।

28.3.2.8– लिपि में वैज्ञानिकता–

राष्ट्रभाषा जिस लिपि में लिखी जाती है उसकी लिपि भी वैज्ञानिक होती है । वैज्ञानिकता से पूर्ण होने के कारण वह सीखने समझने और व्यवहार करने में सुविधाजनक होती है ।

28.3.2.9– वदेशी भाषा–

किसी भी देश की राष्ट्रभाषा हमेशा कोई स्वदेशी भाषा ही होती है । राजभाषा विदेशी भी हो सकती है, जैसे– अंग्रेजी शासन के दौरान भारतीय राज–काज की भाषा अंग्रेजी थी । स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त हिंदी को राजभाषा का स्थान मिला । लेकिन राष्ट्रभाषा विदेशी नहीं होनी चाहिए वह हमेशा जन सामान्य के मुख से निकली कोई देशी भाषा ही होती है ।

28.3.2.10–असीमित शब्द भंडार–

राष्ट्रभाषा के पास हमेशा असीमित शब्द भंडार होता है क्योंकि उसमें किसी निश्चित और औपचारिक शब्दावली प्रयोग करने की बाध्यता नहीं रहती है । राजभाषा का शब्द भंडार निश्चित, पारिभाषिक व औपचारिक शब्दों से युक्त होता है और उसमें दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाले शब्दों का सर्वथा अभाव होता है । राष्ट्रभाषा में ऐसा नहीं होता है । इसमें अनौपचारिक और दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले शब्दों की अधिकता रहती है । यही कारण है कि वह जन सामान्य के लिए सुविधाजनक भी होती है ।

28.3.3– राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी–

हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिंदी है । यदि उपरोक्त विशेषताओं की कसौटी की बात की जाए तो भी हिंदी ही वह भाषा है जो पूरी तरह से इस पर खरी उतरती है । हिन्दी को निम्नलिखित कारणों से राष्ट्रभाषा कहा जाता है–

1. हिंदी भारत के विस्तृत भू भाग पर बोली और समझी जाती है। जैसे हिंदी कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के विस्तृत भू भाग में व्याप्त है । वर्तमान समय में हिंदी दस राज्यों की राजभाषा है । उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, बिहार आदि प्रदेशों की मात्र भाषा हिंदी है ।

इसके साथ ही पंजाब, असम, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात में यह दूसरी भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है और दक्षिण भारत में भी यह एक सहायक भाषा के रूप में बोली और समझी जाती है ।

2. राष्ट्रभाषा की एक विशेषता अपनी सांस्कृतिक विरासत को संजोने, सुरक्षित रखने और हस्तांतरित रखने की क्षमता है । इस दृष्टि से हिंदी को सक्षम कहा जा सकता है । उसने न केवल हमारी धरोहर को संरक्षित रखा है बल्कि वह देवभाषा संस्कृत की उत्तराधिकारी भी है ।
3. राष्ट्रभाषा की एक विशेषता उसमें अपनी सांस्कृतिक विरासत को संजोने, सुरक्षित रखने और हस्तांतरित रखने की क्षमता भी है । इस दृष्टि से हिंदी को सक्षम कहा जा सकता है । उसने न केवल हमारी धरोहर को संरक्षित रखा है बल्कि वह देवभाषा संस्कृत की उत्तराधिकारी भी है ।
4. जैसा कि कहा गया कि साहित्य और राष्ट्रभाषा का आपस में गहरा सम्बन्ध होता है । हमारे देश मुख्य धारा का साहित्य हिंदी में ही सृजित होता है । साहित्य ही नहीं दैनिक पत्र–पत्रिकाओं से लेकर साहित्य की भाषा भी हिंदी ही है ।
5. हिंदी स्वभाव से उदार और लचीली भाषा है । राष्ट्रभाषा के लिए ऐसा माना जाता है कि उस भाषा में जीवन्तता और सजीवता होनी चाहिए जिससे वह नए शब्दों को अपने में आत्मसात कर सके हिंदी के अंतर यह सभी विशेषताएं पायी जाती है यही कारण है कि उसमें तत्सम तद्भव और देशी के साथ ही विदेशी शब्दों की बहुलता है । ग्राह्यशीलता हिंदी की एक प्रमुख विशेषता है
6. हिंदी सरल, सहज प्रवाहशील भाषा होने के साथ ही वैज्ञानिकता से युक्त है ।
7. हिंदी का शब्द भंडार असीमित होने के साथ ही समृद्ध भी है । तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों के अतिरिक्त इसनें विदेशी शब्दों को भी अपने में समाहित कर लिया है ।
8. हिंदी से लोगों का आत्मीय लगाव भी शीघ्र हो जाता है । यही कारण है कि चाहे वह अपनी प्रांतीय भाषा न सीख समझ सके लेकिन हिंदी से उसका अच्छा परिचय रहता है ।

9. राष्ट्रभाषा का एक प्रमुख गुण उसकी लिपि का वैज्ञानिक होना बताया गया ळें इस दृष्टि से भी हिंदी राष्ट्रभाषा कही जा सकती है क्योंकि यह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और देवनागरी विश्व भर में अपनी वैज्ञानिकता के जानी जाती हैं ।

28.4 राजभाषा

हमारे देश के राज–काज और प्रशासनिक कार्यों में प्रयुक्त होने के कारण हिन्दी देश की राजभाषा कहलाती है।

28.4.1 राजभाषा से तात्पर्य–

डॉ0 हरदेव बाहरी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी भाषा' में लिखा है कि– राजभाषा का अर्थ है राजा या राज्य की भाषा । वह भाषा जिसमें शासक या शासन का काम होता है। ..राजभाषा की अभिव्यक्ति सीमित विषयों तक होती है– विधि, सरकारी परिवहन, प्रशासन आदि । राजभाषा वह है जिसके माध्यम से राजकार्य होता है । कचहरियों का काम, सरकारी आदेश, सूचनाएं और विज्ञापन, एक प्रदेश का दूसरे प्रदेश से शासकीय स्तर पर पत्र व्यवहार आदि–आदि।'

स्वतंत्रता से पूर्व 'राजभाषा' शब्द का प्रयोग प्रायः दिखाई नहीं देता है। स्वतंत्रता के उपरान्त यह आवश्यक हो गया कि सरकारी काम–काज के लिए एक निश्चित भाषा हो । हर देश की अपनी एक सरकारी भाषा होती है जिसमें उनका सारा सरकारी कार्य–व्यवहार होता है । राजभाषा वह होती है जिसके माध्यम से राजकार्य होते हैं । जैसे कचहरियों का काम, सरकारी आदेश, सूचनाएं और विज्ञापन आदि । इसके अतिरिक्त एक प्रदेश का दूसरे प्रदेश के साथ शासकीय स्तर पर पत्र–व्यवहार भी राज भाषा में ही होता है । इसकी बनी बनायी निश्चित शब्दावली है ।

28.4.1–हिंदी की संवैधानिक स्थिति–

भारतीय संविधान नें 14 सितम्बर 1949 को हिंदी को मान्यता प्रदान की । संविधान के भाग भाग–5, भाग–6 और भाग–17 में राजभाषा से सम्बन्धित

प्रावधान किये गये है। भारतीय संविधान में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान इस प्रकार हैं–

1. संविधान के अनुच्छेद 120(1) के अनुसार– 'संसद का कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। यदि कोई व्यक्ति हिंदी में या अंग्रेजी में विचार प्रकट करने में असमर्थ है तो लोकसभा का अध्यक्ष या राज्यसभा का सभापति उसे अपनी मात्रभाषा में बोलने की अनुमति दे सकता हैं।
2. अनुच्छेद 120 (2) में कहा गया कि 'जब तक संसद विधि द्वारा कोई उपबंध न करे, तब तक संविधान के आरम्भ से पंद्रह वर्ष की अवधि समाप्त होने के पश्चात ''या अंग्रेजी में'' वाला अंश नहीं रहेगा । (इसका तात्पर्य यह था कि 26 जनवरी 1965 से संसद का कार्य केवल हिंदी में होगा ।)
3. अनुच्छेद 210 में कहा गया कि 'राज्य के विधान–मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। विधानसभा का अध्यक्ष या विधान परिषद का सभापति ऐसे किसी सदस्य को अपनी मात्र भाषा बोलने की अनुमति दे सकता है जो उपर्युक्त भाषाओं का प्रयोग करने में असमर्थ हो।
4. अनुच्छेद 343 में कहा गया है कि 'संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी और संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा। शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग 15 वर्ष की अवधि तक किया जाता रहेगा । साथ ही यह भी कहा गया कि– 'संसद उक्त 15 वर्ष की अवधि के बाद विधि द्वारा अंग्रेजी भाषा का या देवनागरी अंकों का प्रयोग किन्हीं प्रयोजनों के लिए उपबंध कर सकेगी।'
5. अनुच्छेद 344 के अनुसार संविधान के आरम्भ के पाँच वर्ष बाद राष्ट्रपति एक आयोग गठित करेगा जो हिन्दी के प्रयोग के लिए विविध स्तरों पर विस्तार पर सुझाव देगा।
6. अनुच्छेद 345 'किसी राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली या किन्हीं अन्य भाषाओं कों या हिंदी को शासकीय प्रयोजनों के

लिए स्वीकार कर सकेगा । यदि किसी राज्य का विधानमंडल ऐसा नही कर पायेगा तो अंग्रेजी भाषा का प्रयोग यथावत किया जाता रहेगा ।

7. अनुच्छेद 346 के अनुसार 'संघ द्वारा निर्धारित भाषा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ की सरकार के बीच पत्र आदि की राजभाषा होगी। यदि दो या अधिक राज्य परस्पर हिन्दी भाषा को स्वीकार करना चाहें तो उसका प्रयोग किया जा सकेगा ।'
8. अनुच्छेद 347 में कहा गया कि अगर 'किसी राज्य की जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग यह चाहता हो कि उसके द्वारा प्रयुक्त की जा रही भाषा को उस राज्य की दूसरी भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की जाए तो राष्ट्रपति यह निर्देश दे सकेगा कि उस भाषा को भी राज्य में विशेष प्रयोजनों के लिए, शासकीय मान्यता दी जाए ।
9. अनुच्छेद 348 के अनुसार 'जब तक संसद विधि द्वारा उपबंध न करे तब तक उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सब तरह की कार्यवाही अंग्रेजी भाषा में होगी द्य इस अनुच्छेद में यह भी कहा गया कि– 'किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से उच्च–न्यायालय की कार्यवाही के लिए हिंदी भाषा या उस राज्य में मान्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा, पर यह बात उस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, डिक्री या आदेश पर लागू नहीं होगी ।
10. अनुच्छेद 349 के अनुसार 'संसद यदि राजभाषा से सम्बन्धित कोई विधेयक या संशोधन पुनः प्रस्तावित करना चाहे तो राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी लेनी पड़ेगी और राष्ट्रपति आयोग की सिफारिशों पर और उन सिफारिशों पर गठित रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात ही अपनी मंजूरी देगा अन्यथा नहीं।
11. अनुच्छेद 350 द्वारा उन वर्गों पर विशेष ध्यान दिया गया है जो भाषाई आधार पर अल्पसंख्यक वर्ग में आते हैं । इस अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति करेगा जो इन वर्गों से सम्बंधित विषयों पर रक्षा के उपाय करेगा और समय–समय पर अपनी रिपोर्ट राज्यपाल और राष्ट्रपति को देगा जिस पर संसद विचार करेगीद्य इसके साथ ही,

अल्पसंख्यक बच्चों की प्राथमिक शिक्षा उनकी मात्र भाषा में दिए जाने की पर्याप्त सुविधा सुनिश्चित की जायेगी ।

12. अनुच्छेद 351 के अनुसार यह निर्देश दिया गया कि– 'संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढाये और उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

28.4.2–राजभाषा हिंदी के प्रयोग की प्रगति और सम्बन्धित आयोग व समितियां

भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। तब से राष्ट्रपति का आदेश, राजभाषा आयोग, संसद की राजभाषा समीति, राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम आदि द्वारा समय–समय पर सुझाव, नियम, अधिनियम, अनुदेश आदि निर्धारित किये गए जिनके द्वारा राजभाषा हिंदी के प्रयोग से सम्बन्धित दिशा निर्देश सुनिश्चित होते रहे । इसका विस्तार से उल्लेख इस प्रकार है–

28.4.2.1 राष्ट्रपति का आदेश–

राष्ट्रपति द्वारा 1955 में यह आदेश पारित किया गया कि 'जनता के साथ पत्र–व्यवहार में, प्रशासकीय रिपोर्टों, प्रस्तावों, संसदीय विधियों, सरकारी संधिपत्रों और करारनामों, अंतर्राष्ट्रीय व्यवहारों और अन्तर्राज्यों के कार्यों में अंग्रेजी के साथ हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाये । इसके साथ ही इसमें यह भी कहा गया कि जनता से जो पत्रादि हिंदी में मिलें, उनके उत्तर, जहां तक संभव हो, हिंदी में ही दिए जाएँ । किन्तु यह बात सरकारी रिपोर्टों, विधियों आदि में स्पष्ट रूप से लिख दी जाए कि अंग्रेजी पाठ ही प्रमाणिक माना जाएगा।

28.4.2.2 राजभाषा आयोग–

राष्ट्रपति नें 1955 में एक राजभाषा आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग नें राजभाषा के प्रयोग से सम्बंधित जो सुझाव दिए उसमें से प्रमुख सुझाव इस प्रकार हैं–

1. पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में तीव्र गति से काम होना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली को आवश्यकता के अनुसार थोड़े हेर–फेर के साथ स्वीकार कर लेना चाहिए।
2. हिंदी क्षेत्र के विद्यार्थियों को एक और भाषा विशेष रूप से दक्षिण भारत की भाषा आवश्यक रूप से सीखनी चाहिए।
3. भारत के चौदह वर्ष की उम्र तक के प्रत्येक विद्यार्थी को हिंदी का ज्ञान करा देना चाहिए ।
4. प्रशासनिक कर्मचारियों को निश्चित अवधि के अन्दर हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त हो जाना चाहिए। ऐसे न करने वालों को दंडित न किया किया जाए । उत्साही कर्मचारियों को पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया जाए ।
5. संसद और विधान–मंडलों में हिंदी और प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग होना चाहिए ।
6. यदि एक ही लिपि के प्रयोग की स्थिति हो तो देवनागरी लिपि का प्रयोग किया जाए।
7. भारत सरकार के प्रकाशन अधिक से अधिक से अधिक हिंदी में प्रकाशित किये जाएँ।
8. उच्च न्यायालयों में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में क्षेत्रीय भाषाओं का व्यवहार होना चाहिए।
9. देश में होने वाली प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी को अनिवार्य प्रश्न पत्र के रूप में स्थान दिया जाए।
10. भारत की अन्य भाषाओं में निकटता लाने के प्रयास होने चाहिए।
11. हिंदी के विकास का दायित्व सरकार की एक प्रशासनिक इकाई पर डालना चाहिए ।

28.4.2.3 राजभाषा समिति 1959–

ऊपर दिए गए सुझावों का परिक्षण करने के लिए संसद की 'राजभाषा समिति' ने 1959 नें कुछ सुझाव दिए जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं–

1. जब तक कर्मचारी और अधिकारी हिंदी का ज्ञान न प्राप्त कर लें वे अंग्रेजी में कार्य करते रहे ।
2. पैतालीस वर्ष के ऊपर की उम्र वाले सरकारी कर्मचारियों को हिंदी के प्रशिक्षण से छूट दे देनी चाहिए।
3. जब तक हिंदी इस योग्य नहीं हो जाती, तब तक संसद और राज्यों के विधानमंडलों में विधि–निर्माण का कार्य चलता रहे । कानूनों का अंग्रेजी रूप प्राधिकृत माना जाए।
4. उच्च न्यायालयों के निर्णयों, अभिलेखों और आदेशों को अंग्रेजी में ही होना चाहिए । एक विधायी आयोग का निर्माण किया जाना चाहिए।
5. केन्द्रीय सेवाओं की परीक्षाओं के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को चलने दिया जाये ।
6. 1965 के बाद हिंदी प्रधान भाषा हो और अंग्रेजी को सहायक भाषा माना जाय ।

28.4.2.4 राष्ट्रपति का आदेश 1960–

राजभाषा आयोग और संसदीय समिति की सिफारिशों पर चिन्तन, मनन और विचार के उपरान्त राष्ट्रपति नें आदेश जारी किया –

1. अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती के लिए परीक्षा का माध्यम अंग्रेजी बना रहे । फिर कुछ समय बाद हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम बनाने की व्यवस्था की जाए।
2. हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली के विकास के लिए एक स्थायी आयोग का निर्माण किया जाए।
3. पैतालीस वर्ष से कम उम्र वाले कर्मचारियों के लिए हिंदी का प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया जायें
4. शिक्षा मंत्रालय द्वारा हिंदी के प्रचार की व्यवस्था की जाए ।

5. एक मानव विधि कोश बनाया जाय और कानून से सम्बन्धित साहित्य का हिंदी में अनुवाद किया जाय इसके लिए एक विधायी आयोग की स्थापना की जाए।
6. आशुलिपिकों को हिंदी में कार्य करने का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाए।
7. गृह मंत्रालय द्वारा राजकाज में हिंदी के प्रगामी प्रयोग के लिए योजना बनाई जाए।

28.4.2.5 राजभाषा अधिनियम–1963 (1967 में संशोधित)–

संविधान में ऐसा प्रावधान किया गया था की 1965 से हिंदी एकमात्र राजभाषा बन जायेगी और सारे सरकारी कामकाज हिंदी में ही किये जायेंगे । किन्तु सरकारी नीतियों के कारण ऐसा सम्भव नहीं हो सका । इसी के साथ ही अहिन्दी क्षेत्रों जैसे तमिलनाडु पश्चिम बंगाल आदि में हिंदी का घोर विरोध शुरू हो गया और हिंदी विरोधी आन्दोलन शुरू हो गए । ऐसी स्थिति में पंडित जवाहर लाल नेहरु ने अहिंदी प्रदेशों को आश्वासन दिया कि हिंदी को एकमात्र राजभाषा के रूप में स्वीकार करने से पहले इन क्षेत्रों की सहमति प्राप्त की जायेगी । इसी आश्वासन को क़ानून का रूप प्रदान करते हुए यह अधिनयम बनाया गया । इस अधिनियम की नौ धाराएं थी जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं–

1. 26 जनवरी 1965 के बाद भी हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग यथावत चलता रहेगा । अर्थात जो व्यवस्था पहले चल रही थी वाही लागू रहेगी ।
2. कर्मचारियों द्वारा हिंदी सीखे जाने तक हिंदी के साथ अंग्रेजी और अंग्रेजी के साथ हिंदी का अनुवाद पत्रादि में दिया जाए।
3. संघ के संकल्पों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक प्रतिवेदनों, प्रेस विज्ञप्तियों, संविदाओं, विज्ञापनों आदि दस्तावेजों को हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी करना अनिवार्य होगा ।

4. राज्यों के विधान–मंडलों द्वारा पारित अधिनियमों के हिंदी पाठ या अनुवाद उनके प्राधिकृत पाठ माने जायेंगे।
5. उच्च न्यायालयों के निर्णयों में हिंदी या किस राज्यस्तरीय राजभाषा का प्रयोग किया जा सकेगा ।
6. जब तक अहिन्दी भाषी राज्य अंग्रेजी को समाप्त करने का संकल्प नहीं ले लेंगे तब तक अंग्रेजी का प्रयोग चलता रहेगा।

28.4.2.6 संकल्प 1968–

1967 में किये गए संशोधन के उपरान्त अहिन्दी भाषी प्रदेशों की समस्या तो कुछ कम हुयी लेकिन इससे उन लोगों की चिंता अधिक बढ़ गयी जो अपने देश की एकता और अखंडता के लिए हिंदी को एकमात्र राजभाषा के रूप में स्वीकार करते थे । ऐसी विपरीत परिस्थितियों में संसद के दोनों सदनों में पारित संकल्प को ज्ञापन के रूप में प्रकाशित किया गया । इस संकल्प के प्रमुख मुद्दे इस प्रकार हैं–

1. हिंदी के विकास के लिए सरकार द्वारा एक गहन और व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा । प्रतिवर्ष इसकी प्रगति की रिपोर्ट उसे संसद में प्रस्तुत करनी होगी ।
2. भारत सरकार एकता की भावना बढ़ाने के लिए राज्यों के सहयोग से त्रिभाषा सूत्र लागू करेगी । इसके अंतर्गत हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी, अंग्रेजी और एक आधुनिक भारतीय भाषा (दक्षिणी भाषा) और अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषा, अंग्रेजी और हिंदी का अध्ययन अनिवार्य होगा ।
3. हिंदी के साथ–साथ सरकार आठवीं अनुसूची में उल्लेखित राज्यों की 15 भाषाओं के समन्वित विकास हेतु एक कार्यक्रम तैयार करेगी।
4. केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती के लिए हिंदी अथवा दोनों भाषाओं का ज्ञान आवश्यक होगा । साथ ही परीक्षाओं में भी हिंदी और प्रादेशिक भाषाओं के माध्यमों को भी मान्यता दिलाई जाए ।

28.4.2.7– राजभाषा नियम 1976–

भारत सरकार द्वारा राजभाषा अधिनियम के सभी उपबंधों को क्रियान्वित करने का उत्तरदायित्व भारत सरकार के गृहमंत्रालय को सौंपा गया । इसके अधीन 'राजभाषा अनुभाग' की स्थापना हुयी । यही अनुभाग बाद में स्वतंत्र रूप से राजभाषा विभाग हो गया द्य इस विभाग ने सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए 12 नियम निर्धारित किये । इनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं–

1. यह सभी नियम केंद्र सरकार के कार्यालयों, केन्द्रीय सरकार के नियमों और कम्पनियों पर लागू होते हैं ।
2. पूरे देश में केंद्र सरकार के कार्यालयों को क, ख और ग इन तीन भागों में विभाजित किया गया–

   क वर्ग– इस वर्ग में उन राज्यों को रखा गया जिनकी पहली भाषा हिंदी है । ये राज्य है– उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, बिहार, राजस्थान और हरियाणा । इस क्षेत्र के केन्द्रीय सरकार के अथवा राज्य सरकार के किसी कार्यालय को या व्यक्ति को हिंदी में ही पत्र लिखे जाऐं । यदि किसी कारणवश पत्र अंग्रेजी में लिखा गया है तो उसके साथ हिंदी अनुवाद भी भेजा जाए ।

   ख वर्ग– इस वर्ग में आने वाले क्षेत्र हैं– पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र और केंद्र शासित चंडीगढ़ और अंडमान–निकोबार। ख वर्ग के क्षेत्र के कार्यालयों को सामान्यतः हिंदी मंज पत्र भेजे जाएँ । यदि कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जाए तो हिंदी अन्य्वार लगाना अनिवार्य होगा।

   ग वर्ग के अंतर्गत बाकी बचे राज्य आते हैं– पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, उत्तर पूर्वी क्षेत्र, द्रविड भाषी राज्य । इस क्षेत्र के कार्यालयों को अंग्रेजी में पत्र आदि भेजे जाए ।
3. कहीं से भी प्राप्त हुए हिंदी पत्रों का उत्तर हिंदी में ही दिया जाय ।
4. प्रयुक्त सभी दस्तावेज हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में निकाले जायेंगें। और इसकी जिम्मेदारी दस्तावेज पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी की होगी।

5. जिस कार्यालय में अस्सी प्रतिशत कर्मचारी हिंदी में प्रवीणता प्राप्त कर चुके हैं वहां के नोटिंग, ड्राफ्टिंग आदि कार्य हिंदी में करने के आदेश दिए जा सकते हैं।
6. यदि किसी व्यक्ति आवेदन या अपील हिंदी में दी हो या उस पर हिंदी में हस्ताक्षर हों तब उसका उत्तर भी हिंदी में देना अनिवार्य है ।
7. केंद्र सरकार के सभी फ़ार्म, रजिस्टर, नियम, संहिताएँ लिफ़ाफ़े, स्टेशनरी आदि सभी दस्तावेज हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होंगे।
8. सरकारी नियमों और आदेशों का अनुपालन कराने और भाषा–प्रयोग की जाँच–पड़ताल करते रहने का उत्तरदायित्व प्रत्येक कार्यालय के प्रधान का होगा ।

1976 में 'राजभाषा अनुभाग' की स्थापना हुयी। राजभाषा अनुभाग भारत सरकार में राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन की व्यवस्था करता है । विभाग के द्वारा हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए समय–समय पर ज्ञापन निकाले जाते हैं । प्रत्येक वर्ष हिंदी का राजभाषा के रूप में विकास करने के लिए कार्यक्रम का निर्धारण होता है। केन्द्रीय हिंदी समिति और मंत्रालयों की हिंदी समितियों की बैठकों का आयोजन और समन्वयन का कार्य भी इसी विभाग द्वारा किया जाता है।

28.5 सम्पर्क भाषा

पूरे देश में आपसी कार्यव्यवहार में प्रयुक्त होने और आपस में संवाद का माध्यम होने के कारण हिन्दी को देश की सम्पर्क भाषा मानी जाती है।

सम्पर्क भाषा से तात्पर्य–

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि– जो भाषा किसी से सम्पर्क स्थापित करने में सहायक हो उसे ही सम्पर्क भाषा कहते हैं । प्रत्येक देश की कोई एक ऐसी भाषा अवश्य होती है जिस भाषा में उस देश के नागरिक प्रत्येक स्तर आपस में सम्पर्क स्थापित करते हैं और उस भाषा से उनका दैनिक दिनचर्या का सारा काम होता ळें हमारे देश में हिंदी संपर्क भाषा मानी जाती है।

सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी–

डॉ0 हरदेव बाहरी सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी की व्याप्ति को लेकर लिखते हैं कि– 'हिंदी युगों–युगों से सम्पर्क भाषा रही है । दक्षिण से आकर मध्वाचार्य, बल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य और अन्य आचार्य सारे भारत में इसी भाषा के माध्यम से अपने धार्मिक विचारो का प्रचार करते रहे । ..बंगाल, उड़ीसा, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि प्रदेशों के लाखों यात्री इसी भाषा का व्यवहार सीख जाते थे । दक्षिण के तीर्थों– तिरुपति, मदुरई, कन्याकुमारी और रामेश्वरम तक उत्तर भारत के लोग जाते थे तो वह भी हिंदी से अपना काम चलाते थे ।' हिंदी को संपर्क भाषा मानने के कई कारण हैं जैसे–

1. हिंदी ही एक ऐसी स्वदेशी भाषा है जो देश के किसी भी क्षेत्र में सुविधा से बोली और समझी जाती है । जिस समय देश की राजभाषा फ़ारसी थी तब भी और जिस समय देश की राजभाषा अंग्रेजी थी तब भी, पूरे देश को एक सूत्र में बांधने वाली और एक दूसरे से सम्पर्क करने वाली भाषा हिंदी ही रही है द्य यह सदियों से चला रहा है।
2. भारत भूमि पर 'जिस किसी को भी जन सम्पर्क की आवश्यकता हुयी, चाहे वह क्षेत्र राजनैतिक हो, सामाजिक हो, धार्मिक हो, आर्थिक हो, व्यापार सम्बन्धी हो अथवा मनोरंजन सम्बन्धी । सभी ने हिंदी का ही प्रयोग किया है।
3. इतने विशाल भू भाग वाले देश में कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक पूरे देश में आप अपने सभी काम 'हिंदी' द्वारा कर सकते हैं ।
4. हिंदी के सम्पर्क भाषा होने का सबसे बड़ा कारण इसका सरल और व्यावहारिक होना है। इसका प्रयोग करने के लिए उच्च शिक्षित या अभिजात्यवर्ग का होना आवश्यक नहीं है। कम पढ़ा लिखा व्यक्ति भी हिंदी सरलता से वार्तालाप कर सकता हो ।
5. दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाली हिंदी में पारिभाषिक शब्दों का अभाव है इस कारण इसे बोलने में कठिनाई नहीं होती है।

6. हिंदी की शब्दावली में देशज और जमीनी शब्दों की बहुलता है इस कारण यह आसानी से दैनिक वार्तालाप और कार्य–व्यवहार में प्रयुक्त होने की क्षमता रखती है। इससे किसी भी व्यक्ति को किसी अन्य से सम्पर्क स्थापित करने में सहजता होती है ।
7. चूँकि हिंदी देश के कई देशो की राजभाषा है और हमारे देश की राष्ट्रभाषा भी है । पूरे देश में जानी समझी जाने वाली प्रमुख भाषा हिंदी ही है ।

28.6 सारांश

इस इकाई में हिंदी के विविध रूपों पर विस्तार से चर्चा की गयी । हिंदी हमारे देश में सर्वाधिक जानी–समझी–बोली और प्रयोग की जाने वाली होने वाली भाषा है । पूरे देश में वह कई अलग–अलग रूपों में प्रयुक्त होती है, जैसे राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा । आज वह हमारे देश की प्रयोजनमूलक भाषा बनी हुयी है। साहित्य, सिनेमा, पत्रकारिता, मनोरंजन के साधन, सोशल नेटवर्किंग साइट्स आदि के माध्यम से यह देश विदेश तक अपने पैर पसार चुकी है इसके साथ ही हिंदी ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी पहचान बनायी है। इस इकाई में हिंदी की व्यापकता पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। देश में हिंदी किन–किन रूपों में प्रयुक्त हो रही है इससे सम्बन्धित सभी प्रश्नों के उत्तर छात्रों को इस इकाई के माध्यम से प्राप्त हो सकेंगे । इस इकाई के सम्यक अध्ययन से छात्र हिंदी के विविध प्रयोगों और रूपों के बारे में जान सकेंगें।

28.7 शब्दावली–

अनौपचारिक– जो परिपाटी के रूप में न हो / सहज

संशोधन– शुद्ध करना / ठीक करना / रूप बदलना

अल्पसंख्यक– कम जनसंख्या वाला

दस्तावेज– विधिक लेख / तहरीर

वांछनीय– चाहने योग्य

समन्वित– समन्वय किया गया / एकीकृत / सुग्रथित

प्राधिकृत– विधि विहित / अधिकार प्राप्त / अधिकार सहित

समाहित– व्यवस्थित रूप से एकत्र किया हुआ / व्यवस्थित

28.8 सन्दर्भ ग्रन्थ–

हिंदी भाषा– हरदेव बाहरी

भाषा विज्ञान– भोलानाथ तिवारी

28.9 प्रश्नावली–

28.9.1– बहुविकल्पीय प्रश्न–

1. संविधान के किस अनुच्छेद में कहा गया है कि– 'संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी'?
    1. अनुच्छेद–343
    2. अनुच्छेद–344
    3. अनुच्छेद–345
    4. अनुच्छेद–346

सही उत्तर– 1. अनुच्छेद–343

2. निम्नलिखित में से कौन सा भाग भाषा से सम्बन्धित नही है ?
    1. भाग–5,
    2. भाग–6
    3. भाग– 12
    4. भाग–17

सही उत्तर– 3. भाग–12

3. संविधान के किन अनुच्छेदों में भाषा सम्बन्धी प्रावधान हैं?
    1. अनुच्छेद 343–351
    2. अनुच्छेद 351–360
    3. अनुच्छेद 310–341

4. अनुच्छेद 352–360

सही उत्तर– 1. अनुच्छेद 343–351

4. राजभाषा आयोग का गठन कब हुआ ?

    1. 1945
    2. 1955
    3. 1965
    4. 1975

सही उत्तर– 2. 1955

5. इनमें से कौन सी राष्ट्रभाषा की विशेषता नहीं है–

    1. बहुसंख्यक वर्ग द्वारा प्रयुक्त
    2. सरकारी काम–काज में प्रयुक्त
    3. जन सामान्य द्वारा बोलचाल में प्रयुक्त
    4. मुख्यधारा के साहित्य और पत्रकारिता में प्रयुक्त

सही उत्तर– 2. सरकारी काम–काज में प्रयुक्त

28.9.2– लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. हिंदी के विविध रूपों से आप क्या समझते हैं ?
2. राष्ट्रभाषा किसे कहते हैं ?
3. राजभाषा से क्या तात्पर्य है ?
4. संविधान के किस–किस भाग में भाषा सम्बन्धी प्रावधान किये गए हैं ? संक्षेप में बताइये।
5. राजभाषा आयोग नें राजभाषा के प्रयोग से सम्बंधित क्या सुझाव दिए ?
6. संपर्क भाषा किसे कहते हैं ?

28.9.3– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. राष्ट्रभाषा की क्या विशेषताएं होती हैं ? हिंदी अपनी किन विशेषताओं के कारण राष्ट्रभाषा कहलाती है ?
2. राजभाषा किसे कहते हैं ? राजभाषा के रूप में हिंदी की संवैधानिक स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डालिए ।
3. राजभाषा आयोग की प्रगति के लिए गठित किये गए आयोग और समितियों के सुझावों का विस्तारपूर्वक उल्लेख कीजिये ।
4. संपर्क भाषा से आप क्या समझते हैं ? सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी की विशेषताओं का उल्लेख कीजिये ?
5. हिंदी के विविध रूपों के बारे में विस्तार से बताते हुए उसकी उपयोगिता पर एक निबंध लिखिए ।